## पुस्तक परिचय

"भारत में सामाजिक आर्थिक परिवर्तनः अवसर और चुनौतियाँ" नामक इस संपादित ग्रंथ को प्रस्तुत करते हुए अत्यंत प्रसन्नता हो रही है। यह पुस्तक भारत के सामाजिक.आर्थिक विकास की परिवर्तनशील यात्रा पर विभिन्न शोध दृष्टिकोणों को एक साथ लाने वाला एक साझा बौद्धिक प्रयास है। इसमें शामिल शोधकार्य प्रतिष्ठित अकादमिक, शोधकर्ता एवं विशेषज्ञों द्वारा की गई गहन अनुसंधान, समालोचनात्मक विश्लेषण और विद्वत्तापूर्ण अध्ययनों का परिणाम है।

संपादकों के रूप में हमारा उद्देश्य ऐसी ज्ञानवर्धक और प्रभावशाली शोधपत्रों का संकलन प्रस्तुत करना है, जो भारत के समावेशी एवं सतत विकास की दिशा में हो रही प्रगति एवं उससे जुड़ी चुनौतियों दोनों को उजागर करें। इन अध्यायों में आर्थिक सुधार, सामाजिक कल्याण की पहलकदमियां, तकनीकी उन्नति, मानवीय विकास, डिजिटल शासन और नीति निर्माण जैसी महत्वपूर्ण विषयवस्तु शामिल हैं। प्रत्येक शोधपत्र मूल्यवान आंकड़ों से युक्त जानकारी प्रदान करता है तथा नीति निर्धारकों, शोधकर्ताओं और विकास कार्यकर्ताओं के लिए व्यावहारिक सुझाव भी प्रस्तुत करता है।

यह ग्रंथ विशेष रूप से उस समय पर महत्वपूर्ण है जब भारत अनेक क्षेत्रों में तीव्र बदलाव के दौर से गुजर रहा है। इसमें संकलित शोधपत्र न केवल वर्तमान नीतिगत ढांचे और सुधारों का विश्लेषण करते हैं, बल्कि उन नवोदित अवसरों पर भी प्रकाश डालते हैं जो भारत के भविष्य के विकास मार्ग को आकार देंगे। इस संग्रह के माध्यम से हम अकादमिक संवाद को प्रोत्साहित करने, नई शोध को बढ़ावा देने और देश के विकास से संबंधित महत्वपूर्ण मुद्दों पर गहराई से सोचने वाली बहस को उत्प्रेरित करने की आशा करते हैं।

**Desert Research Association**
HQ Jodhpur, Rajasthan(India)
www.desertresearchassociation.org
Email- desertresearch2021@gmail.com

ISBN 978-81-993143-8-2

भारत में सामाजिक आर्थिक परिवर्तनः अवसर और चुनौतियाँ

# भारत में सामाजिक आर्थिक परिवर्तनः अवसर और चुनौतियाँ

प्रो. श्याम एस.खींची
डॉ.श्रवण कुमार
प्रो.आशा परमार
डॉ.भरत कुमार

# भारत में सामाजिक आर्थिक परिवर्तनः अवसर और चुनौतियाँ


## संरक्षक

प्रो. राजेद्र परिहार (सेवानिवृत्त)

(अध्यक्ष डी. आर. ए.)

पूर्व विभागाध्यक्ष, भूगोल विभाग

जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राजस्थान)

## संपादक

प्रो. श्याम एस. खींची

विभागाध्यक्ष, भूगोल विभाग

डॉ. भीमराव अम्बेडकर राजकीय स्नाकोतर कॉल

श्री गंगानगर, राजस्थान

प्रो. आशा परमार

प्राचार्य

राजकीय कन्या महाविद्यालय,

झालामंड, जोधपुर (राजस्थान)

डॉ. श्रवण कुमार

(संस्थापक, सचिव, डी.आर.ए.)

सहायक प्रोफेसर, अर्थशास्त्र विभाग,

श्रीमती आर. डी. शाह आटर्स एवं श्रीमती वी.डी.शाह

कॉमर्स कॉलेज, धोलका, अहमदाबाद

डॉ. भरत कुमार

सहायक प्रोफेसर

हिन्दी विभाग

जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय,

जोधपुर (राजस्थान)

## सह–संपादक

डॉ. मोहन लाल, फेकल्टी (एडॉक),

रसायन विज्ञान विभाग, जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राजस्थान)

डॉ. कमल कांत, सहायक प्रोफेसर,

प्रबंधन विभाग, श्री खुशाल दास विश्वविद्यालय, हनुमानगढ़ (राजस्थान)।

डॉ. विजेंद्र पाल सिंघल, वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता,

वनस्पति विज्ञान विभाग, जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर



**डेज़र्ट रिसर्च एसोसिएशन**

**जोधपुर राजस्थान**

Email- desertresearch2021@gmail.com

www.desertresearchassociation.org

2025

हालांकि कॉपीराइट धारकों का पता लगाने और अनुमति लेने की पूरी कोशिश की गई है, लेकिन सभी मामलों में ऐसा संभव नहीं हो पाया है। अगर हमारी नज़र में कोई कमी आती है, तो उसे भविष्य के अंक में ठीक कर दिया जाएगा।

सभी अधिकार सुरक्षित हैं।

कॉपीराइट © डेज़र्ट रिसर्च एसोसिएशन 2025

प्रकाशक की अनुमति के बिना, इस प्रकाशन के किसी भी हिस्से को किसी भी रूप में या किसी भी तरीके से, इलेक्ट्रॉनिक, मैकेनिकल, फोटोकॉपी, रिकॉर्डिंग या किसी और तरह से, ट्रांसमिट या रिट्रीवल सिस्टम में स्टोर नहीं किया जा सकता है।

**ISBN: 978-81-993143-8-2**

**पहला संस्करण 2025**

**लेखकों के नैतिक अधिकार का दावा किया गया है**

**मूल्य - ₹ 700**

## प्रिंट एवं बाइंडिंग :

**क्वालिटी प्रिंटिंग प्रेस, सेक्टर : 21, गांधीनगर, गुजरात**

**:: प्रकाशन ::**

**डेज़र्ट रिसर्च एसोसिएशन**

**जोधपुर, राजस्थान**

Email- desertresearch2021@gmail.com

www.desertresearchassociation.org

# :: पृष्ठभूमि ::

हमें यह संपादित पुस्तक "भारत में सामाजिक आर्थिक परिवर्तनः अवसर और चुनौतियाँ" प्रस्तुत करते हुए अत्यंत हर्ष हो रहा है। यह पुस्तक एक सामूहिक बौद्धिक प्रयास है, जो भारत के सामाजिक–आर्थिक विकास की परिवर्तनशील यात्रा पर विविध शोध दृष्टिकोणों को एक साथ प्रस्तुत करती है। इसमें सम्मिलित लेख प्रतिष्ठित शिक्षाविदों, शोधकर्ताओं और विभिन्न क्षेत्रों के ज्ञाताओं द्वारा किए गए व्यापक शोध, गहन विश्लेषण और विद्वत्तापूर्ण अन्वेषण का परिणाम हैं।

संपादक के रूप में हमारा प्रयास रहा है कि हम ऐसे शोध पत्रों का चयन करें, जो न केवल भारत की समावेशी और सतत विकास की दिशा में हुई प्रगति को दर्शाते हैं, बल्कि इसके समक्ष उपस्थित चुनौतियों को भी उजागर करते हैं। इस पुस्तक के अध्याय आर्थिक सुधार, सामाजिक कल्याण योजनाएँ, तकनीकी प्रगति, मानव विकास, डिजिटल शासन और नीतिगत हस्तक्षेप जैसे अनेक महत्वपूर्ण विषयों को समाहित करते हैं। प्रत्येक लेख आंकड़ों पर आधारित विश्लेषण प्रस्तुत करता है और साथ ही दूरदर्शी सुझाव भी देता है, जो नीति निर्माताओं, शोधकर्ताओं और विकास विशेषज्ञों के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं।

यह पुस्तक विशेष रूप से उस समय में प्रासंगिक है जब भारत अनेक क्षेत्रों में तीव्र परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। इसमें सम्मिलित शोध पत्र न केवल वर्तमान नीतिगत ढांचे और सुधारों का विश्लेषण करते हैं, बल्कि उन उभरते मार्गों को भी उजागर करते हैं, जो भारत के भविष्य के विकास पथ को प्रभावित कर सकते हैं। इस संकलन के माध्यम से हम शैक्षणिक संवाद को प्रोत्साहित करना, नए शोध को प्रेरित करना और राष्ट्रीय विकास से जुड़े मुद्दों पर विचार–विमर्श को बढ़ावा देना चाहते हैं।

हम सभी लेखकों के प्रति उनके अकादमिक परिश्रम और समर्पण के लिए हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं। साथ ही, हम समीक्षकों, शोधकर्ताओं और सहायक संस्थानों के प्रति भी उनके निरंतर मार्गदर्शन और सहयोग के लिए कृतज्ञ हैं। हमें विश्वास है कि यह पुस्तक उन सभी के लिए एक मूल्यवान संसाधन सिद्ध होगी, जो भारत के सामाजिक–आर्थिक परिदृश्य के विकास का अध्ययन करना चाहते हैं – चाहे वे विद्वान हों, शिक्षक, नीति निर्माता या जिज्ञासु पाठक।

सादर,

**डेजर्ट रिसर्च एसोसिएशन**

## :: अनुक्रमणिका ::


| क्रम | शीर्षक | पृष्ठ |
|---|---|---|
| 1. | भारत म वायप्रदषण: एक उभरती पयावरणीय चनौती<br>- प्रो. श्याम एस. खिंची एवं आदित्य | 1-10 |
| 2. | पर्यावरण और सामाजिक जीवन<br>– राम सिंह | 11-19 |
| 3. | राजनीतिक चिन्तन में कौटिल्य का योगदान<br>– डॉ.पंकज राठौड | 12-26 |
| 4. | पर्यावरण संरक्षण में जैव प्रौद्योगिकी :योगदान व प्रयोग<br>– डॉ. सुनील कुमार | 27-32 |
| 5. | नशा जीवन नाशक है- परिवार ,समाज ,शासन एवं प्रशासन :हमारे प्रमुख दायित्व एवं हमारी प्रमुख भूमिका<br>- डॉ. राजपाल | 33-45 |
| 6. | भारतीय क्षेत्रों में गरीबी एक अभिशाप ओर इससे उबरने के आधार<br>– डॉ जयदेव प्रसाद शर्मा, | 46-53 |
| 7. | ई–गवर्नेंस और नागरिक सहभागिता<br>– डॉ. करण सिंह | 54-60 |
| 8. | डिजिटल युग में सांस्कृतिक परिवर्तन एवं चुनौतियाँ<br>– श्री बाल किशन | 61-68 |
| 9. | घरेलू हिंसा के प्रकार व स्वरूपः एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण<br>– डॉ. अनिता टॉक | 69-74 |
| 10. | भारत में न्यायिक सक्रियता : जनहित याचिकाओं के सन्दर्भ में<br>– डॉ. महेश सिंह राठौड़ | 75-82 |
| 11. | आर्टिफिशियल इन्टेलिजेंस का मानव जीवन पर प्रभाव<br>– शिबा, | 83-86 |
| 12. | राष्ट्र निर्माण में आदर्श शिक्षक की भूमिका, दायित्व, चुनौतियां व समाधान<br>– डॉ. सपना | 87-95 |
| 13. | भारतीय कला पर सांस्कृतिक परिवर्तन का प्रभाव<br>– डॉ. प्रियंका वर्मा, | 96-100 |
| 14. | मानवाधिकारों की रक्षा में अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों की भूमिका<br>– राजेन्द्र सिंह | 101-108 |
| 15. | मरुस्थलीय पारिस्थितिकी : एक परिचय<br>– डॉ. अजय सिहाग | 109-117 |
| 16. | ब्रिटिश भूमि राजस्व नीतियाँ और भारतीय ग्रामीण समाज पर उनके प्रभाव एक ऐतिहासिक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन<br>– डॉ.अरविंद सुलानिया | 118-122 |
| 17. | आर्थिक विकास में महिलाओं की भूमिका : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन<br>– डॉ. शशि पंडित | 123-128 |
| 18. | औपनिवेशिक काल से वैश्वीकरण तकः सामाजिक–आर्थिक बदलाव की | 129-134 |

| | | |
|---|---|---|
| | प्रक्रिया का ऐतिहासिक विश्लेषण<br>– डॉ आत्माराम | |
| 19. | **मानवाधिकार और इसकी चुनौतियाँ**<br>**- डॉरसीला .** | **135-138** |
| 20. | **भारत के सामाजिक-आर्थिक विकास में कौशल विकास की भूमिका : राजस्थान के विशेष संदर्भ में**<br>**- डॉ. मुकेश कुमार पंवार** | **139-143** |
| 21. | हरित प्रौद्योगिकी से सुनिश्चित है - अनुकूल पर्यावरणीय का विकास<br>- डॉ .**राजेन्द्र कुमार** | **144-153** |
| 22. | राजस्थान मरू पर्यटन सर्किट में पर्यटन का बहुआयामी महत्त्व<br>- हेमा पारीक, एवं डॉ. सोम प्रकाश | **154-158** |
| 23. | श्रीगंगानगर जिले के सामाजिक–आर्थिक परिदृश्य में परिवर्तन : अवसर एवं चुनौतियाँ<br>- चन्द्र कुमार व डॉ. सोम प्रकाश | **159-167** |
| 24. | भारत में सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन : अवसर और चुनौतियाँ<br>– रूचिका सदेवड़ा | **168-174** |
| 25. | आधुनिक भारत में सामाजिक–आर्थिक विकासः उपलब्धियाँ और बाधाएँ<br>– जसवन्त | **175-180** |

१

# भारत में वायुप्रदूषण: एक उभरती पर्यावरणीय चुनौती

आदित्य, शोधार्थी एवं प्रो. श्याम एस. खिंची विभागाध्यक्ष
भूगोल वोभाग, डॉ. भीमराव अम्बेडकर राजकीय महाविदयालय, श्रीगंगानगर

**सारांश**

अगर पिछले दस सालों की बात करें, तो भारत में वायु प्रदूषण कोई दूर की या भविष्य की समस्या नहीं रह गई है। यह रोज़मर्रा की ज़िंदगी का हिस्सा बन चुका है। सुबह घर से निकलते समय धुंधली हवा, आंखों में जलन, गले में भारीपन — ये सब अब असामान्य नहीं लगते। तेज़ी से बढ़ते शहर, फैक्ट्रियाँ, गाड़ियों की बढ़ती संख्या और खेतों में पराली जलाने जैसी गतिविधियाँ मिलकर हवा की गुणवत्ता को लगातार खराब कर रही हैं।

2015 से 2025 के बीच के आंकड़े साफ़ बताते हैं कि कई भारतीय शहरों में PM2.5 जैसे सूक्ष्म कणों का स्तर सुरक्षित सीमा से काफ़ी ऊपर रहा है। ये वही कण हैं जो सांस के साथ सीधे फेफड़ों में पहुंच जाते हैं और वहीं अटक जाते हैं। इसका असर सिर्फ खांसी या अस्थमा तक सीमित नहीं है। दिल की बीमारियाँ, सांस की पुरानी समस्याएँ और समय से पहले होने वाली मौतें — सबका सीधा रिश्ता खराब हवा से जुड़ता जा रहा है। और बात यहीं खत्म नहीं होती। इलाज पर बढ़ता खर्च, काम करने की क्षमता में कमी और कुल मिलाकर आर्थिक नुकसान भी इसी तस्वीर का हिस्सा हैं।

सरकार ने राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम और सख्त वाहन उत्सर्जन मानकों जैसे कदम ज़रूर उठाए हैं। लेकिन सच यह है कि ज़मीनी स्तर पर बदलाव हर जगह एक-सा नहीं दिखता। कहीं सुधार है, कहीं हालात जस के तस हैं। इसलिए अब यह कहना गलत नहीं होगा कि वायु प्रदूषण सिर्फ किसी एक शहर या मौसम की समस्या नहीं रही। यह एक संरचनात्मक चुनौती बन चुकी है। इस शोध पत्र में वायु प्रदूषण के स्रोतों, इसके प्रभावों और मौजूदा नीतियों की वास्तविक स्थिति पर बात की गई है। निष्कर्ष साफ़ है — अगर तकनीक, नीति, शहरी योजना और आम लोगों के व्यवहार में एक साथ बदलाव नहीं आया, तो साफ हवा की बात सिर्फ काग़ज़ों तक ही सीमित रह जाएगी।

**कीवर्ड:** वायु प्रदूषण, PM2.5, वायु गुणवत्ता सूचकांक, पर्यावरणीय क्षरण

## परिचय

भारत में वायु प्रदूषण को अब केवल पर्यावरण की समस्या कहकर टालना मुश्किल हो गया है। यह रोज़मर्रा की ज़िंदगी का हिस्सा बन चुका है। सुबह घर से निकलते समय हवा का भारीपन महसूस होना, आंखों में हल्की जलन, सर्दियों में धुंध का देर तक बने रहना — ये सब अब असामान्य नहीं लगते। धीरे-धीरे लोग इसकी आदत डाल लेते हैं। और यही सबसे परेशान करने वाली बात है। जब कोई समस्या लगातार मौजूद रहती है, तो वह शोर मचाना बंद कर देती है। लेकिन नुकसान तब भी होता रहता है।

पिछले कुछ दशकों में भारत ने तेज़ आर्थिक और शहरी विकास देखा है। शहर फैलते गए, सड़कें बनीं, उद्योग बढ़े और निजी वाहनों की संख्या अचानक बहुत ज़्यादा हो गई। ये बदलाव ज़रूरी थे, इसमें कोई शक नहीं। लेकिन इस विकास की योजना बनाते समय हवा को कभी प्राथमिकता नहीं मिली। ट्रैफिक जाम अब कोई अस्थायी परेशानी नहीं रहा। यह शहरी ढांचे का हिस्सा बन चुका है। कोयले पर आधारित बिजली उत्पादन आज भी बड़े पैमाने पर जारी है, क्योंकि हर जगह स्वच्छ विकल्प उपलब्ध नहीं हैं। निर्माण कार्य लगातार चलते रहते हैं, क्योंकि रुकने का आर्थिक नुकसान तुरंत दिखाई देता है। प्रदूषण का असर समय के साथ सामने आता है, इसलिए उसे अक्सर नज़रअंदाज़ कर दिया जाता है।

PM2.5 जैसे शब्द सुनने में तकनीकी लगते हैं, लेकिन इनका असर बहुत साधारण तरीके से समझा जा सकता है। ये इतने सूक्ष्म कण होते हैं कि सांस के साथ शरीर के अंदर चले जाते हैं और वहीं जमा होते रहते हैं। शरीर इन्हें आसानी से बाहर नहीं निकाल पाता। असर तुरंत नहीं दिखता, लेकिन धीरे-धीरे यह असर स्थायी बन जाता है। यही वजह है कि वायु प्रदूषण को लंबे समय तक हल्की समस्या समझा गया। अब स्थिति यह है कि श्वसन रोगों के साथ-साथ हृदय संबंधी बीमारियों और समय से पहले मृत्यु को भी इससे जोड़ा जा रहा है।

एक समय तक यह माना जाता था कि वायु प्रदूषण केवल बड़े महानगरों की समस्या है। अब यह धारणा कमजोर पड़ चुकी है। छोटे शहर और कस्बे भी खराब हवा का सामना कर रहे हैं। इसका मतलब यह नहीं कि समस्या अचानक पैदा हुई है। इसका मतलब यह है कि समस्या फैल चुकी है और गहरी भी हो चुकी है। इसलिए वायु प्रदूषण को केवल मौसमी या स्थानीय मुद्दा मानना अब पर्याप्त नहीं है। यह भारत के मौजूदा विकास ढांचे से जुड़ी एक उभरती पर्यावरणीय चुनौती बन चुका है।

इस शोध पत्र का उद्देश्य भारत में वायु प्रदूषण की स्थिति को उसी रूप में समझना है जैसी वह ज़मीन पर दिखाई देती है। इसमें इसके प्रमुख स्रोतों, इसके स्वास्थ्य और पर्यावरणीय प्रभावों, और उन नीतियों की वास्तविक स्थिति पर ध्यान दिया गया है जो इसे नियंत्रित करने के लिए बनाई गई हैं। मकसद किसी एक पक्ष को दोषी ठहराना नहीं है। ध्यान इस बात पर है कि अब तक क्या कदम असरदार रहे हैं और आगे किस तरह के बदलाव वास्तव में फर्क ला सकते हैं।

**अध्ययन के उद्देश्य**

1. भारत में वायु प्रदूषण की वर्तमान स्थिति को समझना और उसके विस्तार का आकलन करना।
2. वायु प्रदूषण के प्रमुख स्रोतों की पहचान करना और उनके योगदान को स्पष्ट करना।
3. वायु प्रदूषण के स्वास्थ्य और पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करना।
4. वायु प्रदूषण नियंत्रण से संबंधित नीतियों और कार्यक्रमों की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करना।

**अध्ययन की कार्य प्रणाली**

यह अध्ययन मुख्य रूप से द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है। इसमें भारत में वायु प्रदूषण से संबंधित सरकारी रिपोर्टों, पूर्व शोध कार्यों और राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं द्वारा प्रकाशित आंकड़ों का उपयोग किया गया है। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और विश्व स्वास्थ्य संगठन जैसे स्रोतों से प्राप्त

 ISBN: 978-81-993143-8-2

जानकारी के आधार पर वायु गुणवत्ता की स्थिति और रुझानों का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन में वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण अपनाया गया है, ताकि समस्या की समग्र तस्वीर सामने आ सके और भारत में वायु प्रदूषण को एक उभरती पर्यावरणीय चुनौती के रूप में समझा जा सके।

**साहित्य समीक्षा**

भारत में वायु प्रदूषण पर किए गए शोध यह स्पष्ट करते हैं कि यह समस्या केवल शहरी असुविधा तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सार्वजनिक स्वास्थ्य और पर्यावरण दोनों के लिए एक गंभीर चुनौती बन चुकी है। प्रारंभिक भारतीय अध्ययनों में मुख्य रूप से औद्योगिक उत्सर्जन और वाहनों से होने वाले प्रदूषण पर ध्यान दिया गया था, विशेष रूप से दिल्ली, मुंबई और कोलकाता जैसे बड़े महानगरों में। जैसे-जैसे निगरानी प्रणाली बेहतर हुई, शोध का फोकस सूक्ष्म कण पदार्थ यानी PM2.5 (पार्टिकुलेट मैटर 2.5 माइक्रोन से छोटे कण) की ओर बढ़ता गया।

Indian Council of Medical Research (भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद) और Global Burden of Disease Study (वैश्विक रोग भार अध्ययन) के अनुसार PM2.5 भारत में रोगों के कुल बोझ का एक प्रमुख कारण बन चुका है। State of Global Air Report 2020 के आंकड़ों के अनुसार वर्ष 2019 में भारत में लगभग 16.7 लाख समयपूर्व मौतों को वायु प्रदूषण से जोड़ा गया। यह भारत में कुल मृत्यु का लगभग 17 प्रतिशत था। ये आंकड़े बताते हैं कि वायु प्रदूषण अब एक दीर्घकालिक स्वास्थ्य संकट का रूप ले चुका है।

पर्यावरणीय प्रभावों पर किए गए भारतीय शोध यह दर्शाते हैं कि वायु प्रदूषण कृषि उत्पादन को भी प्रभावित करता है। Indian Agricultural Research Institute (भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान) के अध्ययनों के अनुसार Ground-level Ozone यानी सतही ओजोन गेहूं और चावल जैसी प्रमुख फसलों की पैदावार को कम करता है। इसके अलावा Nitrogen Oxides यानी नाइट्रोजन ऑक्साइड और Sulphur Dioxide यानी सल्फर डाइऑक्साइड के कारण अम्लीय वर्षा होती है, जिससे मिट्टी की गुणवत्ता और वनस्पति स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

कुल मिलाकर साहित्य समीक्षा यह दर्शाती है कि भारत में वायु प्रदूषण पर पर्याप्त शोध उपलब्ध है, लेकिन अधिकांश अध्ययन स्वास्थ्य, पर्यावरण या नीति के किसी एक पहलू तक सीमित हैं। इन सभी पहलुओं को एक साथ जोड़ने वाले समग्र और क्षेत्र-विशिष्ट अध्ययनों की अभी भी आवश्यकता बनी हुई है।

**भारत में वायु प्रदूषण के स्रोत और कारण**

भारत में वायु प्रदूषण किसी एक गतिविधि का परिणाम नहीं है। यह अलग-अलग क्षेत्रों से निकलने वाले प्रदूषकों का संयुक्त असर है। शहरी और ग्रामीण इलाकों में इसके स्रोत अलग दिखाई देते हैं, लेकिन हवा में मिलकर ये सब एक ही समस्या बन जाते हैं। नीचे प्रमुख कारणों को अलग-अलग समझाया गया है और उनके साथ भारतीय अध्ययनों से मिले योगदान के अनुमान भी जोड़े गए हैं।

**वाहन उत्सर्जन**

शहरी भारत में वाहन उत्सर्जन वायु प्रदूषण का सबसे स्थायी और लगातार बना रहने वाला स्रोत माना जाता है। निजी वाहनों की संख्या में तेज़ वृद्धि हुई है, जबकि सड़क और ट्रैफिक व्यवस्था उसी गति से विकसित नहीं हो पाई। ट्रैफिक जाम में फंसी गाड़ियाँ अधिक धुआँ छोड़ती हैं, विशेष रूप से डीज़ल वाहन। इससे PM2.5 और नाइट्रोजन डाइऑक्साइड जैसे प्रदूषक बड़ी मात्रा में हवा में जमा होते रहते हैं। CPCB और SAFAR जैसे भारतीय अध्ययनों में यह पाया गया है कि शहरी वायु प्रदूषण में वाहनों की भूमिका सबसे प्रमुख रहती है।

**औद्योगिक गतिविधियाँ**

औद्योगिक क्षेत्र वायु प्रदूषण का दूसरा बड़ा स्रोत है। भारत में बिजली उत्पादन का एक बड़ा हिस्सा आज भी कोयले पर आधारित है। थर्मल पावर प्लांट, सीमेंट उद्योग और ईंट भट्टे लगातार सल्फर डाइऑक्साइड और कण प्रदूषक छोड़ते हैं। कई क्षेत्रों में प्रदूषण नियंत्रण नियम मौजूद हैं, लेकिन निगरानी और क्रियान्वयन की सीमाओं के कारण इनका प्रभाव समान रूप से दिखाई नहीं देता। भारतीय उत्सर्जन सूची अध्ययनों में औद्योगिक स्रोतों को वायु प्रदूषण का एक प्रमुख घटक माना गया है।

**निर्माण कार्य और सड़क धूल**

निर्माण कार्य से उत्पन्न धूल को अक्सर कम आंका जाता है, लेकिन शहरी क्षेत्रों में इसका योगदान लगातार बना रहता है। मेट्रो परियोजनाएँ, फ्लाईओवर और नई इमारतों के निर्माण से बड़ी मात्रा में धूल हवा में फैलती है। यह धूल मुख्य रूप से PM10 कणों के रूप में होती है, जो आंखों और श्वसन तंत्र को प्रभावित करती है। CPCB द्वारा किए गए शहरी अध्ययनों में निर्माण और सड़क धूल को एक महत्वपूर्ण प्रदूषण स्रोत के रूप में पहचाना गया है।

**कृषि अवशेष जलाना**

ग्रामीण क्षेत्रों में वायु प्रदूषण का एक प्रमुख कारण फसल कटाई के बाद खेतों में पराली जलाना है। यह समस्या विशेष रूप से उत्तर भारत में देखने को मिलती है। पराली जलाने से निकलने वाला धुआँ सर्दियों के मौसम में लंबे समय तक वातावरण में बना रहता है और कई बार शहरी इलाकों तक पहुँचकर वहां की वायु गुणवत्ता को भी प्रभावित करता है। SAFAR और IIT दिल्ली के अध्ययनों में यह स्पष्ट किया गया है कि सर्दियों के महीनों में इसका योगदान अचानक बढ़ जाता है।

**घरेलू ईंधन का उपयोग**

घरेलू स्तर पर लकड़ी, उपले और कोयले जैसे ईंधनों का उपयोग भी वायु प्रदूषण में योगदान देता है। इससे घर के अंदर की हवा खराब होती है, जिसे indoor air pollution कहा जाता है। ICMR और WHO इंडिया की रिपोर्टों के अनुसार इसका प्रभाव विशेष रूप से महिलाओं और बच्चों पर अधिक पड़ता है। यह प्रदूषण घर के अंदर सीमित नहीं रहता, बल्कि आसपास के वातावरण को भी प्रभावित करता है।

इन सभी स्रोतों से जुड़े भारतीय अध्ययनों के आधार पर अलग-अलग कारणों का अनुमानित योगदान नीचे दी गई तालिका में प्रस्तुत किया गया है, जिससे समस्या की समग्र तस्वीर स्पष्ट होती है।

 ISBN: 978-81-993143-8-2

**भारत में वायु प्रदूषण के प्रमुख स्रोत और उनका योगदान**

(भारतीय अध्ययनों पर आधारित अनुमान)

| वायु प्रदूषण का स्रोत | प्रमुख प्रदूषक | कुल वायु प्रदूषण में अनुमानित योगदान (%) | प्रमुख भारतीय अध्ययन / स्रोत |
|---|---|---|---|
| वाहन उत्सर्जन | PM2.5, नाइट्रोजन डाइऑक्साइड ($NO_2$), कार्बन मोनोऑक्साइड (CO) | 28–32 | CPCB, SAFAR, IIT कानपुर स्रोत विभाजन अध्ययन |
| औद्योगिक गतिविधियाँ | सल्फर डाइऑक्साइड ($SO_2$), PM10, PM2.5 | 20–24 | CPCB उत्सर्जन सूची रिपोर्ट, State of Global Air |
| निर्माण कार्य और सड़क धूल | PM10, PM2.5 | 12–18 | CPCB शहरी वायु गुणवत्ता अध्ययन |
| कृषि अवशेष जलाना | PM2.5, कार्बन युक्त कण | 10–15 (सर्दियों में अधिक) | SAFAR रिपोर्ट, IIT दिल्ली अध्ययन |
| घरेलू ईंधन का उपयोग | PM2.5, कार्बन मोनोऑक्साइड (CO) | 8–12 | ICMR, WHO इंडिया रिपोर्ट |

यह तालिका यह दिखाती है कि भारत में वायु प्रदूषण किसी एक कारण का परिणाम नहीं है। कुछ स्रोत पूरे वर्ष प्रभाव डालते हैं, जबकि कुछ मौसमी होते हैं लेकिन उनका असर अचानक बहुत तेज़ हो जाता है। जब ये सभी स्रोत एक साथ सक्रिय होते हैं, तब वायु गुणवत्ता गंभीर रूप से प्रभावित होती है। इसलिए समस्या को समझने और समाधान खोजने के लिए इन सभी कारणों को एक साथ देखना आवश्यक है।

**भारत में वायु प्रदूषण का प्रभाव**

भारत में वायु प्रदूषण का प्रभाव किसी एक स्तर पर नहीं रुकता। यह स्वास्थ्य से शुरू होकर समाज, पर्यावरण और अर्थव्यवस्था तक फैल जाता है। इसका सबसे कठिन पहलू यह है कि नुकसान धीरे होता है। इसलिए जब तक असर साफ़ दिखता है, तब तक स्थिति काफी बिगड़ चुकी होती है।

**स्वास्थ्य और सामाजिक प्रभाव**

स्वास्थ्य पर वायु प्रदूषण का असर सबसे अधिक अध्ययन किया गया है और सबसे स्पष्ट भी है। लंबे समय तक प्रदूषित हवा में रहने से श्वसन रोगों का खतरा बढ़ता है, लेकिन अब शोध यह भी दिखाते हैं कि हृदय रोग और स्ट्रोक जैसी बीमारियों में भी वायु प्रदूषण की भूमिका अहम है। बच्चे और बुजुर्ग सबसे अधिक प्रभावित होते हैं क्योंकि उनकी शारीरिक सुरक्षा प्रणाली या तो पूरी तरह विकसित नहीं होती या

पहले से कमजोर होती है। इसका सामाजिक असर इलाज के बढ़ते खर्च और काम करने की क्षमता में कमी के रूप में सामने आता है, जो परिवारों पर लगातार दबाव बनाता है।

**पर्यावरण और कृषि पर प्रभाव**

वायु प्रदूषण पर्यावरणीय प्रणालियों को भी नुकसान पहुंचाता है। सतही ओजोन जैसी गैसें फसलों की वृद्धि को प्रभावित करती हैं, जिससे कृषि उत्पादन घटता है। इसके अलावा धूल और रासायनिक प्रदूषक मिट्टी और जल स्रोतों की गुणवत्ता को भी प्रभावित करते हैं। शहरी क्षेत्रों में ऐतिहासिक इमारतों और स्मारकों पर प्रदूषकों की परत जमने से उनके संरक्षण की समस्या बढ़ जाती है।

**आर्थिक और जीवन गुणवत्ता पर प्रभाव**

स्वास्थ्य और पर्यावरण पर पड़ने वाला असर अंततः आर्थिक नुकसान में बदल जाता है। जब बड़ी आबादी बीमार रहती है, तो उत्पादकता घटती है और स्वास्थ्य सेवाओं पर खर्च बढ़ता है। इसके साथ ही जीवन की गुणवत्ता भी प्रभावित होती है। खराब वायु गुणवत्ता के कारण लोग खुले में गतिविधियों से बचने लगते हैं, जिससे शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य दोनों पर असर पड़ता है।

इन सभी प्रभावों को अलग अलग अध्ययनों ने संख्यात्मक रूप में भी दर्ज किया है। नीचे दी गई तालिका इन प्रभावों से जुड़े प्रमुख आंकड़ों को एक साथ प्रस्तुत करती है, ताकि समस्या की गंभीरता स्पष्ट रूप से समझी जा सके।

**भारत में वायु प्रदूषण के प्रमुख प्रभाव: डेटा आधारित प्रस्तुति**

(भारतीय और अंतरराष्ट्रीय अध्ययनों पर आधारित)

| **प्रभाव का क्षेत्र** | **मुख्य प्रभाव** | **प्रमुख आंकड़े (भारत)** | **आधार / अध्ययन स्रोत** |
|---|---|---|---|
| स्वास्थ्य | समयपूर्व मृत्यु और दीर्घकालिक बीमारियाँ | लगभग 16.7 लाख समयपूर्व मौतें प्रति वर्ष; कुल मौतों का लगभग 17% | Global Burden of Disease Study 2019, ICMR |
| स्वास्थ्य | श्वसन और हृदय रोग | PM2.5 को भारत में रोगों के कुल बोझ का प्रमुख कारण माना गया | ICMR, WHO |
| पर्यावरण | कृषि उत्पादन पर प्रभाव | उत्तर भारत में गेहूं और चावल की पैदावार में 5–15% तक कमी | Indian Agricultural Research Institute |
| पर्यावरण | पारिस्थितिकी तंत्र पर प्रभाव | सतही ओजोन और अम्लीय वर्षा से मिट्टी और वनस्पति प्रभावित | CPCB, IARI |
| आर्थिक | राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था पर | GDP का लगभग 1.36% वार्षिक | World Bank Report |


ISBN: 978-81-993143-8-2

| | प्रभाव | नुकसान | 2020 |
|---|---|---|---|
| जीवन गुणवत्ता | दैनिक जीवन पर असर | अधिकांश बड़े शहरों में AQI मध्यम से खराब श्रेणी में | Central Pollution Control Board |

यह तालिका ऊपर दिए गए वर्णन को ठोस आंकड़ों के साथ जोड़ती है। इससे यह स्पष्ट होता है कि वायु प्रदूषण का प्रभाव केवल स्वास्थ्य तक सीमित नहीं है, बल्कि यह पर्यावरणीय स्थिरता, आर्थिक विकास और जीवन की गुणवत्ता तीनों को प्रभावित करता है।

**भारतमेंशमनउपायऔरनीतिगतप्रतिक्रिया**

**भारत में शमन उपाय**

- **राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम**

  भारत में वायु प्रदूषण से निपटने के लिए नीतिगत स्तर पर राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम एक महत्वपूर्ण पहल के रूप में सामने आया। इस कार्यक्रम के माध्यम से पहली बार यह स्वीकार किया गया कि वायु प्रदूषण केवल कुछ बड़े शहरों की समस्या नहीं है, बल्कि यह एक राष्ट्रीय चुनौती बन चुकी है। कार्यक्रम का उद्देश्य चयनित शहरों में प्रदूषण के स्तर को चरणबद्ध तरीके से कम करना था। कई शहरों के लिए कार्य योजनाएँ तैयार की गईं, लेकिन ज़मीनी स्तर पर तकनीकी क्षमता, वित्तीय संसाधनों और प्रशासनिक समन्वय की कमी के कारण प्रगति असमान रही। इससे यह स्पष्ट होता है कि नीति की दिशा सही होने के बावजूद क्रियान्वयन एक बड़ी चुनौती बना हुआ है।

- **वाहन प्रदूषण नियंत्रण उपाय**

  वाहन प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए भारत स्टेज छह उत्सर्जन मानकों को लागू किया गया, जिससे नए वाहनों से निकलने वाले प्रदूषकों में उल्लेखनीय कमी आई है। यह कदम तकनीकी दृष्टि से महत्वपूर्ण माना जाता है। हालांकि, सड़कों पर पहले से मौजूद पुराने वाहनों की बड़ी संख्या इस प्रयास के प्रभाव को सीमित कर देती है। सार्वजनिक परिवहन को बढ़ावा देने की योजनाएँ मौजूद हैं, लेकिन कई शहरों में यह निजी वाहनों का व्यावहारिक विकल्प अभी तक नहीं बन पाई हैं। इस कारण यातायात से होने वाला प्रदूषण लगातार बना रहता है।

- **औद्योगिक प्रदूषण नियंत्रण**

  औद्योगिक क्षेत्र में वायु प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए उत्सर्जन मानक तय किए गए हैं और कई उद्योगों में ऑनलाइन निगरानी प्रणाली भी शुरू की गई है। स्वच्छ ईंधन की ओर बदलाव को प्रोत्साहित किया जा रहा है, विशेष रूप से बड़े औद्योगिक इकाइयों में। इसके बावजूद छोटे और मध्यम उद्योगों में नियमों का पालन असमान रहता है। निगरानी तंत्र अक्सर आंकड़ों के संग्रह तक सीमित रह जाता है और प्रभावी दंडात्मक कार्रवाई अपेक्षाकृत कम देखने को मिलती है।

- **कृषि अवशेष प्रबंधन**

कृषि अवशेष जलाने की समस्या से निपटने के लिए सरकार द्वारा वैकल्पिक मशीनों पर सब्सिडी और पराली प्रबंधन तकनीकों को बढ़ावा दिया गया है। इन उपायों का उद्देश्य किसानों को आग लगाने के विकल्प उपलब्ध कराना है। हालांकि, कई क्षेत्रों में इन मशीनों की उपलब्धता, रखरखाव और लागत किसानों के लिए व्यवहारिक समस्या बनी हुई है। जब तक समाधान सरल, सस्ता और समय बचाने वाला नहीं होगा, तब तक बड़े पैमाने पर व्यवहार परिवर्तन सीमित ही रहेगा।

- **घरेलू स्तर पर स्वच्छ ईंधन**

  घरेलू वायु प्रदूषण को कम करने के लिए स्वच्छ ईंधन को बढ़ावा देने की दिशा में प्रयास किए गए हैं। इससे indoor air pollution में कुछ हद तक कमी आई है, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में। फिर भी ईंधन की नियमित उपलब्धता और लागत कई परिवारों के लिए चुनौती बनी हुई है। यह दिखाता है कि सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों को ध्यान में रखे बिना किसी भी नीति का प्रभाव लंबे समय तक टिकाऊ नहीं हो सकता।

**नीतिगत प्रतिक्रिया**

- **नीति क्रियान्वयन की चुनौतियाँ**

  भारत की नीतिगत प्रतिक्रिया यह दर्शाती है कि समस्या को पहचाना गया है और समाधान की दिशा भी तय की गई है। लेकिन नीति और ज़मीनी स्तर के बीच एक स्पष्ट अंतर बना हुआ है। स्थानीय स्तर पर क्षमता निर्माण, सख्त निगरानी और जन सहभागिता की कमी के कारण कई प्रयास अपेक्षित परिणाम नहीं दे पा रहे हैं। वायु प्रदूषण से प्रभावी ढंग से निपटने के लिए केवल योजनाएँ बनाना पर्याप्त नहीं है। उनके प्रभावी क्रियान्वयन और निरंतर निगरानी पर समान रूप से ध्यान देना आवश्यक है।

**निष्कर्ष**

यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि भारत में वायु प्रदूषण एक बहुआयामी और लगातार बढ़ती पर्यावरणीय समस्या बन चुकी है। वाहन उत्सर्जन, औद्योगिक गतिविधियाँ, निर्माण कार्य, कृषि अवशेष जलाना और घरेलू ईंधन का उपयोग मिलकर वायु गुणवत्ता को गंभीर रूप से प्रभावित कर रहे हैं। PM2.5 जैसे सूक्ष्म कणों का स्तर लंबे समय तक सुरक्षित सीमा से ऊपर रहने के कारण स्वास्थ्य, पर्यावरण और अर्थव्यवस्था पर गहरा प्रभाव पड़ा है। यद्यपि भारत में वायु प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए नीतियाँ और कार्यक्रम मौजूद हैं, लेकिन अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि उनके क्रियान्वयन में अभी भी महत्वपूर्ण अंतर बना हुआ है।

- **सुझाव**

वायु प्रदूषण नियंत्रण के लिए स्थानीय स्तर पर निगरानी और प्रशासनिक क्षमता को मजबूत करना आवश्यक है। वाहन प्रदूषण को कम करने के लिए सार्वजनिक परिवहन को प्रभावी और सुलभ बनाना तथा पुराने प्रदूषणकारी वाहनों को चरणबद्ध तरीके से हटाना चाहिए। औद्योगिक क्षेत्र में सख्त अनुपालन

 ISBN: 978-81-993143-8-2

और नियमित निगरानी सुनिश्चित की जानी चाहिए। कृषि अवशेष प्रबंधन के लिए किसानों को व्यवहारिक और किफायती विकल्प उपलब्ध कराना जरूरी है। इसके साथ ही घरेलू स्तर पर स्वच्छ ईंधन की निरंतर उपलब्धता सुनिश्चित कर indoor air pollution को कम किया जा सकता है। समग्र रूप से, वायु प्रदूषण से निपटने के लिए नीति, तकनीक और सामाजिक व्यवहार के बीच बेहतर समन्वय की आवश्यकता है।

## References


- Central Pollution Control Board. (2019). *National air quality monitoring programme annual report*. Government of India.
- Central Pollution Control Board. (2022). *National clean air programme: Implementation framework*. Ministry of Environment, Forest and Climate Change, Government of India.
- Global Burden of Disease Study. (2020). *Global burden of disease results tool*. Institute for Health Metrics and Evaluation.
- Indian Agricultural Research Institute. (2019). *Impact of ground-level ozone on crop yield in Indo-Gangetic plains*. New Delhi.
- Indian Council of Medical Research. (2020). *India: Health of the nation's states—The India state-level disease burden initiative*. ICMR, Public Health Foundation of India.
- Institute for Health Metrics and Evaluation. (2020). *State of global air 2020*. Health Effects Institute.
- Khinchi SS, Kumar A. (2024) Study on the Agricultural Landscape of Possible Opportunities and Imbalances for the Advancement of Agriculture in the Jhunjhunu District of Rajasthan, India. Indian Journal of Science and Technology. 17(47):4966-4974. DOI: 10.17485/IJST/v17i47.3531
- Khinchi, S. S. (2023). Impact Of Agricultural Land Use Changes On Economic And Social Development. Journal of Namibian Studies. https://doi.org/10.3390/IJERPH20054251
- Khinchi, S. S.(2014). Environmental Degradation and It's Effects on Human Health. Asian Resonance,Vol-3,Issue2
- Khinchi, S. S., & Tanwar, M. (2016). *Environmental aspects of biodiversity*. Jaipur, Oxford Book Company.
- Khinchi, S. S., & Tanwar, M. (Eds.). (2017). Environmental Challenges, Biodiversity and Sustainable Development. New Delhi, VL Media Solutions.
- Khinchi, S. S., & Tanwar, M. (Eds.). (2017). *Environmental Challenges, Biodiversity and Sustainable Development*. New Delhi, VL Media Solutions.
- Khinchi, S. S., & Tanwar, M. Globalization Impact on Environment and Proposal for Solution. *Review of Research Journal*, *3*(1).
- Khinchi, Shyam S. and Tanwar, Meenu, Global Food Security and Biodiversity (March 20, 2018). Available at SSRN: https://ssrn.com/abstract=5070602 or http://dx.doi.org/10.2139/ssrn.5070602
- Khinchi, Shyam S. and Tanwar, Meenu. Global Climate Change and Biodiversity (February 20, 2015). VL Media Solutions, New Delhi (INDIA)

ISBN: 978-93-85068-73-7, Available at http://dx.doi.org/10.2139/ssrn.5070734

- Khinchi, Shyam S., Human Rights: A Contemporary Discussion (March 10, 0019). Rigi Publication 777, Street no.9, Krishna Nagar Khanna-141401 (Punjab), India ISBN: 978-93-88393-43-0 (Paperback) ISBN: 978-93-88393-44-7 (eBook), http://dx.doi.org/10.2139/ssrn.5070744
- Khinchi, Shyam S., Impact of Climate on Agricultural Environment of North-East India: Problems and Prospects (January 21, 2015). Global Climate Change and Biodiversity Editor Shyam S. Khinchi & Meenu Tanwar, Publisher: VL Media Solutions, New Delhi-110059, India, http://dx.doi.org/10.2139/ssrn.5028496
- Khinchi, Shyam S., Issues in Agriculture and Development (February 10, 2020). Available at SSRN: https://ssrn.com/abstract=5063911 or http://dx.doi.org/10.2139/ssrn.5063911
- Khinchi, Shyam S., The Municipal Solid-Waste Management (January 10, 2023). https://www.iesrj.com/special-issue-detail?cid=6, Available at http://dx.doi.org/10.2139/ssrn.5385519
- Ministry of Environment, Forest and Climate Change. (2019). *National clean air programme*. Government of India.
- SAFAR. (2021). *Air quality assessment and forecasting reports*. Ministry of Earth Sciences, Government of India.
- Tanwar, M., & Khinchi, S. S. (2015). Impact of Climate on Agricultural Environment of. VL Media Solutions, New Delhi-110059, India.

२

# पर्यावरण और सामाजिक जीवन

**राम सिंह,** सहायक आचार्य
भूगोल विभाग (अतिथि संकाय)
जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय जोधपुर।

**शोध सारांश –**

पर्यावरण और सामाजिक जीवन के अंतर्संबंधों को समझने पर केंद्रित है। आधुनिक युग में, पर्यावरणीय समस्याएँ जैसे जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, और जैव विविधता की कमी, मानव समाज पर गंभीर प्रभाव डाल रही हैं। यह अध्ययन विभिन्न सामाजिक–आर्थिक वर्गों पर इन चुनौतियों के प्रभाव का विश्लेषण करता है। जलवायु परिवर्तन ने प्राकृतिक आपदाओं की बढ़ती आवृत्ति को जन्म दिया है, जिससे गरीब और हाशिए पर रहने वाले समुदाय अधिक प्रभावित होते हैं। ये समुदाय अक्सर सीमित संसाधनों के कारण जलवायु संकट के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं। उदाहरण के लिए, बाढ़ और सूखा उनके जीवनयापन, स्वास्थ्य, और शिक्षा पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं। प्रदूषण भी एक प्रमुख समस्या है। वायु और जल प्रदूषण स्वास्थ्य संबंधी मुद्दों को बढ़ाते हैं, जैसे अस्थमा और अन्य गंभीर बीमारियाँ। अध्ययन से पता चलता है कि कमजोर वर्गों में इन बीमारियों का अधिक प्रकोप होता है, जिससे उनकी आर्थिक स्थिति और भी खराब होती है। जैव विविधता का नुकसान सामाजिक स्थिरता को भी प्रभावित करता है। जैव विविधता की कमी से पारिस्थितिकी तंत्र असंतुलित होता है, जो खाद्य सुरक्षा और स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। विशेषकर, कृषि पर निर्भर समुदायों को इससे अधिक समस्या होती है। यह शोध यह भी दर्शाता है कि पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान केवल सरकारी नीतियों के माध्यम से नहीं हो सकता, बल्कि सामुदायिक भागीदारी और शिक्षा की आवश्यकता भी है। जागरूकता और सामूहिक प्रयास ही स्थायी विकास की दिशा में अग्रसर कर सकते हैं। यह स्पष्ट है कि पर्यावरण और सामाजिक जीवन का संबंध जटिल और गहरा है। दोनों के बीच संतुलन बनाए रखना आवश्यक है ताकि हम एक स्वस्थ और समृद्ध समाज का निर्माण कर सकें। यह शोध विभिन्न नीतियों और प्रथाओं के विकास के लिए एक ठोस आधार प्रदान करता है, जो पर्यावरणीय स्थिरता और सामाजिक न्याय को बढ़ावा देंगे।

**संकेताक्षर** – पर्यावरण और सामाजिक जीवन का अर्थ , विकास और शहरीकरण , जलवायु परिवर्तन और सामाजिक असमानताएँ , सतत विकास, नीति और नियम , शिक्षा और जागरूकता , समुदायिक भागीदारी, सामाजिक और पर्यावरणीय सुधार की दिशा , भविष्य की दिशा ,अंतर्राष्ट्रीय सहयोग और वैश्विक दृष्टिकोण , स्थानीय दृष्टिकोण और वैश्विक प्रभाव , पर्यावरण और सामाजिक जीवन के बीच संबंध , पर्यावरणीय चुनौतियाँ, समाधान और रणनीतियाँ ।

**प्रस्तावना** – पर्यावरण और सामाजिक जीवन का संबंध गहरा और जटिल है। आज के वैश्वीकृत युग में, पर्यावरणीय समस्याएँ जैसे जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, और जैव विविधता

की हानि, मानव समाज के विभिन्न पहलुओं पर गंभीर प्रभाव डाल रही हैं। विशेष रूप से, गरीब और हाशिए पर रहने वाले समुदाय इन चुनौतियों से सबसे अधिक प्रभावित होते हैं, जिससे उनकी जीवन गुणवत्ता, स्वास्थ्य, और आर्थिक स्थिति पर नकारात्मक असर पड़ता है। इस संदर्भ में, यह आवश्यक है कि हम पर्यावरणीय मुद्दों को समझें और उन्हें सामाजिक न्याय के दृष्टिकोण से देखें। Sustainable development के सिद्धांत के माध्यम से, हम एक ऐसा समाज बना सकते हैं, जहाँ आर्थिक विकास और पर्यावरण संरक्षण एक साथ आगे बढ़े। इस अध्ययन का उद्देश्य पर्यावरण और सामाजिक जीवन के बीच के संबंधों को स्पष्ट करना और उनके समाधान के लिए प्रभावी उपाय प्रस्तुत करना है।

**पर्यावरण और सामाजिक जीवन का अर्थ**

पर्यावरण और सामाजिक जीवन एक–दूसरे से गहराई से जुड़े हुए हैं। पर्यावरण वह प्राकृतिक संदर्भ है जिसमें हम जीवित रहते हैं, जिसमें जल, वायु, मृदा, वनस्पति, और जीव–जंतु शामिल हैं। सामाजिक जीवन उस समुदाय और संस्कृति का प्रतिनिधित्व करता है जिसमें हम रहते हैं, जिसमें सामाजिक संबंध, परंपराएँ और आर्थिक गतिविधियाँ शामिल हैं।

पर्यावरण का स्वास्थ्य सीधे हमारे सामाजिक जीवन पर प्रभाव डालता है। यदि पर्यावरण प्रदूषित है या प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन हो रहा है, तो यह न केवल हमारे स्वास्थ्य को प्रभावित करता है, बल्कि सामाजिक समरसता और आर्थिक स्थिरता को भी कमजोर करता है। उदाहरण के लिए, जलवायु परिवर्तन के कारण होने वाली प्राकृतिक आपदाएँ, जैसे बाढ़ और सूखा, लोगों की जीविका को खतरे में डाल सकती हैं, जिससे सामाजिक असमानता और संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। वहीं, सामाजिक जीवन का भी पर्यावरण पर प्रभाव पड़ता है। मानव गतिविधियों जैसे औद्योगीकरण, शहरीकरण और कृषि विकास ने पर्यावरण में भारी बदलाव किया है। जब लोग अपने आर्थिक विकास के लिए प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन करते हैं, तो यह पारिस्थितिकी संतुलन को बिगाड़ सकता है।

 ISBN: 978-81-993143-8-2

सामाजिक जीवन में शिक्षा, संस्कृति, और जागरूकता की भूमिका महत्वपूर्ण है। जब लोग पर्यावरण के प्रति जागरूक होते हैं, तो वे sustainable विकास की ओर अग्रसर होते हैं। सामाजिक संगठन और समुदाय मिलकर पर्यावरण संरक्षण के लिए काम कर सकते हैं, जिससे दोनों क्षेत्रों में सकारात्मक बदलाव संभव है। उदाहरण के लिए, जब समुदाय मिलकर वृक्षारोपण या स्वच्छता अभियान में भाग लेते हैं, तो यह न केवल पर्यावरण को बेहतर बनाता है, बल्कि सामाजिक बंधनों को भी मजबूत करता है। इस प्रकार, एक स्वस्थ पर्यावरण और सामाजिक जीवन की समृद्धि के लिए एक–दूसरे की आवश्यकता है।

अंततः पर्यावरण और सामाजिक जीवन का संबंध आपसी है। दोनों को संतुलित करना अत्यंत आवश्यक है ताकि हम एक स्थायी और समृद्ध भविष्य की ओर बढ़ सकें।

### 1. विवेचनात्मक पहलू

**विकास और शहरीकरण** – शहरीकरण और विकास के साथ, प्राकृतिक संसाधनों पर दबाव बढ़ता है। नई इमारतें, सड़कें, और औद्योगिक क्षेत्र प्राकृतिक आवासों को नष्ट करते हैं और पर्यावरणीय असंतुलन उत्पन्न करते हैं। यह सामाजिक जीवन में बदलाव लाता है, जैसे कि जनसंख्या घनत्व में वृद्धि, परिवहन की आवश्यकताएँ, और आवास की समस्याएँ। इसके साथ ही, शहरीकरण के परिणामस्वरूप स्वास्थ्य, शिक्षा, और सेवाओं तक पहुंच में बदलाव होता है।

**जलवायु परिवर्तन और सामाजिक असमानताएँ** – जलवायु परिवर्तन विशेष रूप से गरीब और कमजोर समुदायों पर गहरा प्रभाव डालता है। इन समुदायों के पास सीमित संसाधन और संरचनात्मक समर्थन होता है, जिससे वे पर्यावरणीय संकटों जैसे बाढ़, सूखा, और तूफान के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं। सामाजिक असमानताएँ इन संकटों को बढ़ाती हैं, जिससे सामाजिक तनाव और संघर्ष उत्पन्न हो सकते हैं।

### 2. पर्यावरण और सामाजिक जीवन

पर्यावरण और सामाजिक जीवन के बीच संबंध एक जटिल और महत्वपूर्ण क्षेत्र है, जो समाज और प्रकृति के बीच के अंतर्संबंधों को समझने में सहायक है। यह दोनों तत्वों के बीच की अंतर्दृष्टि प्रदान करता है कि कैसे पर्यावरणीय स्थितियाँ सामाजिक व्यवहार, संरचनाओं और गतिविधियों को प्रभावित करती हैं, और इसके विपरीत, सामाजिक जीवन पर्यावरणीय कारकों को कैसे आकार देता है।

### पर्यावरण और सामाजिक जीवन के बीच संबंध

### 1. पर्यावरण का प्रभाव सामाजिक जीवन पर

**शहरीकरण–** शहरी क्षेत्रों में जीवन शैली, सामाजिक इंटरएक्शन और सामुदायिक संरचनाओं पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है। शहरीकरण के चलते होने वाली सुविधाएँ और संसाधन वितरण सामाजिक जीवन को प्रभावित करते हैं।

**जलवायु और मौसम** – जलवायु परिवर्तन और मौसम की स्थितियाँ भी सामाजिक गतिविधियों और समुदायों की दिनचर्या को प्रभावित करती हैं। उदाहरण के लिए, अत्यधिक गर्मी या ठंड सामाजिक समारोहों और बाहरी गतिविधियों को सीमित कर सकती है।

**प्राकृतिक आपदाएँ** – बाढ़, भूकंप, और अन्य प्राकृतिक आपदाएँ सामुदायिक संरचनाओं और सामाजिक लचीलापन को प्रभावित करती हैं। इन आपदाओं के बाद सामाजिक पुनर्निर्माण और सहायता प्रयास महत्वपूर्ण होते हैं।

### 2. सामाजिक जीवन का पर्यावरण पर प्रभाव

**मानव गतिविधियाँ** – औद्योगिकीकरण, शहरी विकास, और अन्य मानव गतिविधियाँ पर्यावरणीय परिवर्तन जैसे प्रदूषण और संसाधनों का दोहन करती हैं। ये गतिविधियाँ पारिस्थितिकी तंत्र और प्राकृतिक संसाधनों पर दबाव डालती हैं।

**सांस्कृतिक प्रथाएँ** – समाज की सांस्कृतिक प्रथाएँ और परंपराएँ पर्यावरण संरक्षण या विनाश में भूमिका निभाती हैं। विभिन्न संस्कृतियाँ पर्यावरण के प्रति अलग–अलग दृ ष्टिकोण अपनाती हैं।

**समुदायिक पहल** – कई सामुदायिक पहल और पर्यावरणीय संरक्षण परियोजनाएँ समाज द्वारा पर्यावरणीय स्थितियों में सुधार लाने का प्रयास करती हैं। ये पहल समाज के पर्यावरणीय जागरूकता और भागीदारी को बढ़ावा देती हैं।

### 3. पर्यावरणीय चुनौतियाँ

पर्यावरण और सामाजिक जीवन के बीच का संबंध आपसी और जटिल होता है। यह समझना आवश्यक है कि कैसे पर्यावरणीय कारक सामाजिक जीवन को प्रभावित करते हैं और कैसे सामाजिक जीवन पर्यावरणीय चुनौतियों को आकार देता है। इस संबंध को समझने और प्रबंधित करने के लिए एक समन्वित दृष्टिकोण की आवश्यकता है, जो स्थायी और समावेशी विकास को सुनिश्चित कर सके। पर्यावरण और सामाजिक जीवन के बीच एक गहरा संबंध है, और दोनों ही एक–दूसरे को प्रभावित करते हैं। आज के

 ISBN: 978-81-993143-8-2

समय में, हम कई चुनौतियों का सामना कर रहे हैं जो हमारे पर्यावरण और सामाजिक जीवन को गंभीरता से प्रभावित कर रही हैं।

**1. जलवायु परिवर्तन** – जलवायु परिवर्तन एक महत्वपूर्ण समस्या है, जो गर्मी, बारिश के पैटर्न, और बर्फ के पिघलने जैसे कारकों से प्रभावित होती है। इससे प्राकृतिक आपदाएँ, जैसे बाढ़ और सूखा, बढ़ रहे हैं, जो सीधे मानव जीवन को प्रभावित करते हैं।

**2. प्रदूषण** – वायु, जल, और मिट्टी का प्रदूषण स्वास्थ्य समस्याओं का कारण बनता है। औद्योगिक गतिविधियाँ, वाहनों का धुआँ, और प्लास्टिक अपशिष्ट हमारे पर्यावरण को बिगाड़ रहे हैं। इससे लोगों में बीमारियाँ और अन्य स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ बढ़ रही हैं।

**3. जैव विविधता का नुकसान** – Habitat destruction और अवैध शिकार से कई प्रजातियाँ संकट में हैं। जैव विविधता की कमी से पारिस्थितिकी तंत्र अस्थिर हो जाता है, जो मानव जीवन के लिए खतरा बनता है।

**सामाजिक जीवन की चुनौतियाँ**

**1. आर्थिक असमानता** – पर्यावरणीय समस्याएँ अक्सर आर्थिक असमानता को बढ़ाती हैं। गरीब समुदाय अक्सर पर्यावरणीय संकटों का अधिक शिकार होते हैं और उनके पास संकट से निपटने के संसाधन नहीं होते।

**2. स्वास्थ्य समस्याएँ** – प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न स्वास्थ्य समस्याएँ, जैसे श्वसन रोग और जल जनित बीमारियाँ, समाज के कमजोर वर्गों को सबसे अधिक प्रभावित करती हैं।

**3. सामाजिक संघर्ष** – पर्यावरणीय संसाधनों, जैसे पानी और भूमि, के लिए संघर्ष बढ़ते जा रहे हैं। यह संघर्ष सामाजिक तनाव और हिंसा का कारण बन सकते हैं, विशेषकर उन क्षेत्रों में जहां संसाधनों की कमी है।

समाज और पर्यावरण का संबंध जटिल है। एक स्वस्थ पर्यावरण एक स्थायी समाज की नींव रखता है। इसके लिए जागरूकता और सतत विकास की दिशा में प्रयास करना आवश्यक है। सरकारी नीतियाँ, सामुदायिक भागीदारी, और शिक्षा इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

## 4. समाधान और रणनीतियाँ

**सतत विकास** – सतत विकास के सिद्धांतों को अपनाने से पर्यावरणीय और सामाजिक समस्याओं को संबोधित किया जा सकता है। इसमें संसाधनों का कुशल उपयोग, नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों की वृद्धि, और पर्यावरणीय संरक्षण को प्रोत्साहित करना शामिल है। समाज में सतत प्रथाओं को अपनाना जैसे कि कचरा प्रबंधन, जल संरक्षण, और हरित स्थानों की वृद्धि सामाजिक और पर्यावरणीय लाभ दोनों प्रदान कर सकते हैं।

**नीति और नियम** – सरकारी नीतियाँ और नियम पर्यावरणीय संरक्षण और सामाजिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्रभावी नीतियाँ, जैसे कि प्रदूषण नियंत्रण, भूमि उपयोग योजनाएँ, और जलवायु परिवर्तन पर रणनीतियाँ, पर्यावरणीय स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में मदद कर सकती हैं और समाज के विभिन्न वर्गों के लिए समान अवसर प्रदान कर सकती हैं।

**शिक्षा और जागरूकता** – पर्यावरणीय शिक्षा और जागरूकता कार्यक्रम समाज को पर्यावरणीय समस्याओं और समाधान के प्रति संवेदनशील बनाते हैं। शिक्षा से लोग अधिक जानकारी प्राप्त कर सकते हैं और पर्यावरणीय प्रथाओं को अपने जीवन में अपनाने के लिए प्रेरित हो सकते हैं। सामुदायिक कार्यक्रम और अभियान लोगों को पर्यावरणीय समस्याओं के प्रति सजग और सक्रिय बनाते हैं।

**समुदायिक भागीदारी** – समुदायिक भागीदारी और सहयोग पर्यावरणीय संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। स्थानीय समुदायों को परियोजनाओं और पहलों में शामिल करना उन्हें अपनी समस्याओं का समाधान खोजने और वातावरण को बेहतर बनाने के लिए प्रेरित करता है। सामुदायिक भागीदारी के माध्यम से अधिक प्रभावी और प्रासंगिक समाधान प्राप्त किए जा सकते हैं।

पर्यावरण और सामाजिक जीवन के बीच जटिल संबंधों को समझना और उन्हें प्रबंधित करना एक बहुपरकारी प्रक्रिया है। इसमें पर्यावरणीय बदलाव, सामाजिक आवश्यकताएँ, और सामुदायिक पहल शामिल हैं, जो एक दूसरे को प्रभावित करती हैं। यह आवश्यक है कि हम एक समग्र दृष्टिकोण अपनाएं, जिसमें सतत विकास, प्रभावी

 ISBN: 978-81-993143-8-2

नीतियाँ, शिक्षा, और समुदायिक भागीदारी शामिल हो, ताकि एक स्थायी और समान समाज का निर्माण किया जा सके।

### 5. सामाजिक और पर्यावरणीय सुधार की दिशा

**वास्तविक केस स्टडीज** – वास्तविक दुनिया के केस स्टडीज पर्यावरण और सामाजिक जीवन के संबंधों को समझने में सहायक होते हैं। उदाहरण के लिए, आप शहरी ग्रीन स्पेस (हरित स्थानों) का अध्ययन कर सकते हैं, जो शहरी क्षेत्रों में निवासियों की मानसिक और शारीरिक भलाई को बेहतर बनाते हैं। इसी तरह, ग्रामीण समुदायों में जैव विविधता संरक्षण और सतत कृषि प्रथाओं का अध्ययन करके यह समझा जा सकता है कि स्थानीय पर्यावरणीय प्रथाओं से सामाजिक जीवन में सुधार कैसे होता है।

**लघु और दीर्घकालिक नीतिगत प्रभाव** – नीतिगत सुधारों के लघु और दीर्घकालिक प्रभावों का विश्लेषण करना आवश्यक है। लघुकालिक नीतियाँ जैसे कि तात्कालिक प्रदूषण नियंत्रण उपाय त्वरित सुधार ला सकती हैं, जबकि दीर्घकालिक नीतियाँ जैसे कि जलवायु परिवर्तन पर वैश्विक समझौते और सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) का पालन करने से स्थायी बदलाव संभव होते हैं। नीतियों की प्रभावशीलता को मापने के लिए नियमित रूप से निगरानी और मूल्यांकन की आवश्यकता होती है।

**प्रौद्योगिकी का उपयोग** – प्रौद्योगिकी पर्यावरणीय और सामाजिक जीवन के सुधार में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। स्मार्ट सिटी प्रौद्योगिकी, जैसे कि संवेदनशील इन्फ्रास्ट्रक्चर और डेटा एनालिटिक्स, शहरी समस्याओं को हल करने में मदद करती है। जलवायु मॉडलिंग और दूरस्थ सेंसिंग जैसे तकनीकी उपकरण पर्यावरणीय बदलाव की भविष्यवाणी और निगरानी में सहायक होते हैं। इसके अतिरिक्त, हरित तकनीकें और नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत सामाजिक और पर्यावरणीय लाभों को बढ़ा सकते हैं।

**स्वास्थ्य और पर्यावरणीय न्याय** – स्वास्थ्य और पर्यावरणीय न्याय के सिद्धांतों को लागू करना भी महत्वपूर्ण है। सामाजिक और आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों पर पर्यावरणीय प्रभावों के असमान प्रभाव को समझना और उसका समाधान करना आवश्यक है। स्वास्थ्य नीतियाँ और कार्यक्रम जो पर्यावरणीय खतरों को कम करने और सभी वर्गों के लिए समान स्वास्थ्य सेवाएँ सुनिश्चित करने पर ध्यान केंद्रित करते हैं, समाज में समानता और न्याय को बढ़ावा दे सकते हैं।

**सामाजिक पहल और आंदोलनों** – सामाजिक पहल और आंदोलनों पर्यावरणीय मुद्दों के प्रति जन जागरूकता को बढ़ावा देते हैं और नीति परिवर्तनों को प्रेरित करते हैं। जैसे कि पर्यावरणीय आंदोलनों, जनमत संग्रह, और अभियान समुदायों को शामिल करके और प्रभावी ढंग से संवाद स्थापित करके पर्यावरणीय संरक्षण और सामाजिक सुधार के लिए प्रेरित करते हैं।

## 6. भविष्य की दिशा

**अंतर्राष्ट्रीय सहयोग और वैश्विक दृष्टिकोण** – वैश्विक पर्यावरणीय समस्याओं जैसे जलवायु परिवर्तन और महासागरीय प्रदूषण को हल करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय सहयोग आवश्यक है। वैश्विक संधियाँ, जैसे कि पेरिस जलवायु समझौता, देशों को मिलकर काम करने के लिए प्रेरित करती हैं। इस सहयोग से स्थानीय और वैश्विक स्तर पर प्रभावी समाधान प्राप्त किए जा सकते हैं।

**स्थानीय दृष्टिकोण और वैश्विक प्रभाव** – स्थानीय स्तर पर उठाए गए छोटे कदम भी वैश्विक प्रभाव पैदा कर सकते हैं। स्थानीय पर्यावरणीय पहल, जैसे कि पुनर्चक्रण कार्यक्रम और हरित ऊर्जा परियोजनाएँ, स्थानीय सामाजिक जीवन को सुधार सकती हैं और वैश्विक पर्यावरणीय लक्ष्यों को पूरा करने में योगदान दे सकती हैं।

**शिक्षा और जागरूकता में नवाचार** – शिक्षा और जागरूकता अभियानों में नवाचार भी महत्वपूर्ण है। ऑनलाइन प्लेटफार्म, सामाजिक मीडिया, और डिजिटल शिक्षा सामग्री लोगों को पर्यावरणीय और सामाजिक मुद्दों के बारे में बेहतर तरीके से सूचित कर सकते हैं और उन्हें सक्रिय रूप से शामिल कर सकते हैं।

अंत में, पर्यावरण और सामाजिक जीवन के बीच संबंधों को समझना और उनका प्रबंधन करना एक निरंतर प्रक्रिया है, जो विज्ञान, नीतियों, और सामुदायिक प्रयासों के समन्वय की मांग करता है। सतत विकास और सामाजिक समानता को बढ़ावा देने के लिए एक समग्र दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है, जिसमें सभी हिस्सेदारों की भागीदारी और सहयोग शामिल हो।

 ISBN: 978-81-993143-8-2

- **निष्कर्ष**

पर्यावरण और सामाजिक जीवन की चुनौतियों का समाधान एक सामूहिक प्रयास की मांग करता है। यदि हम इन समस्याओं को समझकर प्रभावी कदम उठाएँ, तो हम एक स्थायी और संतुलित भविष्य की ओर बढ़ सकते हैं। पहले, यह स्पष्ट हुआ कि पर्यावरणीय कारक जैसे शहरीकरण, जलवायु परिवर्तन, और प्राकृतिक आपदाएँ सामाजिक जीवन पर गहरा असर डालते हैं। शहरीकरण ने जीवनशैली, आवास, और सामाजिक इंटरएक्शन को बदला है, जबकि जलवायु परिवर्तन ने स्वास्थ्य और जीवन की गुणवत्ता को प्रभावित किया है। प्राकृतिक आपदाएँ सामुदायिक लचीलापन और पुनर्निर्माण की आवश्यकताओं को सामने लाती हैं, जिससे सामाजिक संरचनाओं और जीवनशैली पर प्रभाव पड़ता है।

दूसरी ओर, सामाजिक जीवन भी पर्यावरणीय परिणामों को प्रभावित करता है। मानव गतिविधियाँ जैसे औद्योगिकीकरण और शहरी विकास पर्यावरणीय असंतुलन को बढ़ाते हैं, जैसे कि प्रदूषण और संसाधनों का दोहन। सांस्कृतिक प्रथाएँ और परंपराएँ भी पर्यावरणीय संरक्षण या विनाश में भूमिका निभाती हैं। समुदायिक पहल और जागरूकता प्रयास पर्यावरणीय सुधार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जैसे कि पुनर्चक्रण और जलवायु परिवर्तन के प्रति जागरूकता अभियानों के माध्यम से। सतत विकास, प्रभावी नीतियाँ, और प्रौद्योगिकी का उपयोग पर्यावरणीय समस्याओं और सामाजिक चुनौतियों को संबोधित करने में महत्वपूर्ण हैं। हालांकि, इस क्षेत्र में कई चुनौतियाँ भी हैं। पर्यावरणीय और सामाजिक असमानताएँ, जलवायु परिवर्तन के प्रभाव, और संसाधनों का असमान वितरण जैसे मुद्दे गंभीर हैं। इन समस्याओं का समाधान करने के लिए एक समन्वित दृष्टिकोण की आवश्यकता है, जिसमें नीतियों, प्रौद्योगिकी, और सामुदायिक भागीदारी का एकीकृत प्रयास शामिल हो। अंततः, यह शोध पत्र इस बात पर जोर देता है कि पर्यावरण और सामाजिक जीवन के बीच संबंध को समझना और प्रबंधित करना स्थायी विकास और सामाजिक समरसता के लिए आवश्यक है। इसके लिए सभी हिस्सेदारों सरकारी संस्थाओं, सामुदायिक संगठनों, और व्यक्तियों दृष्टिकोण को मिलकर काम करना होगा ताकि एक स्वस्थ और संतुलित समाज का निर्माण किया जा सके।

**संदर्भ ग्रंथ सूची –**

1. The Environment and Society in India" - R. S. Sharma
2. Indian Society and Culture: Continuity and Change" - N. M. Tripathi
3. Ecology and Society: The Role of Environment in Development- A. K. Dutta
4. Sustainable Development: India's Experience" - K. P. N. Nair
5. Environmental Degradation in India: Causes and Consequences- V. M. Bansal
6. Our Planet: The Land and the People" - Mahesh Chandra
7. Climate Change and India: Perspectives from the Ground" - A. S. S. Ra

३

# ''राजनीतिक चिन्तन में कौटिल्य का योगदान''

**डॉ.पंकज राठौड़**
व्याख्याता, राजनीतिविज्ञान,
भूपाल नोबल्स स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय,
राजसमन्द, राजस्थान

**सारांश**

भारतीय राजनीति में कौटिल्य को एक महान चिन्तक के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त है। प्राचीन भारतीय प्रशासन के साथ कौटिल्य का नाम पर्यायवाची के रूप में जुड़ा है। कौटिल्य ने ही अर्थशास्त्र की रचना की थी जा कि प्राचीन भारतीय राजनीति के इतिहास की एकमात्र व्यवस्थित और वैज्ञानिक व्याख्या करने वाली पुस्तक है। कौटिल्य को भारत का मेकियावली कहा जाता है। क्योंकि दोनो विचारकों ने अपने–अपने शासनकाल में प्रसिद्धि प्राप्त की थी। दोनों विचारक यथार्थवादी रहे है। उन्होंने जो सिद्धान्त अपनाए वह आज के युग में बहुत प्रासंगिक है। उनके द्वारा बतायी गई प्रशासनिक कलाएं अभिन्न रही है। व्यवहारिक राजनीति का प्रतिपादन करते हुए उन्होंने धर्म और राजनीति को अलग करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उनका मानना था की एक राजा का कर्तव्य कल्याणकारी राज्य की सीापना करना है। उन्होंने राजनीति, दण्डनीति, समाजशास्त्र, नीतिशास्त्र पर भी अपने सभी विचार व्यक्त किए है इन्ही आधारों पर कौटिल्य को प्राचीन भारत का प्रथम विचारक कहा गया है।

**संकेत शब्द** – धर्म व राजनीति का विभाजन, दण्डनीति, नीतिशास्त्र, कल्याणकारी राज्य, प्रशासनिक कलाएं।

प्राचीन भारतीय दर्शन में कौटिल्य का महत्वपूर्ण स्थान है। पाश्चात्य राजनीतिक चिन्तन का प्रारम्भ प्लेटो और अरस्तु से माना जाता है। प्राचीन भारत के संदर्भ में कौटिल्य का अर्थशास्त्र प्रथम ग्रन्थ है। जिसे स्वतंत्र रूप से राजनीतिक विचारों पर लिखा गया है। भारतीय इतिहास में कौटिल्य विलक्षण प्रतिभाशाली व्यकित के रूप में माने जाते है। जैन, बौद्ध एवं भारतीय ग्रन्थों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि एक गरीब ब्राह्मण परिवार से सम्बन्धित है। बौद्ध एवं अन्य भारतीय ग्रन्थों के आधार पर यह अनुमान लगाया जाता है कि कौटिल्य की जन्मभूमि तक्षशिला थी, उन्होंने तक्षशिला विश्वविद्यालय से शिक्षा प्राप्त की थी। कौटिल्य प्राचीनकाल के प्रसिद्ध कुटनीतिज्ञ एवं राजनीतिज्ञ के प्रकांड पंडित थे। विश्वजगत में अपनी कुटनीति के लिए प्रसिद्ध हुए।



 ISBN: 978-81-993143-8-2

कौटिल्य भारतीय राजनीति इतिहास में एक महान विभूति के रूप में जाने जाते है। वे विलक्षण प्रतिभा के धनी व्यक्ति होने के साथ ही, तीक्ष्ण बुद्धि वाले, वेदो एवं मंत्रो का ज्ञाता, धन एवं शक्ति से घृणा करने वाले तपस्वी, सूक्ष्मदर्शी, स्वाभिमानी, मनोवैज्ञानिक, असाधारण, प्रतिभावान, दूरदर्शी, विशेषायुक्त व्यक्तित्व के धनी थे। राजनीति विज्ञान में कौटिल्य का वही स्थान है जो व्याकरण के क्षैत्र में 'पाणिनी' का, कौटिल्य का भारतीय राजनीति में योगदान निम्नलिखित है :–

1. राजनीति को पृथक पहचान देने का प्रयास

कौटिल्य ने राजनीति शास्त्र को एक पृथक पहचान देने का प्रयास किया है। उन्हानें राजनीतिक संस्थाओं, विचारों, घटनाओं का परिक्षण किया तथा अपने अनुभव व विश्लेषण के आधार पर राजनीतिक विचारों को यथार्थता के धरातल पर रखा है।

2. राजनीति में विभिन्न विचारधाराओं व विचारों का सम्मिश्रण

कौटिल्य ने राजनीति में विभिन्न विचारों व विचारधाराओं के अन्तर्गत अरस्तु, मैकियावली द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों को स्वीकारा है। उन्होंने राज्य के आदर्श व नैतिक स्वरूप, शक्ति, शक्ति–राजनीति का पृथ्थकरण शासनकला, कूटनीति, सम्प्रभुता आदि को अपनी व्यावहारिक राजनीति के अन्तर्गत समाविष्ट करने का प्रयास किया है।

3. कौटिल्य का यथार्थवादी विचारक के रूप में योगदान

कौटिल्य की सम्पूर्ण कृति से यह प्रतीत होता है कि वह काल्पनिक व भाग्यवादी न होकर एक यथार्थवादी विचारक थे। जिन्होनें व्यावहारिक राजनीति का प्रादुर्भाव किया। उन्होनें प्रमुख रूप से शासन को एक कला के रूप में स्वीकार किया। उनका राजनीतिक संस्थाओं व घटनाओं का विवेचन प्लेटों की आदर्शवादिता पर होकर व्यावहारिकता पर आधारित है।

4. व्यावहारिक राजनीति का प्रतिपादन

कौटिल्य व्यावहारिक राजनीति का प्रणेता माना जाता है और यही उसकी राजनीति को स्थायी देन है। कौटिल्य ने वास्तव में शासनकला तथा कूटनीति की विस्तृत व्याख्या की है। कौटिल्य के विवेचन का आधार व्यावहारिक ही नहीं पूर्णतया व्यावहारिक है।

5. समकालीन राजनीतिय थार्थवाद से निर्धारित विचार

प्रत्येक पुस्तक अपने समय का दर्पण होती है जिसमें उस युग की विशेषताओं को देखा जा सकता है। कौटिल्य का अर्थशास्त्र उन परिस्थितियों के अनुभवों के आधार पर लिखा गया था, जिसमें कौटिल्य ने अपना सम्पूर्ण जीवन व्यतीत किया। किसी भी राजा के राज्य को विस्तृत करने के लिए कुटिल एवं निपुण ज्ञान की

आवश्यकता होती है। कौटिल्य के विचार समकालीन राजनीतिक स्थिति एवं राजनीतिक स्थिति एवं राजनीतिक यथार्थवाद से निर्धारित हुए थे। जिसके निम्न कारण है–

1. समकालीन राजनीतिक विचारों का समन्वय करना।

2. शासन की व्यावहारिक समस्याओं की व्यवस्था करना।

3. कौटिल्य के विचारों पर तत्कालीन आर्थिक स्थिति का प्रभाव।

6. धर्म और राजनीति को अलग करना

प्राचीन भारत में राजनीतिक साहित्य में राजनीति और धर्म में कोई भेद नहीं किया गया। कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में स्पष्ट रूप से धर्म राजनीति में भेद किया है। इस प्रकार धर्म को राजनीति से पृथक कर कौटिल्य ने राजनीतिशास्त्र के विकास में महान योगदान दिया है।

7. राजनीति की सर्वोच्चता

कौटिल्य ने राजनीति को धर्म से ही मुक्त नहीं किया, अपितु राजनीति को धर्म के ऊपर प्राथमिकता दी है। कौटिल्य के सभी विद्यालयों की सिद्धि को दण्डनीतित पर आधारित किया है। कौटिल्य के अनुसार जब धर्म व राजनीति में विरोध हो तो राजनीति को ही सर्वोच्च मानना चाहिए।

8. नियोजित अर्थव्यवस्था

कौटिल्य की एक अन्य देन नियोजित अर्थव्यवस्था है। वह अर्थ की प्राप्ति, सुरक्षा और वृद्धि के सम्बन्ध में क्रमबद्ध विवेचन करता है। कौटिल्य का राज्य आर्थिक राज्य है। जो अर्थव्यवस्था को नियमित व नियन्त्रित ही नहीं करता बल्कि आर्थिक क्रियाओं में प्रत्येक भाग भी लेता है। कौटिल्य ने राज्य के आर्थिक कार्य बताये है – सार्वजनिक व निजी क्षैत्र को निर्धारित करना, मालिकों उत्पादकों व उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा करना, श्रम व फैक्ट्री कानून बनाना आदि। इस प्रकार कौटिल्य नियोजित अर्थव्यवस्था की प्रणेता थे।

9. राज्य की उन्नति

कौटिल्य ने राज्य की उन्नति के लिए कूटनीतिक युद्ध गुप्तचर – षडयन्त्र आदि साधनों को अपनाने पर बल दिया है। कौटिल्य के अनुसार – ''राज्य का विकास अवनति से स्थिरता की ओर तथा स्थिरता से प्रणति की ओर है।'' कौटिल्य के अनुसार – ''शक्ति का प्रयोग संयम व समझदारी से करना चाहिए। जिससे वह आत्म–विनाशी नहीं बने।''

10. अर्थशास्त्र प्राचीन विद्या

 ISBN: 978-81-993143-8-2

अर्थशास्त्र एक ऐसा ग्रन्थ है जो अर्थशास्त्र के विषय पर उपलब्ध क्रमबद्ध ग्रन्थ है इसलिए इसका महत्व सबसे अधिक है, कौटिल्य के अनुसार – अर्थशास्त्र का क्षैत्र पृथ्वी को प्राप्त करने और उसकी रक्षा करने के उपायों का विचार करना है। उन्होंने अपने अर्थशास्त्र में ब्रह्मचार्य की दीक्षा से लेकर, देशों की विजय करने की अनेक बातों का समावेश किया है। शहरों को बसाना, गुप्तचरों का प्रबन्ध, सेना की रचना, न्यायालयों की सीपना, विवाह सम्बन्धी नियम, दयाभाग, शत्रुओं पर चढ़ाई के तरीके, किलाबंदी, संधियों के भेद, व्यूहरचना इत्यादि बातों का विस्तारूप के विचार कौटिल्य ने अपने ग्रन्थ में दिए है, उसमें राजनीति, दण्डनीति, समाजशास्त्र, नीतिशास्त्र इत्यादि विषयों पर भी विचार किया है। अतः कहा जा सकता है कि कौटिल्य का अर्थशास्त्र का सम्बन्ध मौर्यकाल से अवश्य रहा है और कौटिल्य के विचारों को निश्चय ही इस पुस्तक में स्थान दिया गया है। इसक साथ ही बाद के युग में अनेक ग्रन्थों की रचना हुई है। अर्थशास्त्र में 15 अधिकरण, 180 प्रकरण, 150 अध्याय और 380 श्लोक है, यदि सारे ग्रन्थ के वर्णों को इकट्ठे करके 2 अनुरूप श्लोक बना दिए जाए तो 6000 श्लोक बनेंगे।

शास्त्रसमुद्देशः पंचदशाधिकरणानिख

संपचाषदध्यायशतं साशीति प्रकरणशतं षट्श्लोक सहस्त्राणीति।

(अर्थशास्त्र, प्रथम अधिकरण)

आधुनिक युग में अर्थशास्त्र का प्रथम संस्करण 109 ई॰ में मैसूर में प्रकाश में आया था और उसका संपादन शामशास्त्री ने किया था।

11. भ्रष्टाचार का साम्राज्य

कौटिल्यकालीन समाज में जीवन के हर क्षैत्र में भ्रष्टाचार की दीमक का साम्राज्य दिखाई पड़ता है। कई अतीतवादी उसे सतयुग कहते है लेकिन अंदर से यह खोखला समाज तब से आज तक चला आ रहा है। जब राजा सर्वोचच शक्ति को वह भ्रष्टाचार सिखाता है और वह तद्नुसार कार्य करता है, तब उससे क्या आशा की जा सकती है। आधुनिक भारत में उच्च पदासीन लोगों के जा घपले, घोटाले आदि सामने आ रहे है। न्यायाधीश धन लेकर अपराधी को छोड़ देते थे, धन का प्रलाभन देकर लोगों की झूठी गवाही देने के लिए उकसाया जाता था और वे लालच में आकर झूठी गवाही देते है। कौटिल्य लिखते है कि –

देव ब्राह्मणपस्विस्त्रीबालवृद्ध व्याधिताना,

मनधाना मनभिसरतां धर्मस्थाः कार्यणि कुर्युः न च देशकाल भोगच्छले नाति ।।

(अर्थशास्त्र 3174 – 75120)

धर्मस्थ अधिकारियों को चाहिए कि वे देव, ब्राह्मण, तपस्वी, स्त्री, बालक, बुढ़े बीमार और अनाथ का कार्य खुद की कर दिया करे, स्थान तथा समय का बहाना बनाकर उनका धन न लुटा जाए।

यदि उच्चतम स्तर पर बैठे लोगों में उच्च स्तर की ईमानदारी का अभाव होगा तो जनता के जवावड़ों के अरण्य रोदन के बावजूद दागी व भ्रष्ट लोग मंत्री, मुख्यमंत्री, केन्द्रीय मंत्री बनते रहेंगे। सत्ता के कारण शक्ति और सुविधा के आनन्द उठाते रहेंगे तथा सारे जबानी जमा खर्च के बावजूद भ्रष्टाचार का वटवृक्ष और ज्यादा क्षैत्रों में अपनी जड़े जमाता रहेगा। कौटिल्य के काल से आज तक यही होता चला आ रहा है।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र को आधार बनाए तो लगेगा कि राज्य में 27 अध्यक्ष नियुक्त थे। उनका कार्य मुख्य रूप से राज्य की आर्थिक गतिविधियों का नियमन करना था। वे कृषि, व्यापार–वाणिज्य और बाट–मापन का तथा कताई, बुनाई खान आदि शिल्पों का नियमन–नियंत्रण करते थे। राज्य कृषकों की भलाई के लिए सिंचाई और जल वितरण की व्यवस्था करता था।

12. राज्य की प्रशासनिक व्यवस्था

कौटिल्य ने राज्य की प्रशासनिक व्यवस्था के संचालन के लिए विभिन्न विभागों, जिन्हें वे तीर्थ कहते है का उल्लेख किया है। आज भी राज्य की प्रशासनिक व्यवस्था में प्रशासनिक विभागों की व्यवस्था होती है। कार्मिक प्रशासन पर कौटिल्य ने भी पर्याप्त ध्यान दिया था और आज भी कार्मिक प्रशासन पर पर्याप्त ध्यान दिया जा रहा है। कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में स्थानीय प्रशासन का उल्लेचा किया है। स्थानीय प्रशासन आज भी लोकतंत्र की प्रशिक्षणशाला और सच्ची पद्धति का आधार माना जाता है। कौटिल्य ने राज्य के स्वामित्व और नियन्त्रण वाले लोक उद्यमों की चर्चा की है। आज भी लोक उद्ययमों की राज्य स्थापना करता है। आज भी राज्य का मुखिया राजतन्त्रों में राजा तथा लोकतंत्रों में राजा के समान ही प्रभु स्थिति रखने वाली मुख्य कार्यपालिका होती है। उस समय भी मन्त्रीपरिषद थी, जो राजा को कार्यों में सहायता प्रदान करती है और आज भी मुख्य कार्यपालिका में मन्त्रीपरिषद शामिल होती है जो शासन संचालन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। प्रादेशिक क्षैत्र या जनपद राज्य का तीसरा अंग था और आज भी राष्ट्र राज्यों की अपनी प्रादेशिक सीमाए होती है जिसमें उसके नागरिक निवास करते है, दुर्ग उस समय सुरक्षा की दृष्टि से बनाए जाते थे। आज दुर्गों के स्थान पर सैनिक और अन्य

 ISBN: 978-81-993143-8-2

सुरक्षा प्रतिष्ठान होते है। राजकोष, सेना और मित्र राज्य जितने आवश्यक थे उतनी ही अधिक आवश्यकता आज के राज्यों को उनकी है।

13. सामाजिक सुरक्षा व कल्याणकारी राज्य

कौटिल्य के अर्थशास्त्र में सामाजिक सुरक्षा पर आधारित कल्याणकारी रूप के स्वरूप का भी उल्लेख किया है। उसका विचार था कि राज्य का मुख्य लक्ष्य प्रजा की भलाई करना और दैवी विपत्तियों से जनता की रक्षा करना। कौटिल्य ने राज्य के मार्गदर्शन के तीन सिद्धान्तों को अपनाए –

1. राज्य द्वारा ऐसे उद्योग चलाए जाने चाहिए, जो राष्ट्र को स्वावलम्बी बनाने में प्रत्यक्ष रूप से सहायक हो।

2. कृषि, सूत कातने, कपड़े बनाने, पशुपालन कला आदि को निजी व्यक्तियों के लिए छोड़ देना चाहिए।

3. राज्य का यह कर्तव्य है कि उत्पादन वितरण और उपभोग समन्धी समस्त क्रियाओं के सफलतापूर्वक संचालन की व्यवस्था करें।

14. शिक्षा पद्धति –

कौटिल्य के अनुसार वैदिक साहित्य के अध्ययन की विधि थी – (1) शुक्रुषा (2) श्रवणम् (3) ग्रहगम् (4) धारणम् (5–6) उहापोह (7) विज्ञान।

कौटिल्य के अनुसार दण्डनीति, उध्यात्म विद्या, त्रयी और वार्ता बड़े ही महत्वपूर्ण विषय थे। राजकुमार उपर्युक्त विषय के अतिरिक्त सैनिक शिक्षा प्राप्त करते थे। जिसमें विविध अस्त्र–शस्त्रों का संचालन, सेना के विभिन्न अंगों का निर्देशन था। उन्हें इतिहास, पुराण, आख्यायिका, उपालरण, धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र भी पढ़ना पड़ता था।

## निष्कर्ष

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि कौटिल्य की विचारधारा एक काल, एक व्यवस्था, एक व्यक्ति से संबंधित न होकर सार्वकालीन व सार्वभोम विचारधारा है। कौटिल्य एक सशक्त राज्य के निर्माता थे। उनकी दृष्टि दूरगामी थी और यही दूरदृष्टिता उनके व्यावहारिक राजनीति कुशाग्रता का प्रमाण है। कौटिल्य का अर्थशास्त्र लोकतंत्रिय परम्परा के निकट होते हुए भी धर्मशास्त्र के निकट था। अतः अर्थशास्त्र का आधार धर्मशास्त्रीय परम्परा रही है। यह कौटिल्य की विलक्षण प्रतिभा का ही परिणाम है कि अर्थशास्त्र राजतंत्रात्मक व्यवस्था लोक कल्याणकारी व्यवस्था थी। अतः यह कहा जा सकता है कि कौटिल्य ने प्राचीन भारतीय राजनीति में समकालीन लोगों को समाजशास्त्र के नये प्रयोग से परिचित कराया। यह राजतंत्रीय व्यवस्था को लोकतंत्रात्मक स्वरूप प्रदान करके अपनी

विलक्षण यथार्थवादी एवं व्यवहारिक सोच से शासकों और जनता का साक्षात्कार कराया। कौटिल्य की मान्यता थी कि सत्ता के अभाव में मनुष्य हमेशा भयभीत रहता है, भय ही उसको हमेशा परेशान करता रहता है। सुरक्षा की मांग करता है। वह सुरक्षा अर्थशास्त्र में उसको सत्ता के माध्यम से मिलती है। कौटिल्य इसी सुरक्षा के आधार पर नागरिकों से कर लेता है। उसका लक्ष्य प्रारम्भ से ही सत्ता की सुरक्षा रहा है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :


- डॉ॰ अनुपमा सक्सैना, अर्चना कुमारी, प्रमुख भारतीय राजनीतिक विचारक, पृष्ठ संख्या 33, 34, 79, ज्ञानदा प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008
- प्रकाश नाराया नाराणी, प्राचीन भारत के राजनीतिक विचारक, पृष्ठ संख्या 105, 107, 108, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2002
- प्रो॰ अल्पा एम॰ दोषी, भारत के प्रमुख अर्थशास्त्री, पृष्ठ संख्या 4, रावत प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014
- डॉ॰ सुरेन्द्र कुमार शर्मा 'अज्ञात' – कौटिल्य का अर्थशास्त्र पृष्ठ संख्या 50, 180, 188, 191, विश्वबुक्स, नई दिल्ली 2003
- रामशरण शर्मा, प्रारम्भिक भारत का परिचय, पृष्ठ संख्या 182, ओरियंट ब्लैकखाने, हैदराबाद, 2009
- नरेन्द्र कुमार थ्योरी, प्रशासनिक विचारक, पृष्ठ संख्या 14, 15 आर.वी.एस.ए. पब्लिशर्स, जयपुर, 2002
- राजेश कुमार शर्मा, शिशिर कुमार वर्मा, पृष्ठ संख्या 559, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2002
- मिथिला शरण पाण्डे, प्राचीन भारत की सामाजिक संस्थाएं, पृष्ठ संख्या 87, 88 ज्ञानदा प्रकाशन नई दिल्ली 2005.


 **ISBN: 978-81-993143-8-2**

४

# पर्यावरण संरक्षण में जैव प्रौद्योगिकी :योगदान व प्रयोग

डॉ. सुनील कुमार] भूगोल

प्रवक्ता, सिरसा (हरियाणा)

**पर्यावरण** केवल एक शब्द मात्र नही है अपितु मानवीय जीवन से जुड़ा हुआ अथवा दुसरे शब्दों में कहे तो मानव जीवन का पर्याय है। मानव की संस्कृति स्वभाव व कार्य उसके पर्यावरण के साथ सम्बंधों की पुष्टि करती है जो पर्यावरण के स्तर का निर्धारण करती हैं। पर्यावरण इकाई मे विभाजित होने का विषय नहीं है अपितू इसे सामूहिक रूप से समझने की आवश्यकता है। पर्यावरण हाल ही के वर्षो में चर्चा का विषय रहा है क्योंकि विकास के साथ प्रदूषण बढा है इसलिए **पर्यावरण प्रदुषण,** पर्यावरण की अपेक्षा तुलनात्मक रूप से अधिक महत्वपूर्ण बना है। पर्यावरण बेहद व्यापक है इसमें आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक सांस्कृतिक आदि घटनाओं को सम्मिलित किया जाता है। सामाजिक प्राणी होने के नाते मनुष्य की आवश्यकता अनंत है जिनकी पूर्ति हेतु उसे अनेक आर्थिक क्रियाए करनी पड़ती है मानव की इन्हीं तथाकथित आर्थिक क्रियाओं का प्रभाव पर्यावरण पर पड़ता है। मानव वातावरण की उपज है साथ ही वर्तमान में वह पर्यावरण को मानव पक्ष में करने हेतु प्रयासरत है।

जैव प्रौद्योगिकी आधुनिक समय का सबसे नवीन विज्ञान का एक प्रकार है जिसके सहारे मानव अपने उन सब कृत्यों को ठीक कर सकता है जो कालान्तर में उसने उपभोगवादी बनकर किये। जो हानि उसकी उपभोगवादी संस्कृति ने प्रकृति में की है उसकी क्षतिपूर्ति में यह प्रौद्योगिकी भरण का कार्य करने में सक्षम है चाहे उसने प्रयोगवादी बनकर विभिन्न वनस्पति जाति को नष्ट किया हो या अपने आनंद, सुख अथवा कौतूहलवश जीव जन्तुओं को समाप्य सीमा तक लेके गया हो। इन सबको पुनः संतुलन करने में इस प्रौद्योगिकी की अहम भूमिका होगी।

सारतः पर्यावरण से अभिप्राय मनुष्य के चारों ओर की प्राकृतिक, सामाजिक एवं मानवकृत शक्तियों से है जो मनुष्य की आर्थिक गतिविधियों को प्रभावित करती है।

अर्थव्यवस्था और पर्यावरण का बहुत घनिष्ट सम्बन्ध है सामाजिक और आर्थिक उद्देश्यों को पुरा करने के लिए जिस निति को क्रियान्वित किया जाता है उसका प्रभाव वातावरण पर निश्चित रूप से पड़ता है। मानव अपनी जीवन शैली सुधारने के लिए प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करके स्वयं अपने ही द्वारा प्रदूषित वातावरण का शिकार बन गया है। पर्यावरण में अतिक्रमण तथा आर्थिक मंदी साथ–साथ चलते है क्योंकि पर्यावरण और आर्थिक उन्नति का बहुत बड़ा सम्बन्ध है। पर्यावरण मे दोष आ जाने से न केवल आर्थिक क्षेत्र में व्यवधान पैदा हो सकता है वरन सामाजिक और राजनैतिक क्षेत्रों में भी अलगाववाद को बढ़ावा मिल सकता है। इस सम्भावना को देखते हुए बहुत से विद्वानों व पर्यावरणविदों का मानना है कि भविष्य में पर्यावरण व संसाधन विषय ही वैश्विक विवाद के विषय बन जायेगें जिनका स्वामित्व, नियंत्रण व संचालन महत्वपूर्ण होगा।

आर्थिक उन्नति हेतु मानव के कयास और प्रयास का परिणाम ये हुआ कि उसने पर्यावरण को एक सीमा तक प्रभावित कर दिया जिसका असर यह है कि पर्यावरण अब प्राकृतिक रूप से स्वयं संतुलित नहीं हो पा रहा है। इसलिए पर्यावरण को संरक्षित करने हेतु नवीन प्रयोगों एवं तकनीको की आवश्यकता है जिसे जैव प्रौद्योगिकी या पर्यावरण प्रोद्योगिकी कहा जाता है।

जैव प्रौद्योगिकी बिल्कुल नवीन विज्ञान है जिसका हाल में विकास हुआ जिसके नतीजे न केवल आश्र्चजनक अपितू उपयोगी भी साबित हो रहे है। भौतिक प्रौद्योगिकी ने मशीनों से मानव जीवन को सुखद बनाने का कार्य किया है जबकि जैव प्रौद्योगिकी एक प्रकार के जीवन में परिवर्तन करने तथा नवीन जीवन गठने की तकनीक है। पर्यावरण एवं पर्यावरण संरक्षण में इसके प्रयोग की असीम सम्भावनाएँ है। जैव प्रौद्योगिकी के द्वारा कई माध्यमों से पर्यावरण हित में कार्य किया जा सकता है जैसेः–

कुछ वर्ष पूर्व CSIR राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान, लखनऊ व केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसंधान संस्थान, मैसूर द्वारा सायनोबैक्टीरिया से सिगल सेल प्रोटीन का व्यापारिक उत्पादन करवाया गया। इसके लिए शैवाल क्लोरेला एवं सेनडेस्मस भी प्रयोग में लाये गए। ये सुक्ष्म जीव प्रदुषणकारी अपशिष्ट पदार्थो का अधिकतर उपयोग करते हैं जिनसे प्रदूषण नियंत्रण में सहायता मिलती है।

जैव प्रौद्योगिकी का प्रयोग न केवल बढ़ती आबादी की आवश्यकता पूर्ति हेतू अपितू पर्यावरण संरक्षण व प्रदूषण नियंत्रण हेतू भी किया जा रहा है जैसे वाहित मल को प्रारम्भिक तौर पर उपचारित करने के बाद इसके अग्रिम उपचार में इस प्रौद्योगिकी की मदद ली जा सकती है। इस मल में मौजूद कार्बनिक पदार्थों के पाचन हेतू स्यूडोमोनास, माइक्रोकोकस, नाइट्रोसोनास सार्सिना, स्टैफाइलोकोकस एवम् एकोमोबैक्टर को प्रयुक्त किया जा रहा है। नाइट्रोसोमोनास एवम् नाइट्रोबैक्टर का प्रयोग अमोनिया के पाचन के लिये किया जा रहा है जो इन्हें नाइट्रेट में परिवर्तित कर देते है।

मृदा में प्रयुक्त हो रहे अनावश्यक रासायनिक उर्वरकों कीटनाशकों एवम् खरपतवार नाशकों की बढ़ती मात्रा के दुष्प्रभाव को निम्न करने हेतू इन जैव प्रौद्योगिकी से उत्पन्न जीवों प्रयोग किया जा रहा है। पुनर्यौजी तकनीक के माध्यम से ऐसे बैक्टीरिया का निर्माण किया जा रहा है जो जीवेतर यौगिको को अपघटित करने में सक्षम है। जैव प्रौद्योगिकी की सहायता से हानिकर कीड़े–मकोडों के शरीर में परिवर्तित सुक्ष्म जीव स्थानांतरित किये जा रहे है। जिससे उनके रोग पैदा होते है तथा वे नष्ट हो जाते है। ऐसे ही कई कवक खोजे गये ही जो कीटों की त्वचा के घुसकर टोक्सिन पैदाकर उन्हे मार देते हैं।

कीड़े–मकौड़े कीटो आदि की रोकथाम के साथ–साथ कृषि क्षेत्र में पारम्परिक प्रजातियों के स्थान पर फसलों की नवीन व प्रति एकड़ अधिक तथा अधिक बिमारी रोधक बीज तैयार करने में जैव प्रौद्योगिकी की अहम भूमिका बनती जा रही है। मौजूदा किस्मों का कृषि वातावरण से सामजंस्य स्थापित कर कम आर्द्रता, कम वर्षा में अच्छी पैदावार लेने में मदद हो सकती है।

 ISBN: 978-81-993143-8-2

भारत में जैव प्रौद्योगिकी को लेकर वर्तमान दशक में आशाजनक उन्नति की है। इसको बढ़ावा देने के लिए केन्द्रीय मंत्रिमण्डल ने BioE3 (BioTechnolgoy for Economy, Environment and Employment) के प्रस्ताव को मंजुरी दे दी है। Bio E3 नीति अपने अन्तर्गत छह क्षेत्र जैव आधारित रसायन, फंक्शनल फूड, परीशुद्ध जैव चिकित्सा, जलवायु–प्रत्यास्थी कृषि, कार्बन कैप्चर और समुद्री अंतरिक्ष अनुसंधान शामिल किये हुये है।

भारत में अनेक ऐसे क्षेत्र है जिसमें विकास अथवा उपचार दोनो ही रूपों में इस प्रौद्योगिकी का प्रयोग किया जा सकता है जैसे भारत के अनेक प्रदूषित तटों अथवा स्थलों की सफाई के लिए बायो–रेमेडियन तकनीकों का विकास, अपशिष्ट प्रबंधनन के क्षेत्र में Bio degradeable plastic और जैव आधारित सामग्रीयों का विकास करके, कार्बन उत्सर्जन व कार्बन निम्नीकरण के लिए जैव प्रौद्योगिकी की नवीन तकनीकों का इस्तेमाल करने के साथ ही भारत के अनेक शहरों में बायोटेक स्टार्टअप स्थापित किए जा रहे है जो विभिन्न जलवायु, प्रदूषण, अपशिष्ट निपटान, कृषि आदि के लिए कार्यरत है।

## कृषि में जैव प्रौद्योगिकी

खाद्यानों के उत्पादन व इसकी वृद्धि हेतू हरित क्रांति बेहद सफल रही लेकिन बढ़ती जनसंख्या ने इसकी सफलता के लक्ष्य को सीमित कर दिया। हरित क्रांति में उन्नत किस्म के बीज व कृषि रसायन अहम रहे है लेकिन इसका अगला चरण उत्तक संवर्धन के रूप में विकसित हुआ। जिसमें पादप कर्त्तोतकी से पोषक स्थिति एवं रोगाणूरहित स्थिति में पादप तैयार किये गये। उत्तक संवर्धन से हजारो की संख्या में पादप विकसित करना ही सूक्ष्म प्रवर्धन है जिसमें प्रत्येक पादप अपने मूल पादप के समान है इस वजह से ये सोमाकलोन कहलाते हैं। उत्तक संवर्धन अथवा सूक्ष्म प्रवर्धन विधि से रोग ग्रस्त पादप अथवा सक्रमित पादप को रोगमुक्त पादप के रूप में विकसित किया जाता है। इस विधि से केला, गन्ना, आलू टमाटर आदि फसलों को सफलता मिली है। जैव प्रोद्योगिकी में एकल पादप के साथ ही, दो अलग पादपों को प्रोटोप्लास्ट युग्मित कर संकर प्रोटोप्लास्ट उत्पन्न किया जाता है। यह कायिक संकर रूप है।

जैव प्रौद्योगिकी से परिवर्तित ऐसे पौधे, जीवाणु, कवक आदि जिनके जींस हस्तकौशल द्वारा परिवर्तित है, आनुवंशिकतः रूपान्तरित जीव होते है जिनमें रूपातरण के फलस्वरूप कई लाभप्रद व्यवहार जैसे – फसलो में ठण्डा, सुखा, लवण, ताप के प्रति अधिक सहिष्णुता, रासयनिक किटनाशकों पर कम निर्भरता खाद्य प्रदार्थों के पोषणिक स्तर में वृद्धि का विकास देखने को मिलता है।

पिड़क प्रतिरोधी फसलों का विकास जैसे बीटी (बैसीलस थुटीनजिएसिस) एक जीवाणु से निर्मित होता है। बीटी जीवविष जीन जीवाणु से क्लोनिकृत होकर पौधो की कीट प्रतिरोधक क्षमता पैदा करता है। जिससे कीटनाशकों की आवश्यकता नही होती जैसे बीटी कपास, बीटी मक्का, इसके अलावा पौधो की जड़ो के सक्रमण को रोकने व उनकी रोकथाम के लिए एक नवीन विधि आरएनए अंतक्षेप की प्रक्रिया को अपनाया जाता है जिसमें परजीवी की आरएनए संरचना में भी परिवर्तन कर नष्ट किया जाता है।

## पर्यावरण हितेषी जीवाणुओं जैव प्रौद्योगिकी

प्राकृतिक रूप से प्रकृति ने अनेको ऐसे जीवों को विकसित किया है जो प्रकृति के अपशिष्ट कुड़े–कचरे आदि के यौगिको को तोड़कर मृदा में मिश्रित कर देते है लेकिन मानव द्वारा नवीन विकास कार्यो से उत्सर्जित अनेक पदार्थ ऐसे भी हैं जिनको ये प्राकृतिक जीवाणु अपघटित नहीं कर पाते इसलिए जैव प्रौद्योगिकी के द्वारा कई वैज्ञानिकों ने अपने आविष्कारों द्वारा ऐसे जीवाणुओं का विकास किया गया जो नवीन रूप के विकृत पदार्थो को अपघटित कर सके।

भारतीय वैज्ञानिक Dr. A.M. Chakarvorthy ने ऐसे नवीन जीवाणुओं (सुपरबग) का निर्माण जैव प्रौद्योगिकी के माध्यम से किया जो प्रदुषण फैलाने वाले विभिन्न कार्बनिक रसायनों को पचा जाते है। वियतनाम–अमेरिका (1953–1975) के दौरान अमेरिका द्वारा जैव रसायन अर्थात औरेंज–टी नामक खरपतवार रसायन का छिड़काव किया गया जिसने यहा की कृषि को नष्ट कर दिया। डॉ. चक्रवती ने औरेंज–टी को नष्ट करने वाले जीवाणुओं का भी विकास किया। आधुनिक युग में समुद्री परिवहन वैश्विक यातायात का सफल उदाहरण है लेकिन वैश्विक समुन्द्री मार्गों में तेल रिसाव भी इसका एक पक्ष है जो समुद्री सतह पर फैलकर समुद्री जीवों की श्वसन क्रिया को प्रभावित करता है। जैव प्रौद्योगिकी के द्वारा इस समस्या का समाधान पैट्रोलभक्षी जीवाणु को विकसित करके किया गया। स्युडोमोनास नामक जीवाणु की आुनवांशिकी में फेरबदल कर नवीन जीवाणु बनाया गया जो समुद्री जल से पैट्रोल पीकर हाइड्रोकार्बन को अहानिकारक प्रोटीनयुक्त भोजन मे बदल देता है। इन गुणो को जीवाणुओं की एक पिढी से दुसरी पीढ़ी तक पहुँचाने में पुनर्योजी डी.एम.ए. तकनीक का प्रयोग किया जाता है।

## प्रौद्यंसवर्धन में जैव प्रौद्योगिकी

पर्यावरण को समृद्ध और हराभरा बनाने के लिए पौधों वनस्पति वृक्षो एवं वनों की महत्वपूर्ण भूमिका है इसलिए जैव प्रौद्योगिकी से एक ही समय में अनेक पौधे तैयार किया जा सकते है इसके लिए अंतक सवंर्धन नामक जैव तकनीक का सहारा लिया जा रहा है। इस हेतु भारत के कई संसाधनों मे यह सफलता प्राप्त भी हुई है जैसे– भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र मुंबई में अननास, राष्ट्रीय रासायनिक प्रयोगशाला पूणे में अदरक व हल्दी, गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ, केन्द्र में सागवान, गन्ना, इलायची आदि में इन फसलों व मसालों की पौध तैयार की गई। इस विधि के द्वारा एक कौशिका (स्टेम) से पूरा पौधा तैयार किया जा सकता है। पोषक घोल मे उतक संवर्धन विधि द्वारा उत्तक समूह बनाकर कलिकाएँ विकसित कर असख्य पौधे तैयार किये जाते है।

इस प्रकार विभिन्न तकनीक विधियों से फल, फूल, वृक्ष अथवा सजावटी पौधों की कमी को पूरा किया जा सकता है। जिससे घटते व उजड़ते वनों को लगाने व पृथ्वी की सिमटती हरियाली को वापिस लाने में मदद मिल रही है।

## प्रदुषण मुक्त पर्यावरण जैव प्रौद्योगिकी

 ISBN: 978-81-993143-8-2

जैव प्रौद्योगिकी की सहायता से फसलों की रोगमुक्त किस्में विकसित की गई है जिसके कारण उन विशेष फसलों पर किटनाशक छिड़काव की आवश्यकता नही रहती है। किटनाशी दवाओं से दुषित रसायन भूमि व उपयोगकर्ता मानव अथवा जीव के शरीर में पहुँच कर नुकसान पहूँचाने का कार्य करते है। इससे मृदा प्रदुषण को सिमित किया जा सकता है।

## वन्यप्राणी संवर्धन जैव प्रौद्योगिकी

पर्यावरण संरक्षण एवं पर्यावरण का एक अभिन्न अंग वन्यप्राणी व वन्य जीव भी है। खाद्य श्रृंखला के संतुलन को कायम रखने के लिए जैव तकनीक का प्रयोग करने की आवश्कयता देखी जा रही है। कृत्रिम निषेचन, भ्रुण स्थानातरण, भ्रुण प्रतिरोषण, बाह्य निषेचन तथा भ्रुण जैव प्रौद्योगिकी की सहायता से कम हो रहे जीवों जैसे शेर, हाथी, चीता अथवा कोई भी संकटग्रस्त प्रजाति लुप्त हो रहे जीवो की संख्या को स्थिर कर बढाया जा सकता है अथवा भविष्य के लिए तरल नाइट्रोजन मे इनके भ्रुण को रख भविष्य के लिए सुरक्षित किया जा सकता है। हालांकि इस दिशा में बहुत बड़ी सफलता प्राप्त नही पायी है लेकिन प्रयास किये जा रहे है।

## जैव प्रौद्योगिकी के लाभ

जैव प्रौद्योगिकी का सबसे अहम कार्य बढ़ती हुई जनसंख्या को भोजन उपलब्ध करवाने में है। यह भोजन अनाज अदता जीव दोनो है। आनुवंशिक अभियांत्रिकी के प्रयोग से विशेष अनाजो की विशेषताओं, गुणों, अवसान अवधि आदि में सुधार अनाजों की विशेषताओं, गुणों, अवसान अवधि आदि में सुधार किया जा रहा है। जिससे उन्हें दीर्घकाल तक उपयोगी बनाया जा सके। ऐसा ही प्रयोग फलो व सब्जियों में भी किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त विकासशील देशों में विभिन्न अनाजों, फलो व सब्जियों को विषाणु प्रतिरोधी, रोगाणु प्रतिरोधी अथवा विभिन्न विटामीन से संवर्धित कर विभिन्न रोगों का निदान आहार के माध्यम से किया जा सकता है।

## जैव प्रौद्योगिकी के दोष

जैव प्रौद्योगिकी जहां मानव जीवन के लिये सुविधाओं के द्वार खोल रही है। वही इसके प्रयोग से प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष रूप से कई प्राकृतिक विकास भी उत्पन्न हो रहे है। इन विकारों को जैव प्रौद्योगिकी का नकारात्मक पक्ष भी कहा जा सकता है। जैसे जैव प्रौद्योगिकी से सबसे गंभीर समस्या प्रत्यूर्जता (एलर्जी) की हो सकती है। नवीन प्रयोगों तथा नवीन किस्मों को नवजीवन देकर उसे वातावरण में स्थापित करने से जीव अथवा मानव जीवन हेतू नवीन किस्म की प्रत्यूर्जता को आमंत्रण देना है। साथ ही भोजन अथवा जैविक प्रौद्योगिकी से अनाज, फल आदि के अत्याधिक प्रयोग से उसका मूल गुण बदलकर विषाक्वता के चरण में पहुंच जाता है। इसके अतिरिक्त प्रकृति द्वारा वनस्पति व जीवो का प्राकृतिक संतुलन पोषक श्रृंखला के माध्यम से नियंत्रित किया जा रहा है। लेकिन जैव प्रौद्योगिकी से इस पोषण श्रृंखला के किसी भी चरण में असंतुलन उत्पन्न हो सकता है। इस प्रौद्योगिकी के माध्यम से केवल कुछ विशेष फसलो, पौधो व जीवों की

प्रजातियों का संवर्धन व उनकी संख्या में बढोतरी करने से जैविक तथा प्राकृतिक खाद्य व जैव विविधता में कमी आने की संभावना बनी रहेगी।

## जैव सुरक्षा और जैव नैतिकता

जैव सुरक्षा इस प्रौद्योगिकी से प्रत्यक्ष रूप से जुड़े हुये घटको जैसे मनुष्य, पशु अथवा वनस्पतियों के उपर पड़ने वाले दुष्प्रभाव से सम्बन्धित है। जैविक तंत्र से छेड़छाड़ व वैज्ञानिक कुटिलता से आनुवांशिकी से जैविक श्रृंखला का नष्ट होना अथवा जैविक प्रजातियों का नष्ट होना अथवा लाइलाज बिमारी का फैलना भी अनदेखा नहीं किया जा सकता है। इसलिए इस प्रौद्योगिकी का प्रयोग सभी देशों को कार्टागेना प्रोटोकाल के माध्यम से अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों व मानकों के अन्तर्गत करना अपेक्षित है तभी यह वैश्विक समुदाय के लिए सुरक्षित हो सकता है।

## संदर्भ सूची


1. सिंह सविन्द्र, ''पर्यावरण भूगोल'' प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद (2015)
2. सिंह सविन्द्र, ''जलवायु विज्ञान'' प्रवालिका पब्लिकेशनस, इलाहाबाद (2016)
3. चांदना, आर.सी., ''जनसंख्या भूगोल'', कल्याणी पब्लिकेशनस, (2015)
4. सिंह सविन्द्र, ''जैव भूगोल'' प्रवालिका पब्लिकेशनंस, इलाहाबाद
5. सिंह जगदीश व काशीनाथ सिंह, ''आर्थिक भूगोल''
6. शुक्ला राजेश व रश्मि शुक्ला, ''कृषि भूगोल'' अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस (2017)
7. सिंह कटार व शिशोदिया अनिल ''ग्रामीण विकास सिद्धांत व नितियाँ'' सेज पब्लिकेशंस, नई दिल्ली
8. गर्ग, एच.एच. ''बायोज्योग्राफी'' राजेश पब्लिकेशन्स, (2003)
9. कात्यायन, अरूण ''कृषि विज्ञान के मूल सिद्धांत'' किताब महल पब्लिकेशनस
10. डॉ. माथुर सरस्वती "जैव प्रौद्योगिकी", राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर
11. डॉ. पाण्डे, गोपाल व पंत हेमलता, "जैव प्रौद्योगिकीः अनुसंधान व विकास"
12. वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, भारत सरकार
13. त्रिवेदी, प्रवीण चंद्र, "पर्यावरण व जैव प्रौद्योगिकी" लोक प्रशासन, जयपुर


 ISBN: 978-81-993143-8-2

५

# नशा जीवन नाशक है- परिवार, समाज, शासन एवं प्रशासन: हमारे प्रमुख दायित्व एवं हमारी प्रमुख भूमिका

**डॉ.राजपाल, प्राध्यापक (हिन्दी)**

**पदस्थापन स्थान - राउमावि फकीरवाली**

**प्रस्तावना -** वर्तमान में हमारे सामने एक प्रमुख सबसे बड़ी सामाजिक समस्या पैदा हो रही है और वह है युवाओं का नशे का शिकार होना। जो आने वाले कल के होने वाले देश के जांबाज एंव कर्णधार है आज वही सबसे ज्यादा नशे के शिकार है जिनको देश की उन्नति मे अपनी उर्जा लगानी थी, वो आज अपनी अमूल्य शारीरिक और मानसिक उर्जा चोरी, लूट-पाट और मर्डर जैसी सामाजिक कुरीतियों में नष्ट कर रहे हैं, आज एक भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंशान परिषद् द्वारा करवाये शोद्ध में लगभग 90 प्रतिशत लोगों में हार्ट अटैक का कारण तम्बाकू का सेवन बताया गया। जिस तरह से तकनीकी विकसित हुई है, ठीक उसी तरह से नशे के सेवन में भी नई तकनीकी विकसित हुई है। आज का युवा शाराब और हेरोइन जैसे मादक पदार्थो का नशा नहीं बल्कि कुछ दवाओं का इस्तेमाल नशे के रूप में कर रहा है, इसकी सबसे बड़ी वजह यह है कि सइस तरह की दवाएं आसानी से युवाओं की पहुँच में है और इसके सेवन से घर या समज में किसी को एहसास भी नहीं होता कि इस व्यक्ति ने किसी मादक पदार्थ का सेवन किया है। आज की चकाचौध भे जीवन में हम इतने स्वार्थी हो गए हैं कि हमें यहां तक ख्याल नहीं रहता कि हमारा बच्चा किस रास्ते पर जा रहा है कोई परवाह नहीं, बस बच्चे कि ख्वाहिशें पूरी करते जा रहे हैं। आज हमे पैसे कि लालच ने इतना अंधा कर दिया है कि हम अपने लक्ष्य से अनवरत भटक रहे हैं। अत: हमे हमारे पुरे समाज को एवं फिर हमारे इस पूर्ण सुन्दर श्रीगंगानगर को फिर से पुरे भारत को निगल जाऐगी फिर हमारा दुनियां में भी कोई अस्तित्व नहीं रह जाऐगा। अत: हमे मिलकर इस दिशा में समुचित कदम उठाने होंगे।

इसी क्रम में, मनोरोग विशेषज्ञ डॉ. के.एस. राणा ने बताया कि किशोर एवं युवा पीढी में नशे की बढ रही प्रवृति का प्रमुख कारण शिक्षण संस्थाओं में उचित मार्गदशर्न न करना भी है अत: इस हेतु शिक्षण संस्थाएं समय-समय पर किशोर एवं युवा पीढी का समुचित मार्गदशर्न करते रहना चाहिए।

इसी क्रम में, डॉ. बी.एल. सैनी के अनुसार नशे के रूप में एलकोहल के अत्यधिक सेवन से लीवर, स्नायुतंत्र दृष्टिहीनता एवं गुटका, पान-मसाला, सिगरेट खैनी आदि के सेवन से मुँह व फेफडे का कैंसर तक हो सकता है अत: आईए हम सभी परिवार, समाज एवं प्रशासन मिलकर इस नशे रूपी दिमक को इस संसार से हमेशा के लिए मुक्ति प्रदान करायें।

**वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में नशा प्रवृति दशा एवं दिशा -**

मादक पदार्थों यानी नशे के सेवन की समस्या वैश्विक स्तर पर भयानक रूप से फैल चुकी है। इस वर्ष के अंतरराष्ट्रीय नशा निषेध दिवस का विषय है- पीपुल फर्स्ट : स्टाप स्टिग्मा एंड डिस्क्रिमिनेशन, स्ट्रेंथेन प्रिवेंशन (कलंक एवं भेदभाव रोकें, रोकथाम बढ़ाएं)। नशीली दवाओं के दुरुपयोग और अवैध तस्करी को रोकने के लिए प्रत्येक वर्ष 26 जून को अंतरराष्ट्रीय नशा निषेध दिवस मनाया जाता हैं। नशे की समस्या की भयावहता: यूएन ऑफिस ऑन ड्रग्स एंड क्राइम (यूएनओडीसी) की वर्ल्ड ड्रग रिपोर्ट-2022 के अनुसार वर्ष 2020 में दुनिया भर में 15-64 आयु वर्ग के लगभग 28.40 करोड़ लोग नशीली दवाओं का उपयोग कर रहे थे, जो पिछले दशक की तुलना में 26 प्रतिशत अधिक है। इस रिपोर्ट के अनुसार, युवा अधिक मादक दवाओं का उपयोग कर रहे हैं। कई देशों में इनका उपयोग पिछली पीढ़ी की तुलना में बढ़ गया है। इस रिपोर्ट के अनुसार साल 2020 में दुनिया भर में 1.12 करोड़ लोग ड्रग्स के इंजेक्शन का उपयोग कर रहे थे। इनमें से आधे लोग हेपेटाइटिस सी से पीड़ित थे। 14 लाख एचआईवी से ग्रस्त थे। 12 लाख ऐसे थे, जो दोनों समस्याओं से पीड़ित थे। इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता है कि नशा एक गंभीर समस्या है, जो दुनिया भर में बड़ी संख्या में लोगों को प्रभावित करती है।वर्ष 2018 के दौरान नेशनल ड्रग डिपेंडेंस ट्रीटमेंट सेंटर, गाजियाबाद द्वारा एक राष्ट्रीय सर्वेक्षण आयोजित किया गया था। इससे भारत में मादक पदार्थों के उपयोग और रुझान के बारे में पता चला। इसके अनुसार, तब देश में 10 से 17 वर्ष की आयु के 6.06 प्रतिशत बच्चे और किशोर शराब, भांग, अफीम, इनहेलेंट, कोकीन और कई प्रकार के उत्तेजक एवं मतिभ्रम दवाओं के सेवन में लिप्त पाए गए थे। जबकि 18 से 75 वर्ष की आयु के वयस्कों में यह आंकड़ा 24.71 प्रतिशत था। देश में नशीली दवाओं के बढ़ते दुरुपयोग को रोकने और लोगों को नशे की गंभीर समस्या से बाहर निकालने की हम सबकी सामूहिक जिम्मेदारी है। 15 अगस्त, 2020 को नशा मुक्त भारत अभियान शुरू किया गया। इस अभियान में भारत के 272 जिलों को शामिल किया गया जिनमें 10 जिले हरियाणा के हैं। इसके तहत महिलाओं, बच्चों, शैक्षणिक संस्थानों, नागरिक संगठनों आदि जैसे हितधारकों की भागीदारी पर विशेष जोर दिया जाता है। एक बड़े समुदाय तक पहुंचने में आंगनबाड़ी केंद्रों, आशा कार्यकर्ताओं, एएनएम, महिला मंडलों और महिला स्व-सहायता समूहों की दो करोड़ से अधिक महिलाओं का योगदान भी महत्वपूर्ण रहा है। नशा मुक्त भारत अभियान के तहत देश भर में अब तक 1.19 लाख से अधिक शैक्षणिक संस्थानों ने छात्रों एवं युवाओं को मादक द्रव्यों के सेवन से पैदा होने वाली समस्याओं के बारे में शिक्षित करने के लिए गतिविधियां आयोजित की हैं। मादक पदार्थों की लत को जड़ से समाप्त करने के लिए स्वापक औषधि एवं मन: प्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 (1985 का केंद्रीय अधिनियम-61) के अंतर्गत नियम अधिसूचित किए गए हैं। फिलहाल स्वास्थ्य विभाग,

 ISBN: 978-81-993143-8-2

भारतीय रेड क्रास सोसायटी की प्रदेश एवं जिला स्तरीय संस्थाएं, राज्य बाल परिषद की संस्थाएं एवं स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा नशामुक्ति केंद्रों का संचालन किया जा रहा है।

अत: इसी तरह हमें मादक पदार्थों के सेवन और उनके दुष्परिणामों के बारे में लोगों के बीच जागरूकता फैलाने के लिए व्यापक डिजिटल सामग्री का भी विकास करना चाहिए। हम पाठ्यपुस्तकों और फिल्मों के माध्यम से भी युवाओं और वयस्कों को नशीली दवाओं के जाल में पड़ने के विरुद्ध जागरूक कर सकते हैं। मादक पदार्थों का सेवन रोकने के साथ-साथ हमें इसके पीड़ितों के पुनर्वास के लिए भी एक संपूर्ण दृष्टिकोण अपनाना होगा। नशा मुक्ति के लिए सबसे जरूरी यह है कि हम स्वयं इसके प्रति जागरूक बनें तथा इसे अपनी जिम्मेदारी समझकर अपने तथा अपने समाज के सभी लोगों को इस समस्या से मुक्त कराएं।

### वर्तमान भारत में फैलते नशे की गंभीर एवं चिंताजनक स्थिति-

आप दैनिकचर्या में अक्सर ही ऐसी कहानियाँ सुनते होंगे कि फला आदमी के नशे की लत ने उसके पूरे परिवार को तहस-नहस कर दिया। आपने मुकेश हराने का वो विज्ञापन भी जरूर देखा होगा जिसमें वो तंबाकू सेवन के खतरनाक परिणामों के बारे में चर्चा करते हैं। इसका अंदाजा आप संयुक्त राष्ट्र मादक पदार्थ एवं अपराध कार्यालय (यूएनओडीसी) की विश्व औषधि रिपोर्ट 2022 से लगा सकते हैं। इसके अनुसार दुनिया भर में लगभग 284 मिलियन लोग नशीली दवाओं का उपयोग करते हैं। इसके अनुसार, भारत ने 2019 में विश्व भर में 7% अफीम तथा 2% हेरोइन को ज़ब्त किया है।

भारत दो प्रमुख ड्रग उत्पादक क्षेत्रों- गोल्डन क्रिसेंट (ईरान-अफगानिस्तान-पाकिस्तान) और गोल्डन ट्रायंगल (थाईलैंड-लाओस-म्याँमार) के बीच स्थित है, जो इसे अवैध मादक पदार्थों की तस्करी के लिये संवेदनशील बनाता है। इस रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि भारत दुनिया के सबसे बड़े अफ़ीम बाज़ारों में से एक है। यहाँ की 10 फीसदी से अधिक आबादी अवसाद, न्यूरोसिस और मनोविकृति सहित मानसिक विकारों से पीड़ित है। इसके साथ ही प्रत्येक 1000 में से 15 व्यक्ति नशीली दवाओं का सेवन करते हैं और प्रत्येक 1000 में से 25 लोग क्रोनिक अर्थात स्थायी शराब सेवन के शिकार हैं। भारत में मनोरोग और नशा मुक्ति बिस्तर की उपलब्धता आवश्यक संख्या का केवल 20% है। इस प्रकार, देश भर में 80% मनोरोगी और नशा की समस्या से पीड़ित रोगियों को अस्पताल की सुविधा भी मयस्सर नहीं होती।

राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो (एनसीआरबी) की रिपोर्ट के अनुसार नशे की लत के कारण वर्ष 2021 में 10 हजार से अधिक लोगों ने अपने जीवन की लीला को समाप्त

कर लिया। एनसीआरबी की रिपोर्ट में महाराष्ट्र पिछले कुछ सालों में लगातार इस मामले में सबसे ऊपर रहा है। इस राज्य में साल 2021 में 2,818 मामले दर्ज किए गए हैं। वहीं मध्य प्रदेश इस मामले में दूसरे स्थान पर है, जहां कुल 1,634 लोगों की मौत इस कारण हुई। कर्नाटक में जहां 2015 में 100 से कम मामले थे, वहां अधिक वृद्धि देखी गई है। अन्य तीन राज्यों में भी लगातार वृद्धि देखी गई है। नशे के कारण होने वाली मौतों की गंभीरता को समझते हुए केंद्र सरकार ने 1995 में ऐसी मौतों के आंकड़े को अलग करना शुरू किया था, जब नशे के कारण 745 आत्महत्याएं हुई थी। 2016 के बाद से नशे से प्रेरित आत्महत्याओं में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। प्रत्येक वर्ष कम से कम 1,000 और मामले जुड़ते जा रहे हैं।

अगस्त 2020 में नशे की समस्या से निपटने हेतु इसी मंत्रालय के द्वारा भारत के सबसे संवेदनशील 272 जिलों में नशा मुक्त भारत अभियान की शुरूआत भी की गई। इसके साथ ही भारत सरकार नशे के आदी लोगों के लिए नशा मुक्ति केंद्र और पुनर्वास सुविधाएं भी मुहैया करा रही है। विगत तीन वर्षों में सरकार ने देश के कई राज्यों में 89000 फुटबॉल मैदान के आकार के भाँग और अफीम उत्पादक क्षेत्रों को नष्ट कर दिया है। सरकार का लक्ष्य 2047 तक भारत को "मादक पदार्थ मुक्त" बनाना है।

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री श्री थावरचंद गहलोत ने 26 जून 2021 को नशीली दवाओं के दुरुपयोग और अवैध तस्करी के खिलाफ अंतर्राष्ट्रीय दिवस के अवसर पर नशा मुक्त भारत अभियान (NMBA) के लिए वेबसाइट लॉन्च की, जो मादक द्रव्यों के सेवन से मुक्त एक स्थायी दुनिया के लक्ष्य को प्राप्त करने में कार्रवाई और सहयोग को मजबूत करने के लिए दुनिया भर में मनाया जाता है।

नशा मुक्त भारत अभियान (एनएमबीए) का शुभारंभ 32 राज्यों / केंद्र शासित प्रदेशों के 272 जिलों के लिए है, जिन्हें देश में दवाओं के उपयोग के मामले में सबसे कमजोर के रूप में पहचाना गया है। सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय द्वारा किए गए राष्ट्रीय व्यापक सर्वेक्षण के अनुसार, देश में 60 मिलियन से अधिक ड्रग उपयोगकर्ता हैं, जिनमें से बड़ी संख्या में उपयोगकर्ता 10-17 वर्ष के आयु वर्ग में हैं।

**नशा मुक्त भारत अभियान का उद्देश्य -**

जनता तक पहुंचना और विभिन्न गतिविधियों के माध्यम से मादक द्रव्यों के सेवन के बारे में जागरूकता फैलाना है:

 ISBN: 978-81-993143-8-2

- जागरूकता सृजन कार्यक्रम करना।
- उच्च शिक्षण संस्थानों, विश्वविद्यालय परिसरों और स्कूलों पर ध्यान देना
- समुदाय तक पहुंचना और आश्रित आबादी की पहचान करना
- अस्पतालों और पुनर्वास केंद्रों में परामर्श और उपचार सुविधाओं पर ध्यान केंद्रित करना जिन्हें जियो-टैग किया गया है
- सेवा प्रदाताओं के लिए क्षमता निर्माण कार्यक्रम का संचालन करना।
- नशे से सम्बन्धित अन्य कार्यक्रम का संचालन करवाना।

**भारत एवं राज्य सरकार व अन्य संगठन, संस्थाओं द्वारा नशा-मुक्ति हेतु प्रमुख योगदान-**

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय को नशीली दवाओं की मांग को कम करने के लिए अनिवार्य किया गया है। यह समस्या की सीमा का आकलन, निवारक कार्रवाई, व्यसनियों के उपचार और पुनर्वास, सूचना के प्रसार और जन जागरूकता सहित नशीली दवाओं के दुरुपयोग की रोकथाम के सभी पहलुओं का समन्वय और पर्यवेक्षण करता है और नशामुक्ति केंद्रों को चलाने के लिए अनिवार्य है। नशा मुक्त भारत अभियान देश भर में 500 से अधिक स्वैच्छिक संगठनों की भागीदारी के साथ संचालित है, जिन्हें सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय की ड्रग डिमांड रिडक्शन (एनएपीडीडीआर) योजना के लिए राष्ट्रीय कार्य योजना के तहत वित्तीय सहायता दी जाती है।

ये गैर-सरकारी संगठन नशीली दवाओं से मुक्त भारत अभियान के कार्यान्वयन में सक्रिय रूप से शामिल हैं। इन संस्थानों/संगठनों के लगभग 8000 युवा स्वयंसेवक और आउटरीच कार्यकर्ता घर-घर, गांव-गांव और आस-पास के इलाकों आदि में जाकर लोगों को नशीली दवाओं के दुरुपयोग के दुष्प्रभावों के बारे में शिक्षित कर रहे हैं और मादक द्रव्यों के सेवन के पीड़ितों के पुनर्वास में सहायता कर रहे हैं।

नशा मुक्त भारत अभियान वेबसाइट अभियान और इसकी गतिविधियों के बारे में विस्तृत जानकारी प्रदान करती है, फोटो और वीडियो गैलरी के माध्यम से झलकियां देती है, आईईसी संसाधन सामग्री और ड्रग डिमांड में कमी के उद्देश्य से मंत्रालय द्वारा स्थापित संस्थानों पर जानकारी प्रदान करती है।

**संस्थान-** सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय उन संगठनों का समर्थन करता है जो मादक द्रव्यों के सेवन, क्षमता निर्माण, उपचार और पुनर्वास पर निवारक शिक्षा और जागरूकता पैदा करने के लिए काम करते हैं। ये संगठन हैं:

**सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय द्वारा समर्थित संस्थान**

- **GEO स्थान**: मादक पदार्थों की लत परामर्श, उपचार और पुनर्वास और अन्य सुविधाएं प्रदान करने वाले मंत्रालय समर्थित संस्थानों को उनकी सेवाओं को सुलभ और पता लगाने में आसान बनाने के लिए जियो-टैग किया गया है
- **सामुदायिक सहकर्मी नेतृत्व हस्तक्षेप :** प्रारंभिक निवारक शिक्षा के लिए युवा स्वयंसेवकों द्वारा समर्थित समुदाय के साथ काम करना, विशेष रूप से समुदाय में कमजोर किशोरों और युवाओं के लिए
- **आउटरीच एंड ड्रॉप इन सेंटर :** दवा आश्रितों के लिए उपचार और पुनर्वास सेवाओं के लिए रेफरल और लिंकेज प्रदान करने के साथ-साथ स्क्रीनिंग, मूल्यांकन और परामर्श की सुविधाएं प्रदान करते हैं
- **व्यसनियों के लिए एकीकृत पुनर्वास केंद्र** : नशा मुक्ति केंद्र हैं जिनमें नशीली दवाओं पर निर्भर व्यक्तियों के लिए परामर्श और उपचार की इनपेशेंट सुविधाएं हैं

**सामान्य अर्थ में...नशा क्या है ?**

किसी सामान्य मनुष्य की मानसिक स्थिति को बदलकर नींद या मदहोशी की हालत में ला देने वाले पदार्थ नारकॉटिक्स, ड्रग्स या नशा कहलाते है। मॉर्फिन, कोडेन, मेथाडोन, फेंटाइनाइल आदि नारकॉटिक्स चूर्ण (पाउडर), गोली (टैब्लेट) और सुई (इंजेक्शन) के रूप में मिलते हैं। ये मस्तिष्क और आसपास के ऊतकों (टिशू) को उत्तेजित करते हैं। किसी मरीज को दर्द से राहत दिलाने के लिए कभी-कभी चिकित्सक अल्प मात्रा में इनका उपयोग करते हैं। केवल मौज-मजे के लिए पारंपरिक नशे (ज़र्दा, बीड़ी, सिगरेट, चिलम, गाँजा, भाँग, चरस, गांजा, अफीम, छिपकली की पूँछ, शराब आदि), सिंथेटिक ड्रग्स (स्मैक, हीरोइन, आईस आदि), ब्राउन शुगर, सल्फ़ी, मेडिकल नशा (मोमोटिल, कैरीसोमा, आयोडेक्स, कफ सिरप आदि), स्निफर्स (लिक्विड व्हाइट फ्लूड, पेट्रोल सूँघना, पंक्चर सेल्यूशन को सूँघना आदि) आदि का बार-बार उपयोग करना लत बनकर बेचैनी, पागलपन या मौत का कारण भी हो सकता है।

**<u>नशा करने के प्रमुख कारण -</u>**

**A. सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक कारण**

i. शिक्षा एवं मार्गदर्शन की उचित कमी, चिन्ता, तनाव/परेशानी, दर्द पर मुक्ति पाना, संधर्ष, दुख, चिन्ता और दर्द, अवसाद, दर्द के हमले होना।

**B. सामाजिक और सांस्कृतिक वातावरण-**

I. पारिवारिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं नैतिक शिक्षा संस्कारों की उचित कमी का होना।, आसानी से इस्तेमाल, पारिवारिक गाली-गलौच, नशीले पदार्थो की प्राप्ति, दर्द और अविश्वास,

 ISBN: 978-81-993143-8-2

दर्द होना, भारी तनाव, तनाव से मुक्ति, खालीपन, संगती का असर, इन सब कारणों से मनुष्य को नशे की लत लग सकती है,सिनेमा का प्रभाव

**C. जैव विज्ञानिक कारण -**

1 सहनशीलता, नशे का अधिक उपयोग, नशे की विचारधारा, नशे सम्बधी पदार्थो की खुलेआम बिक्री, मॉर्डन बनने के लिए

**D. सांस्कृतिक कारण -**

1 लत के जिम्मेदान कारण, खाने के अतिरिक्त समय में पीना, चिन्ता और दबाव से मुक्ति पाने के लिए पीना, एकान्त में पीना, अकेले में पीना, पाश्चात्य संस्कृति।

**E. अन्य।**

नशीली दवाओं की अवैध तस्करी- पडोसी राज्यों से लेकर दूर-दराज के इलाकों से नशीली वस्तुओं और दवाओं की तस्करी करने वाले माफियाओं की इस व्यापार में अच्छी खासी कमाई हो रही है, ऐसे में बिक रही नशीली दवाओं सहित अन्य नशीली वस्तुओं का क्षेत्र के युवा भारी मात्रा में सेवन कर रहे हैं, ऐसा नहीं है कि रोकथाम के लिए बने विभागों को जानकारी न हो लेकिन कार्यवाही के नाम पर केवल खानापूर्ति की जा रही है। दर्द और एलर्जी से राहत दिलाने के लिए बनाई गई दवाईयों का उपयोग युवा वर्ग नशे के लिए करने लगा है, पेंटविन टजेक्शन कोरेक्स सीरप और स्पाजमों प्राक्सीवन कैप्सूल मिल जाते हैं, स्पाजमो प्राक्सीवान कैप्सूल पेट दर्द से राहत की दवा है। इसकी कीमत 40 से 50 रूपए का 8 पीस का पत्ता आता है जिसको मार्किट के मेडिकल स्टोर में 100 से 120 रू तक में बेचा जा रहा है। युवा एक साथ चार से पांच कैप्सूल खाकर इसका उपयोग नशे के लिए कर रहे हैं।

**नशा प्रवृति के प्रमुख लक्षण -**

- मूड/स्वभाव में अचानक बदलाव आना, भूख न लगना, उनींदेपन या अनिन्द्रा के दौरे आना, शरीर में दर्द रहना और उबकाई आना, शौचालय में घंटों बिताना, नौकरी या खेलकूद मनोंरंजन गतिविधियों में रूचि न होना, पैसे की बढती मांग/चौरी करना, अर्थात **व्यक्ति द्वारा दैनिकचर्या के प्रमुख कार्य न प्राथमिकता से न करके अन्य लक्ष्य वहीन कार्यो में रूची एवं ध्यान रखनाा**

बुद्धि-विवेक हरे नशा, ताकत लेता छीन। पात्र हँसी का बनाता, मानव होता दीन।।

**नशा करने के दुष्परिणाम -**

नशा करने के बाद आँखें लाल होना, जबान तुतलाना, पसीना आना, अकारण गुस्सा आना या ख़ुशी होना, पैर लड़खड़ाना, शरीर टूटना, नींद-भूख कम होना, बेमतलब की बातें करना, घबराहट

होना, उबासी आना, दस्त लगना, दौरे पड़ना, संक्रामक बीमारियों और स्वास्थ्य खराब होना, एडस, शिक्षण संस्थाओं में अनुपस्थित रहना, अपने व्यवसाय को क्षति पंहुचाना, नशीले पदार्थो का व्यसनी, चोरी, बलात्कार हत्या, जैसे अपराध करना, गरीबी का बढना, घरेलू हिन्सा, भविष्य नष्ट होना, अत्यधिक निराषा एवं खराब सेहत के कारण, दुर्भागयवंश मौत का चुनाव करना, आदि दुष्प्रभाव नशाखोर व्यक्ति में देखे जा सकते हैं।

**चुनौतियां –** विश्व में भारत सबसे युवा आबादी वाला देश है इसमें 65 प्रतिशत के अधिक जनसंख्या 35 वर्ष से कम आयु की है और इस कारण इन युवाओं को देश के सर्वांगिण विकास में अपनी महती भूमिका के निर्वहन करवाना हम सब के लिए एक बहुत बडी चुनौती है क्यौकि हमारे देश में सभी को समुचित शिक्षा, समुचित नैतिक शिक्षा, संस्कार, एवं सभी को उचित मार्गदशर्न के अभाव के चलते हमारे देश के युवा लक्ष्य विहीन होकर गलत आदतों/व्यस्नों के शिकार हो जाते हैं। अत: हमें इन नकारात्मक चुनौतियों का समुचित सामना करने की आवश्यकता है।

**नशे से गुजरती अंधकारमय मौत-रूपी गलियां**

श्रीगंगानगर जिले में नशे से गुजरती अंधकारमय मौत रूपी गलियों में, नशा पाकिस्तान के ड्रोन के द्वारा, नशा सप्लाई एवं पंजाब से तस्करी होकर सीमावृति ब्लॉक श्रीगंगानगर, सादुलशहर, करणपुर, पदमपुर, रायसिंहनगर, सुरतगढ से अनुपगढ जिले एवं हनुमानगढ जिले से गुजरती हुई आगे बढ कर अनेक जिलों में प्रवेश कर यहां के लोगों की जिंदगी को निगल रही है।

**नशा प्रवृति रोकने के सामान्य नैतिक उपाय –** अपने परिवार, समाज, शिक्षण संस्थाओं, एवं अन्य संस्थाओं/स्थानों पर सम्बन्धित सभी व्यक्तियों द्वारा किशोरों, युवाओं, को नशा प्रवृति रोकने के क्रम में उचित मार्गदर्शन, नैतिक, संस्कार, शिक्षा, आदि का अनवृत प्रचार प्रसार करवाना, अपने बच्चों पर नियमित समय एवं ध्यान देना, संगती का ध्यान रखना, बच्चों को हमेशा अपने विश्वास में रखना, शिक्षण संस्थाओं में नशा प्रवृति के दुश्प्रभावों की नियमित शिक्षा प्रदान करना, शिक्षण संस्थाओं एवं युवाओं के ठहरने के स्थान/सामान की नियमित जांच करना।

**नशा प्रवृति रोकने के प्रमुख प्रशासनिक उपाय –** शासन – प्रशासन मादक पदार्थों पर रोक लगाकर नशे से हो रही हानि को घटा सकता है। नशे की लत घटाने और मिटाने का एक प्रभावी उपाय ग्राम्यांचलों में स्वस्थ्य मनोरंजन के साधन उपलब्ध कराना है। गाँव-गाँव में योग कक्षाएँ, व्यायाम शालाएँ, अखाड़े, वाचनालय, पुस्तकालय, कला तथा साहित्य की कार्यशालाएँ निरन्तर चलें तो आम जन निरंतर व्यस्त रहेंगे और नशे की प्रवृत्ति पर अंकुश लग सकेगा। ग्राम्य अंचलों की कलाओं को प्रोत्साहन देकर रामलीला, नौटंकी, आल्हा गायन, कजरी गायन, फाग गायन आदि की

 ISBN: 978-81-993143-8-2

प्रतियोगिताएँ कर प्रशासन द्वारा पुरस्कृत किया जाए तो इनकी तैयारी में व्यस्त रहने से आम लोगों में नशे की और उन्मुख होने का चाव घटेगा।

मादक तत्वों का नहीं, उत्पादन हो और।
शासन चेते नीतियाँ, बदले ला नव दौर।।
ग्राम्य कला-साहित्य की, कक्षाएँ हों रोज।
योग और व्यायाम की, प्रतिभाएँ लें खोज।।
नशा नाश-पैगाम है, रहें नशे से दूर I
नशा दूत है मौत का जो नादां करता नशा, आँखे रहते सूर II

**नशा करने वाले की पहचान-**

पैसों की बढ़ती माँग, पुराने दोस्त छोड़ कर नये दोस्त बनाना, अकेला रहने की कोशिश करना, घर में नई किस्म की दवाएं या खाली इंजेक्शन मिलना आदि से नशे की आदत का अनुमान लगाया जा सकता है।

**नशा करने का कारण-**

नशीला पदार्थ खून में जाते ही आदमी को खुशी और स्फूर्ति की अनुभूति कराता है। प्राय: लोग अन्य नशैलची की संगत में आकर दबाव या शौकवश नशा करने लगते हैं। मानसिक तनाव, अपमान, अभाव, प्रताड़ना, सजा, उपहास, द्वेष, बदला आदि स्थितियाँ नशा करने का कारण बन जाती हैं। नशे की प्रवृत्ति बढ़ने का मुख्य कारण नशीले पदार्थ का सुलभता से मिल जाना है।

**पाश्चात्य प्रभाव के कारण नशा प्रवृति की आदतें औरतों में निरंतर बढना भारतीय संस्कृति के लिए दुर्भाग्यपूर्ण-**

पहले सामान्यत: पुरुष ही नशा करते थे किन्तु अब लड़कियाँ और महिलाएँ भी पीछे नहीं हैं। पढ़ाई, नौकरी और उससे उपजे तनाव, खुद को आधुनिक दिखाने या बुरी संगत के कारण नशा करती महिला आसानी से दैहिक शोषण का शिकार बन जाती है।

न्यू इंग्लैंड जर्नल ऑफ मेडिसन में छपे शोध के अनुसार धूम्रपान के कारण पुरुषों की ही तरह महिलाएं भी बड़ी संख्या में मर रही हैं। सिगरेट का अधिक सेवन करने से वर्ष २००० से २०१० के बीच धूम्रपान करने वाली महिलाओं में फेफड़े के कैंसर से मौत की आशंका सामान्य लोगों की तुलना २५ गुना अधिक हो गई। शोध २० लाख से अधिक अमरीकी महिलाओं से एकत्र जानकारी पर आधारित है।

**आज निरंतर नशा नाश का दूत बनता जा रहा है-**नशा किसी भी प्रकार का हो, एक सामाजिक अभिशाप है। नशा करना और कराना अपराध है। कभी भी किसी भी कारण से धूम्रपान, सुरापान अथवा अन्य नशा न करें। अपनी और परिवार की सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति को भारी नुकसान

होता है । आजकल बच्चे, किशोर, युवा, प्रौढ़, वयस्क वृद्ध सभी नशे की चपेट में हैं । धूम्रपान स्वास्थ्य के लिए हानिकारक और कैंसर जैसी जानलेवा बीमारी का कारण है। यह चेतावनी सभी तम्बाकू उत्पादों पर अनिवार्य रूप से लिखी होने और सभी को पता होने पर भी लोग इसका सेवन बहुत चाव से करते हैं । इनके अधिक सेवन से व्यक्ति पागल या विक्षिप्त हो जाता है। इससे अल्सर होता है, गले और पेट को जोड़ने वाली नली में सूजन आ जाती है और बाद में कैंसर भी हो सकता है । गांजा -भांग आदि पदार्थ मनुष्य के मस्तिष्क पर बुरा असर डालते हैं ।

नशा नाश का दूत है, असमय लाता मौत।
हँसी-ख़ुशी-सुख छीन ले, लत श्वासों की सौत।।

**नशा प्रवृति अध्ययन एवं प्रचार प्रसार का महत्व -**बालक के चौमुखी विकास अर्थात शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आध्यात्मिक एवं बौद्धिक विकास में परिवार का प्रमुख एवं समाज व अन्य का अनर्वत योगदान रहता है बालक के विकास ने परिवार, समाज व अन्य सम्बधी का वातावरण स्वछ, सौम्य, संस्कारी होना अनिवार्य है। और यदि बालक को नियमीत उक्त अनुसार वातावरण मिलता है तो बालक में सत्य शांती, उदारता, कर्मठता, अनुशासन, नैतिकता, सहयोग, समन्वय आदि गुणों को प्राप्त कर बालक अपने परिवार समाज व देश के लिए अपना सर्वांगिण विकास करते हुए अपने लक्ष्य की ओर अनवरत आगे बढता है। अत: इस दिशा में हम बालक को उचित दशा व दिशा नियमित प्रदान करते हैं तो बालक किसी भी हालत में बुरी आदतों/व्यसनों में न पढकर अपने निश्चित लक्ष्य को शत-प्रतिशत प्राप्त करने की ओर तत्पर रहते हैं।

**उक्त विषय के अध्ययन का प्रमुख ऑचित्य -** नशा प्रवृति वैश्विक समस्या के साथ-साथ भारत की भी प्रमुख एवं गंम्भीर समस्या रही है ओर हमारे सीमावृति जिले श्रीगंगानगर की समस्या तो और भी भयानक रूप, वर्तमान में अनवृत ले रही है। अत: यहां की अन्धकारमय मौत-रूपी गलियों में दौडते नशे से यहां के किशौर, युवा पीढी हर दिन इन भयंकर नशों से मौत के मुँह में जा रही है। अत: इस कारण इस भयानक गंभीर समस्या से निजाद के क्रम में उक्त अध्ययन करने का प्रमुख औचित्य रहा है।

**अध्ययन का उदेश्य -** उक्त शोध आलेख का प्रमुख उदेश्य, श्रीगंगानगर जिले में, नशा करने वाले एवं नशा न करने वाले विभिन्न सामाजिक, आर्थिक स्तर वाले किशोर-युवाओं के समायोजन का अध्ययन करना है।

**अध्ययन की परिकल्पना -** नशा करने वाले तथा न करने वाले विभिन्न सामाजिक आर्थिक स्तर वाले किशौर-युवा के समायोजन में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।

**सम्बन्धित सहित्य का पुनरावलोकन -**

 ISBN: 978-81-993143-8-2

**A भारत में किये गये शोध कार्यो का पुर्नावलोकन-**

1 श्रीवास्तव ज्योति और श्रीवास्तव, शुशमा (2002) ने पारिवारिक वातावरण का किशौरों की शैक्षिक रूची एवं आकांक्षा स्तर पर पढने वाले प्रभाव का अध्ययन विषय

2 माली, राजकुमार (2002) ने - सम्पन एंव विपन्न वर्ग के किशोर युवाओं की समायोजन क्षमता, आत्मसम्प्रत्य एवं विद्यालयी निष्पति का तुलनात्मक अध्ययन

**B विदेश में किये गये शोध कार्यों का पुर्नावलोकन-**

1 मार्टिन, रॉबिन एवं अन्य सदस्य (2012) में सामाजिक सुरक्षा अनुपूरक परिदान और कार्य के नये तरीके और समायोजन।

2 हारिंन्स, जेड एवं अन्य (2011) में समायोजन और छोटे समूहों में नेतृत्व का उदय।

3 कैम्पवाल, ए. (2016) अस्थमाग्रस्त 8 से 12 वर्ष के बच्चों में पारिवारिक वातावरण कारक एवं स्व प्रबन्ध अभ्यास में सम्बन्ध।

उक्त अनुसार भारत एवं विदेशों में किये गये उक्त शोध आलेख व सम्बधी साहित्य का अध्ययन कर पुर्नावलोकन किया गया।

अध्ययन का सीमांकन

1 प्रस्तुत शोध आलेख श्री गंगानगर जिले के किशोर, युवा वर्ग तक सिमित रखा गया इस शोध में 120 किशोर युवा वर्ग को लिया गया।

2 इसमें, नशीले पदार्थ जैसे- बीडी, सिगरेट, खैनी, गुटका, तम्बाकू, शराब, नशे की गोलियां, नशे के इंजेक्शन, चिटा, अफीम, गांजां, मैडिकल नशा इनमें से एक या एक से अधिक नशे करने वाले का अध्ययन किया जाऐगा

शोध विधि -

प्रस्तुत शोध में उदेश्य एवं परिकल्पनाओं को ध्यान में रखते हुए सर्वेक्षात्मक शोध विधि एवं 120 किशोर युवा वर्ग के पिछले वर्ष के प्राप्त अनुभवों के आधार पर मध्य, मध्यवान, मध्यमान, एवं मानक विचलन , के परिणामों को देखकर इसका दत्त संकलन का परिणाम तैयार किया गया।

**न्यादर्श -**

1 न्यादर्श की संख्या 120 किशोर युवा (16 से 25 वर्ष) का चयन किया जाऐगा जिसमें 60 नशा करने वाले तथा 60 नशा नहीं करने वाले छात्रों का चयन किया जाऐगा।

2 यादृच्छिक प्रतिचयन विधि।

3 न्यादर्श का प्रकार- नशा करने वाले एवं न करने वाले विभिन्न सामाजिक , आर्थिक स्तर के किशौर युवा विद्यार्थी।

4 नशे के प्रकार - सामान्य प्रचलन के एंव मेडिकल नशे सभी।

**निष्कर्ष -**

1 उक्त मध्यवानों का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि नशे करने वाले उच्च सामाजिक आर्थिक स्तर वाले किशोर युवा छात्र के समायोजन का स्तर नशा नहीं करने वाले छात्रों से बहुत निम्न है।

2 उक्त मध्यवानों का अवलोकन करने से यह स्पष्ट होता है कि नशा करने वाले मध्यम सामाजिक आर्थिक स्तर वाले किशोर युवा छात्र के समायोजन का स्तर नशा नहीं करने वाले किशोरों से बहुत भिन्न हैं।

3 उक्त मध्यवानों का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि नशा करने वाले निम्न सामाजिक आर्थिक स्तर वाले किशोर युवा छात्र के समायोजन का स्तर नशा नहीं करने वाले छात्रों से बहुत निम्न है।

अत: निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि (प्रथम) दोनों छात्रों के मूल प्राप्तांको के गणना के आधार पर नशा करने वाले उच्च सामाजिक आर्थिक स्तर वाले छात्रों के समायोजन का स्तर नशा नहीं करने वाले छात्रों के बहुत निम्न है। (द्वितीय) नशा करने वाले मध्यम आर्थिक स्तर वाले छात्रों के समायोजन का स्तर नशा नहीं करने वाले छात्रों से बहुत निम्न है। (तृतीय) नशा करने वाले निम्न आर्थिक स्तर वाले छात्रों के समायोजन का स्तर नशा नहीं करने वाले छात्रों से बहुत निम्न है।

**सार/मानवता के लिए निहित सन्देश -** अत: हम सार रूप में उक्त अध्ययन सर्वेक्षण एवं विश्लेषण के आधार पर कह सकते हैं कि इस मानवता और इस धरा को स्वच्छ, सुन्दर, सौम्य, और सर्वणिम बनाने है। तो, हम सब, जिसमें परिवार का प्रत्येक सदस्य, समाज का प्रत्येक नागरिक, शिक्षण संस्थाओं, सामाजिक संस्थाओं, प्रशासनिक संस्थाओं, निजी संस्थाओं, आदि अर्थात इस धरा पर इन सभी का प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से अनवरत नैतिक, शैक्षिक, संस्कारित एवं मार्गदर्शन के रूप में अहम योगदान अनिवार्य है। तभी हम हमारे राजस्थान के पंजाब/धान का कटोरा/किनू का उपवन/हर दिल अजीज/सम्पूर्ण राज्य के लिए प्रत्येक दृष्टि से आईडियल, यह हराभरा स्वच्छ, सुन्दर, सौम्य और सर्वणिम जिला श्रीगंगानगर अपने नाम और काम से जाना जाता रहा है.....। और भविष्य में अनवरत इन्हीं विशेषताओं से जाना जाता रहे। अत: आईए हम सब परिवार,समाज, प्रशासन एवं देश ही नही वैश्विक स्तर पर इस नशे को जड से समाप्त कर इस महान यज्ञ में अपनी-अपनी अहम भूमिका का अनवरत करते रहें।

**नशामुक्ति हेतु स्थानीय व अन्य प्रमुख परामर्श निदान एवं उपचार केन्द्र व हैल्पलाईन न0**

1 नशामुक्ति केन्द्र यहां सभी प्रकार के नशे की मुक्ति योग, ध्यान, मेडिटेशन, आदि द्वारा की जाती है हैल्पलाईन न0 9131190455 /7354920406

2 तपोवन नशामुक्ति केन्द्र श्रीगंगानगर हैल्पलाईन न0- 9782752980

 ISBN: 978-81-993143-8-2

3 पुर्नवास केन्द्र जयपुर हैल्पलाईन न0- 09024188411

4 व्यसन उपचार केन्द्र जयपुर हैल्पलाईन न0- 09785909644

5 मानसिक रोगों का चिक्त्सिालय हैल्पलाईन न0 09414320061

6 नशा तस्करी हैल्पलाईन न0 18001801852 इस नम्बर पर नशे से सम्बन्धीत तस्करी करने वाले की सूचना लिखित में इस नम्बर पर दे सकते हैं।

7 एसएमएस मेडिकल कॉलेज जयपुर, यहाँ राजस्थान से किसी भी प्रकार के नशे के गंभीर रोगियों का निदान एवं उपचार यहाँ नियमानुसार भर्ती कर किया जाता है।

8 अन्य सभी स्थानिय पंचायत की स्वास्थ्य विभाग वैबसाईट, हैल्पलाईन नम्बर, स्थानिय स्वास्थ्य केन्द्र ब्लॉक के राजकीय चिकित्सालय, आयुर्वेदिक चिकित्सालय संभाग के राजकीय चिकित्सालय, आयुर्वेदिक चिकित्सालय, एवं राज्य की राजधानी में राजकीय चिकित्सालय व अन्य आयुर्वेदिक चिकित्सालय एवं जोधपुर में स्थित एमस एवं भारत के बडे महानगरों में स्थित एमस एवं अन्य निजी संस्थाएं सामाजिक संस्थाओं से नशामुक्ति के क्रम में यथा निदान, उपचार एवं मार्गदशर्न प्राप्त कर नशे से मुक्ति प्रत्येक व्यक्ति प्राप्त कर सकता है एवं परिवार, समाज व देश को नशे से मुक्त करवा कर इस महान यज्ञ में अपनी आहुती अनवरत प्रदान करवा सकता है।

**संदर्भग्रन्थ सूची**

1. ढ़ोढियाल, एस. एवं. पाठक अरविन्द (1990) "शैक्षिक अनुसंधान का विधि शास्त्र", राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, पृष्ठ संख्या 73

2. जफे, जे.एच (1975) नशीली दवाओं की लत और नशीली दवाओं के दुरूपयोग, एल.एस. गुडमैन एण्ड.ए.गिलमैन (एड्स) दफरामैकॉलोजिकल बेसिस ऑफ थेरापेयुटिस, न्यूयॉर्क: मैकमिलन, पीपी २८४-

3. भार्गव, महेश (2007) "आधुनिक मनोवैज्ञानिक परीक्षण + मापन", एच.पी. भर्गव बुक हाउस, आगरा, पृष्ठ संख्या - 463

4. लाल, डॉ. जे.एन.1988 "विकासात्मक मनोविज्ञान', नीलकमल प्रकाशन, गोरखपुर पृष्ठ संख्या- 365

5. माथुर, एस.एस. (2008) "शिक्षा मनोविज्ञान", अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा, पृष्ठ संख्या - 421-

६

# भारतीय क्षेत्रों में गरीबी एक अभिशाप ओर इससे उबरने के आधार

**डॉ जयदेव प्रसाद शर्मा,**
**एसोसिएट प्रोफेसर, भूगोल विभाग,**
**श्री खुशाल दास यूनिवर्सिटी, हनुमानगढ़ (राजस्थान)**

**सार**. – अकुशल कार्यबल के लिए उचित रोजगार के अवसरों का नव सृजन, सतत विकास योजनाकारों एवं प्रशासकों के लिए वर्तमान में एक बड़ी चुनौती साबित हो रही रही है। गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम भारत में रोजगार नियोजन प्रक्रिया के मार्गदर्शक सिद्धांतों में से एक प्रमुख सिद्धांत रहा है। शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों के लिए भारत में गरीबी–विरोधी रणनीति के अध्ययन में तीन व्यापक पहलू सामने आए हैं। समग्र आर्थिक विकास को बढ़ावा देना तथा मानव विकास और गरीबी की त्राषद प्रकृति को संबोधित करने के लिए लक्ष्यजनित कार्यक्रम चलाना। गरीब आबादी को अधिक से अधिक रोजगार के अवसर प्रदान करने से आर्थिक विकास की महती भूमिका को स्पष्ट रूप से जाना गया है। विकास–उन्मुख दृष्टिकोण के द्वारा उन विशिष्ट क्षेत्रों पर ही ध्यान केंद्रित करके उनको मजबूत किया गया है जो गरीब लोगों को विकास प्रक्रिया में स्वतः भाग लेने के लिए अधिकतम अवसर प्रदान करते हैं। स्वास्थ्य, शिक्षा एवं अन्य बुनियादी आवश्यकताओ से संबंधित गरीबी के विभिन्न आयामों को रोजगार नियोजन प्रक्रिया में उत्तरोत्तर रूप में शामिल किया गया है। केंद्र एवं राज्य सरकारों ने भी स्वच्छता, स्वास्थ्य, शिक्षा और अन्य सुविधाओं के प्रावधान के लिए धनराशी आवंटन में भी काफी वृद्धि की है जो गरीबों की आर्थिक क्षमता निर्माण तथा कल्याण को बढ़ावा देते हैं। कृषि– क्षेत्र विकास कार्यक्रमों तथा वनरोपण में भारी निवेश, रोजगार एवं आय के अधिक अवसर प्रदान करते हैं। जिसके लिए विशेष कार्यक्रमों की शुरूआत की गई हैं; लेकिन भारतीय गरीबों के जीवन में कोई अधिक बदलाव नहीं आया है। भारत में ही नहीं सम्पूर्ण जगत में गरीबी वर्तमान की एक गंभीर सामाजिक एवं आर्थिक चिंता का विषय बना हुआ है। गरीबी न केवल दैनिक आवश्यकता पूर्ति में बाधक है, बल्कि भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, अस्वस्थता, अशिक्षा , घरेलु दुर्व्यवहार (गृह–कलेश), भरण–पोषण की परेशानियाँ, बेरोजगारी, नशाखोरी (नशीली दवाइयों का उपयोग) और अन्य नकारात्मक गतिविधियों को जन्म देती है या इनमे योगदान तो पक्का दे सकती है। उपरोक्त चर्चा के आलोक द्वारा मैंने भारत में गरीबी की भयावह वास्तविक स्थिति एवं सरकारी प्रयासों तथा उसके परिणामों पर आप सभी शुधिजनो का ध्यान केंद्रित करने का प्रयास मात्र है।

**प्रस्तावना :–**

**गरीबी समाज के लिए चुनौती कैसे है :–** भारत में व्यवसाय के रूप में मुख्य व्यवसाय हमारी कृषिगत परंपराएं हैं, और कृषकों का सामाजिक और आर्थिक क्रियाकलाप बस उनकी संस्कृति और संसाधनों से जुड़ा हुआ होता है। हमारे पास जो संसाधन उपलब्ध हैं उन संसाधनों का समुचित उपयोग उन्नत स्तर तक आज तक नहीं किया जा सका है। जैसा कि अन्य विकसित देशों में किया जाता है, जैसे मानव–मात्र के सुख की

 ISBN: 978-81-993143-8-2

खातिर विद्युत शक्ति, कोयला, खनिज तेल, प्राक्रतिक गैस और जल संसाधनों का नवीनतम तकनीकों के साथ उपयोग करते हैं। हम भारतवाशी लोगों को दैनिक जीवन में जिन समस्याओं का आमना–सामना करना पड़ता है, उन समस्याओं की पृष्ठभूमि हमारे अल्प तकनिकी विकास के कारण उत्पन्न होती हैं क्यों की हमारे यहाँ पर दुनिया के बहुमूल्य (मूल्यवान) संसाधनों की खोज अभी तक अपूर्ण है, हमारे यहाँ पर इन संसाधनों को खोजा जाना बाकी है। बहुमूल्य संसाधन जैसे की धात्विक संसाधन एवं शक्ति–संसाधन क्रमशः प्लेटिनम (सफेद सोना), सोना, चांदी, एल्युमिनियम, तांबा और लोहा जैसे धात्विक एवं युरेनियम, प्राकृतिक गैस, तेल और कोयला आदि खनिज स्थलों की अभी तक तो ठीक से जाँच (पहचान) भी नहीं की जा सकी है, तो संसाधनों का उत्पादन एवं उनका उपयोग संभव ही नहीं हो सका है। विशेषज्ञों द्वारा देश में स्थित संसाधनों के सभी भंडारों का पता लगाया जाना अभी बाकि है।

हर व्यक्ति समाज का अभिन्न अंग होता है, वह तीन स्रोतों से समाज की सदस्यता में आता है। समय, धन और प्रयास, ये सभी हमारे पास उपलब्ध महत्वपूर्ण संसाधन के रूप में प्रयाप्त मात्र में हैं। समय जन–जीवन की आयु की वह अवधि है जिसमें मानव मात्र अपना स्वस्थ जीवन पूर्ण करता है, परन्तु हमारे यहाँ पर समय का कम उपयोग किया जाता है क्योंकि हमारी संस्कृति औद्योगिक संस्कृति नहीं बल्कि कृषि आधारित संस्कृति है और हममें से बहुधा लोग समय संसाधनों का उचित उपयोग करने में तकनीक रूप से प्रशिक्षित नहीं हैं। वस्तुतः हमें अपनी युवापीढ़ी को तकनीकी क्षेत्रों में प्रशिक्षित करने में बहुत कम सफलता मिल पाई है।

हमारी अर्थव्यवस्था में कमी के कारण, हमारी चिकित्सा सुविधाएँ और इंजीनियरिंग क्षमताएँ भारतीय संस्कृति में गुम हो गई हैं, और हमारी उतम कोशल प्राप्त क्षमता विदेशों में काम की तलाश में पलायन कर रहे हैं। इस पलायन वादी परम्परा ने इस धारणा को साबित कर दिया है कि भारतीय संस्कृति तकनीकी उच्च कौशलीय संसाधनों की कमी के कारण अपने तकनीकी कौशल को देश में अवशोषित करने में पूर्णतया समर्थ नहीं है। भारतीय संस्कृति परम्परागत आधारित है, और शारीरिक श्रम को तकनीकी श्रम से अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। फलस्वरूप युवा शक्ति का बड़ा भाग विदेशों में भारोत्तोलन, सड़क निर्माण, भवन निर्माण वाले और क्षतिग्रस्त सामानों (वस्तुओं )की मरम्मत करने वाले कारीगर के रूप में पलायन कर रहे हैं , क्यों की इस वर्ग की आवश्यकता सभी देशों को है। चाहे विकशित देश हों या विकाशशील देश द्य भारतीय समाज में इस गरीबी की समस्या की मूल जड़ यह है, कि यहाँ के अधिकांश मानव संसाधन अपने आप में प्रतिभाशाली तो हैं, लेकिन उनमें तकनीकी कौशल विशेषज्ञता का अभाव पाया जाता है। हमारी स्वंयं की सरकार भी आजतक किसानों को अकुशल श्रमिक का दर्जा देती आई हैं, इन्होने कभी एक किसान को और किसानी कार्यों को कौशलता पूर्ण माना ही नहीं है। हमें भी उच्च गुणवता प्राप्त वाहन चालक, ट्रैक्टर चालक, वाहन ठीक करने वाले छोटे बड़े सभी वाहन सुधारने वाले कारीगरों की जरूरत है। और कोशल पलायन के कारण तकनीकी काम के जानकर लोग विदेशों में चले जाते हैं परन्तु उनका वहां पर

शोषण होता है, जब की उनकी महत्वपूर्ण आवश्यकता देश में है। क्योंकि ये सेवाएँ हमारी संस्कृतिक उन्नति के लिए अति आवश्यक हैं।

**गरीबी के कारण :–**

**जनाधिक्य : –** विभिन्न शोधों में भारत की अधिक जनसंख्या हमारी गरीबी का एक प्रमुख कारण रही है। भारत की जनसँख्या विश्व की दूसरी बहुत बड़ी जनसंख्या है। भारत में विश्व की लगभग 17 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। जनसँख्या वृद्धि ने हमारे आर्थिक विकास को अवरुद्ध कर दिया है, और इसका परिणाम यह प्राप्त हुआ है कि गरीबी का स्तर अपेक्षाकृत निम्न बना रहा है।

**कृषिगत उत्पादन :–** इस बात की पुष्टि बहुत सारे शोध प्रमाण सहित करते हैं भारतीय परम्परागत

कृषि; किसानों की आय को बढ़ाने में असफल रही है, हरित क्रांति के पश्चात कृषि उत्पादनों में वृद्धि तो हुई है लेकिन अकुशलता पूर्ण प्रयोगों ने न केवल कृषि उत्पादनों की गुणवता क्षीण की है साथ ही हमारी मृदा को सीधे सीधे प्रभावित करने में कोई कसर नहीं रखी है। कृषि कार्यों की लागत बढ़ने से किसान लगातार कर्जदार होते जा रहे है जिसकी परिणति स्वरूप यदा–कदा इनकी आत्महत्या के रूप में सामने आता है। इसके अलावा अन्य किसी तरीके से गरीबी को कम करने की कोई तर्कसंगत युक्ति नहीं है जो गरीबी कम करने में मदद कर सकती हो । कृषि विकास सें कृषि क्षेत्र के बाहर भी, योगदान होता है, आर्थिक विकास को प्रोत्साहन देने की क्षमता कृषि क्षेत्र में है, जिसके परिणामस्वरूप न केवल रोजगार संवर्धन होता है वरन विकास सृजन में भी वृद्धि होगी ही होगी ।

**अर्थव्यवस्थागत ढांचा :–** भारत मुख्यतया एक कृषि प्रधान देश है। भारत की कृषि परम्परागत बुनियादी ढांचे के कारण कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ बनी हुई है। आर्थिक क्षेत्र में जहाँ भारत पिछड़ जाता है, वह है कृषि का बुनियादी और परम्परागत ढाँचा, जिसमें प्राचीन कृषि तकनीक का प्रयोग , पुरातन तकनीक एवं किसानों के बीच औपचारिक रूप सें कृषि शिक्षा की कमी भी शामिल है। परिणामस्वरूप एक किसान की आय उसके परिवार की आर्थिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अपर्याप्त रहती है।

**सामाजिक ताना–बना :–** हमारी कुछ प्रमुख सामाजिक व्यवस्थाएं हैं जो गरीबी को कायम रखने में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं :–

**अशिक्षा –** भारत में गरीबी का प्रसार ज्यादातर शिक्षा की कमी और बढ़ती अकुशलता के कारण है। जैसे–जैसे अकुशल जनसँख्या की दर बढ़ती है, वैसे–वैसे देश में बेरोजगारी भी बढ़ती है और परिणामस्वरूप हमारे देश में गरीबी की दर बढ़ती रहती है।

**प्राचीन सामाजिक मान्यताएँ :–** हमारे यहाँ पर जातिगत व्यवस्था का बोलबाला है, अलग–अलग जातियों और धर्मो के सामाजिक रीति–रिवाज देश के कुछ वर्गों में अलगाव उत्पन्न करते है और उस वर्ग विशेष के हाशिए पर जाने का कारण बनते हैं, हाशिए में जीवन बिताने वाले लोग गरीबी के विस्तार में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

 ISBN: 978-81-993143-8-2

**लैंगिक भेदभाव** :– भारत में आज भी आधी आबादी को समानता का दर्जा नहीं दिया जाता है। भारत एक ऐसा देश है जहाँ पुरुष प्रधान व्यवस्था के कारण लैंगिक भेदभाव बहुतायत में पाया जाता है। देश के बहुधा क्षेत्रों में महिलाओं की निम्न स्थिति उनके तथा समाज के विकास में बाधक बनी हुई है, उनकी खराब स्थिति गरीबी का एक बहुत बड़ा महत्वपूर्ण कारण है।

**बढ़ती बेरोजगारी** :– भारत में बेरोजगारी की दर अनवरत रूप से बढती जा रही है,जिसके कारण भारत में कई लोगों के पास प्रयाप्त आय का कोई स्थाई स्रोत नहीं है, और इस कारण वे गलत (अवैध कार्य) रास्ते पर जाने के लिए मजबूर हो जाते हैं। और इस तबके के अधिकांश लोग अपना और अपने परिवार का पालन पोषण करने के लिए चोरी, डकैती, लूटपाट और हत्या तक करना शुरू कर देते हैं।

**भारत में गरीबी की रोक–थाम के लिए आयोजित कार्यक्रम**

**सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना रोजगार आश्वासन योजना** (ईएएस) और जवाहर ग्राम समृद्धि योजना (जेजीएसवाई) के प्रावधानों का एक संयोजन है। अक्टूबर 1980 में तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने काम के बदले अनाज कार्यक्रम का पुनर्गठन किया और इसका नाम बदलकर राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम कर दिया और अप्रैल 1981 से यह एक नियमित कार्यक्रम बन गया। यह कार्यक्रम छठी पंचवर्षीय योजना के दौरान शुरू किया गया था । इसका उद्देश्य कम रोजगार वाले व्यक्तियों को अतिरिक्त रोजगार उपलब्ध कराना है। केंद्र–राज्य का योगदान 50:50 के अनुपात के आधार पर था। 1989 में NREP को जवाहर रोजगार योजना में मिला दिया गया ।

यह पिछले रोजगार कार्यक्रमों का एकीकरण था और यह उस समय भारत का सबसे बड़ा राष्ट्रीय रोजगार कार्यक्रम था जिसका सामान्य उद्देश्य प्रति व्यक्ति 90–100 दिन का रोजगार उपलब्ध कराना था, खासकर पिछड़े जिलों में। गरीबी रेखा से नीचे के लोग मुख्य लक्ष्य थे। योजना को ग्रामीण स्तर पर लागू किया गया था। प्रत्येक गांव को पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से कवर किया जाना था। गांव को जिला ग्रामीण विकास प्राधिकरण से सहायता और समर्थन मिला। व्यय केंद्र और राज्य द्वारा 80रू20 अनुपात में वहन किया गया।

1993–94 से इस योजना को अधिक लक्ष्योन्मुख बनाया गया तथा बजटीय आवंटन में वृद्धि करके इसका पर्याप्त विस्तार किया गया। इसे तीन धाराओं में विभाजित किया गया।

**राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम** (NREP] 1980) दृ राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम को वर्ष 1980 में भारत में गरीबी और बेरोजगारी को खत्म करने के लिए शुरु किया गया था। इस कार्यक्रम का प्रमुख उद्देश्य बेरोजगार मजदूर वर्ग के लिए रोजगार के अवसर जैसे कि मछली पालन, ईंधन और ऊर्जा प्लांट लगाना और चारागाहों के लिए चारा विकास प्लांट विकसित करना आदि लघु उद्यम था। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम (एनआरईपी) की जगह पर महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगा) को लागू किया गया है

**जवाहर रोजगार योजना** (जेआरवाई) 1 अप्रैल 1989 को प्रधानमंत्री राजीव गांधी द्वारा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम और ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम को मिलाकर शुरू की गई थी । इस कार्यक्रम का शहरी संस्करण नेहरू रोजगार योजना था।

**ग्रामीण श्रम रोजगार गारंटी कार्यक्रम** (RLEGP) ग्रामीण भूमिहीन मजदूरों को रोजगार गारंटी के लिए केंद्र सरकार द्वारा वित्तपोषित एक रोजगार कार्यक्रम था, जिसमें भूमिहीन मजदूरों को वर्ष में कम से कम 100 दिनों के लिए रोजगार देने की गारंटी दी गई थी। जिसकी 25 प्रतिशत धनराशि सामाजिक वानिकी एवं 20 प्रतिशत धनराशि आवास के लिए आवंटित की गई थी, 10 प्रतिशत धनराशि केवल एससी–एसटी समुदायों को लाभ के लिए पूर्व निर्धारित की गई थी।

**अन्नपूर्णा :–** इस योजना की शुरुआत भारत सरकार ने 1999–2000 में ऐसे वृद्ध व्यक्तियों को भोजन उपलब्ध करवाने के लिए की थी जो स्वयं की देखभाल करने में असमर्थ होते हैं, और वे लोग राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना (NOAPS) के अंतर्गत लाभार्थी की श्रेणी में नहीं आते हैं, और उनके परिवार–समाज में उनकी देखभाल करने वाला कोई भी नहीं है। इस कार्यक्रम के द्वारा ऐसे वृद्ध व्यक्तियों को प्रति माह 10 किलो मुफ्त खाद्यान्न सरकार द्वारा उपलब्ध करवाया जाता है । यह कार्यक्रम मुख्य रूप से 'सबसे गरीब' और 'निर्धन वृद्ध व्यक्तियों' को ही लक्षित करते हैं।

**मनरेगा :–** महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के नाम से ग्रामीण क्षेत्रों में इसका आगाज किया गया था, इस योजना को लागु करने के लिए मनरेगा (महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम) 2005, बनाया गया। इस अधिनियम के तहत गरीबी रेखा से निचे जीवन यापन करने वाले प्रत्येक ग्रामीण परिवारके एक सदस्य को प्रति वर्ष 100 दिन रोजगार देने की गारंटी दी गई थी, जिसके तहत इन परिवारों को अपने ही क्षेत्र में निर्धारित न्यूनतम मजदूरी पर काम मिलता है। इन परिवार की महिलाओं को नियोजित रोजगार में से एक तिहाई हिस्सा दिया जाएगा। इसके अलावा, संघीय सरकार इस योजना के तहत राष्ट्रीय रोजगार गारंटी निधि की स्थापना करेगी। इसी तरह से , राज्यों की सरकारें भी योजना को लागू करने के लिए अपने–अपने राज्य में रोजगार गारंटी निधि की स्थापना करेंगे। यदि किसी गरीबी रेखा से निचे जीवन यापन करने वाले परिवार के आवेदक सदस्य को 15 दिनों के भीतर रोजगार पर नहीं रखा जाता है, तो वह सदस्य मनरेगा कार्यक्रम के तहत सरकार से दैनिक बेरोजगारी भत्ता प्राप्त करने का हकदार हो जायेगा ।

**अंत्योदय कार्यक्रम :–** अंत्योदय कार्यक्रम की सर्व–प्रथम शुरुआत राजस्थान सरकार नेवर्ष 1977 में की थी। इस कार्यक्रम का मकसद था की राज्य के सबसे गरीब परिवारों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करना था। इस कार्यक्रम के तहत, दो चरणों में राज्य के लगभग दो लाख परिवारों को पेंशन, आवास, स्वरोजगार, तथा मजदूरी आदि के द्वारा रोजगार जैसे लाभ सुलभ करवाए जा सके।

 **ISBN: 978-81-993143-8-2**

**अंत्योदय कार्ड :–** भारत सरकार द्वारा यह कार्ड उन सभी भारतीय नागरिकों को दिया जाता है जो सहज गृहस्थी श्रेणी से बाहर हो मतलब बहुत ही गरीब हो । इस कार्ड के द्वारा अन्य कार्ड की तुलना में कार्ड धारक को ज्यादा राशन प्रदान किया जाता है। गृहस्थी कार्ड धारक को जहाँ यूनिट के हिसाब से प्रति यूनिट 3, किलो गेहूं और 2, किलो चावल मिलता है, वहीँ अंत्योदय कार्ड धारक को हर महीने 35, किलो राशन जिसमें 20, किलो गेहूं और 15, किलो चावल मिलता है। वही राशन का मूल्य दोनों ही कार्ड धारको के लिए समान है जिसमें 2, रुपये किलो गेहूं और 3, रुपये किलो चावल देने का प्रावधान निश्चित किया गया है। अंत्योदय कार्ड धारक व्यक्ति को सरकार की हर योजना में प्रथम वरीयता प्राप्त करने का अधिकारी होता है जैसा कि ये योजना अपने नाम से ही प्रदर्शित करती है कि, अंतिम ब्यक्ति का उदय, अंत्योदय। भारत सरकार ने अंत्योदय और गरीब परिवारों को 35 किलो अनाज मुफ्त मैं वितरण करनेकी योजना को लागू किया तथा मध्यम गरीब परिवारों को 5 किग्रा अनाज वितरण करने का निश्चय किया इसके अंतर्गत 2 रु प्रति किलो चावल और 3 रु प्रति किलो दाल वितरण करने का निश्चय किया।

**दीन दयाल अंत्योदय योजना तथा शहरी आजीविका मिशन :–** इस योजना के दो घटक हैं, प्रथम योजना ग्रामीण भारत के लिए है, तथा द्वितीय योजना शहरी भारत के लिए

**"दीन दयाल उपाध्याय ग्रामीण कौशल्या योजना"** के रूप में नामित ग्रामीण योजना को को देश के ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा संचालित किया जाता है।

दीनदयाल अंत्योदय योजना की शहरी योजना को आवास और शहरी गरीबी उपशमन मंत्रालय (एच.यू.पी.ए.) द्वारा संचालित किया जाता है ।

**कौशल प्रशिक्षण और स्थापन के माध्यम से रोजगार** – इस मिशन के तहत शहरी गरीबों लोगों को रोजगार प्राप्ति हेतु प्रशिक्षित कर योग्य बनाने के लिए 15 हजार रुपये के व्यव का प्रावधान किया गया है, जो पूर्वोत्तर राज्यों एवं जम्मू–कश्मीर क्षेत्र के लोगों को प्रति व्यक्ति 18 हजार रुपये का प्रावधान किया गया है। इसके साथ–साथ शहर में आजीविका केंद्रों के जरिए नगर निवासियों को व्यवसायगत प्रशिक्षण के माध्यम से रोजगार योग्य बनाये जाने का प्रावधान किया गया है।

**सामजिक एकजुटता और संस्था विकास** – इस योजना के द्वारा स्वयं सहायता समूह (एसएचजी) सदस्यों के प्रशिक्षण के माध्यम से10,000 रुपये का प्रारंभिक समर्थन दिया जाएगा, पंजीकृत क्षेत्रों के उच्च स्तर के महासंघों को 50, 000 रुपये तक की सहायता प्रदान की जाती है।

**शहरी गरीबों को सब्सिडी** – सूक्ष्म उद्यमों (माइक्रोदृ इंटरप्राइजेज) तथा समूह उद्यमों (ग्रुप इंटरप्राइजेज) की स्थापना करने के के साथ स्व–रोजगार को सुलभ किया जाएगा। इस योजना के द्वारा व्यक्तिगत परियोजनाओं के लिए 2 लाख रुपयों तक की ब्याज पर सब्सिडी और समूह उद्यमों लगाने पर 10 लाख रुपयों तक की ब्याज पर सब्सिडी प्रदान की जाएगी।

**शहरी निराश्रय के लिए आश्रय –** शहरी बेघर व्यक्तियों केआश्रय हेतु आश्रयों के निर्माण की सम्पूर्ण लागत इस योजना के तहत वित्त पोषित है।

**अन्य साधन –** बुनियादी ढांचे की स्थापना करके विक्रेताओं के लिए विक्रेता बाजार का विकास तथा स्व कौशल को बढ़ावा एवं सफाई करने वालों और विकलांगजनों आदि के लिए भी विभिन्न विशेष परियोजनाएं लागु की जाएगी ।

संयुक्त राष्ट्र ने गरीबी उन्मूलन के लिए तीन दशक तय किए हैंः– पहला दशक 1997–2006, दूसरा दशक 2008–2017, तीसरा दशक 2018–2027.

**सतत विकास लक्ष्यों (एसडीजी)** :– में भी गरीबी उन्मूलन के लिए लक्ष्य तय किए गए हैं. इन लक्ष्यों में से पहला लक्ष्य 2030 तक गरीबी को खत्म करने का है।

**मानव अधिकारों के संरक्षण से जुड़ें अधिनियम**

- उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम
- मानव अधिकार सरंक्षण अधिनियम, अक्सर पूछे जाने वाले प्रश्न
- शिक्षु अधिनियम, 1961
- श्रम से संबंधित कानून
- समान वेतन अधिनियम 1976
- सामाजिक सुरक्षा से संबंधित कानून

**निष्कर्ष :–** सरकारी योजनाओ तथा शैक्षिक उन्नति नें भारत में गरीबी को कम करने के लिए निश्चित रूप से बहुत महत्वपूर्ण काम किये है, लेकिन इनका सार्थक परिणाम उतना व्यापक रूप में अर्थात लक्षित स्तर तक नहीं प्राप्त हुआ है, जितना गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों की घोषणा करते समय दर्शाया जाता है। ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों के बीच असमान रूप में बढ़ता अंतर सरकार के साथ–साथ पूरे मानव समाज के लिए जटिलतम चुनौतियां पैदा करता जा रहा है। हालाँकि, सरकारें केवल गरीबी उन्मूलन के पहलू पर ही काम नहीं कर सकती, परन्तु जन–मानस के जीवन स्तर में सुधार के लिए सरकारी स्तर पर विभिन्न योजनओं की आवश्यकता आज भी बनी हुई है। जिन योजनओं पर धरातल स्तर का कार्य ईमानदारी पूर्वक हो ।।

**संदर्भः–**


- भारत संदर्भ ग्रंथ भारत सरकार 2014.–15।
- दत्त रूद्ध एवं सुन्दरम् के.पी.एम. भारतीय अर्थव्यवस्था एस. चन्द्र एण्ड कम्पनी लि. 2015।
- गुप्ता षिवभूषण कृषि अर्थषास्त्र एसबीपीडी पब्लिसिंग हाऊस आगरा (उ.प्र. 2010।


 ISBN: 978-81-993143-8-2

- राय एल. एल. भारतीय अर्थषास्त्र ज्ञानदा प्रकाषन पटना बिहार 1995।
- गुप्ता, डॉ षिव भूषण कृषि अर्थषास्त्र एसबीपीडी पब्लिसिंग हाऊस आगरा (उ. प्र. 2010। ण
- सक्सेना प्रो. कृष्ण सहाय एवं गुप्ता प्रो. के. एल. भारतीय अर्थषास्त्र नवयुग साहित्य सदन लोहामंडी आगरा (उ.प्र 1995–96।
- सिंह, डॉ सुदामा भारतीय अर्थव्यवस्था समस्याएं एवं नीतियां राधा पब्लिकेषनस् नई दिल्ली 1994।
- मिश्रा एवं पुरी भारतीय अर्थव्यवस्था, हिमालया पब्लिसिंग हाऊस नई दिल्ली 2014–15।
- कुरूक्षेत्र मासिक पत्रिका ग्रामीण विकास मंत्रालय नई दिल्ली 2012।
- योजना मासिक पत्रिका भारत सरकार ग्रामीण विकास मंत्रालय नई दिल्ली अक्टूबर 2012।

७

# ई–गवर्नेंस और नागरिक सहभागिता

**डॉ. करण सिंह**
सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग
राजकीय कन्या महाविद्यालय, खैरवाड़ा (उदयपुर)
(कार्यव्यवस्थार्थ : राजकीय कन्या महाविद्यालय, झालामण्ड, जोधपुर)

## सारांश

राष्ट्रीय ई–गवर्नेंस योजना (एनईजीपी) भारत सरकार की एक पहल है जिसका उद्देश्य सभी सरकारी सेवाओं को इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के माध्यम से भारत के नागरिकों तक पहुँचाना है। एनईजीपी को इलेक्ट्रॉनिक्स और सूचना प्रौद्योगिकी विभाग (डीईआईटीवाई) और प्रशासनिक सुधार और लोक शिकायत विभाग (डीएआरपीजी) द्वारा तैयार किया गया था।

पिछले कुछ वर्षों में, विभिन्न राज्य सरकारों और केंद्रीय मंत्रालयों द्वारा ई–गवर्नेंस के युग की शुरुआत करने के लिए कई पहल की गई हैं। सार्वजनिक सेवाओं की डिलीवरी में सुधार और उन तक पहुँचने की प्रक्रिया को सरल बनाने के लिए कई स्तरों पर निरंतर प्रयास किए गए हैं।

भारत में ई–गवर्नेंस के साथ नागरिक सहभागिता के क्षेत्र में सरकारी विभागों के कम्प्यूटरीकरण से लेकर नागरिक केन्द्रितता, सेवा अभिविन्यास और पारदर्शिता जैसे शासन के सूक्ष्म पहलुओं को समाहित करने वाली पहलों तक लगातार विकसित हुआ है। देश की प्रगतिशील ई–गवर्नेंस रणनीति को आकार देने में पिछली ई–गवर्नेंस पहलों से सीखे गए सबक ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इस धारणा का उचित संज्ञान लिया गया है कि राष्ट्रीय, राज्य और स्थानीय स्तर पर सरकार के विभिन्न अंगों के साथ आमजन के जुड़ाव को अधिक से अधिक स्तर पर लागू कर ई–गवर्नेंस कार्यान्वयन को गति देने के लिए, एक कार्यक्रम दृष्टिकोण को अपनाने की आवश्यकता है, जो सामान्य दृष्टि और रणनीति द्वारा निर्देशित हो। इस दृष्टिकोण में कोर और सहायक बुनियादी ढांचे को साझा करने, मानकों के माध्यम से अंतर–संचालन को सक्षम करने और नागरिकों के लिए सरकार का एक सहज दृष्टिकोण प्रस्तुत करने के माध्यम से लागत में भारी बचत करने की क्षमता है।

**विशिष्ट शब्द :** ई–गवर्नेंस, नागरिक सहभागिता, इलेक्ट्रॉनिक्स, पारदर्शिता, अंतर–संचालन

## प्रस्तावना

20वीं सदी के आखिरी दशक में, मानव विकास से संबंधित साहित्य में सुशासन की आवश्यकता एक महत्वपूर्ण और आवर्ती विषय रही है – शोध और लोकप्रिय दोनों। अब ऐसे साक्ष्यों की संख्या बढ़ रही है, जो दर्शाते हैं कि शासन की गुणवत्ता वृद्धि और विकास में अंतर से संबंधित है। हालाँकि, इस साहित्य का अधिकांश हिस्सा अल्पकालिक

 ISBN: 978-81-993143-8-2

सामान्य सरकारी कार्यों जैसे सार्वजनिक सेवाओं की दक्षता में वृद्धि, नौकरशाही की जवाबदेही और निर्णय लेने में पारदर्शिता बढ़ाने के प्रदर्शन को बेहतर बनाने से संबंधित है, लेकिन राष्ट्रीय भविष्य के लिए सरकारों की बड़ी और महत्वपूर्ण भूमिका को अनदेखा करता है। शासन को केवल सरकार के कार्यकाल के दौरान संसाधनों और लोगों के प्रबंधन के संदर्भ में नहीं देखा जाना चाहिए, बल्कि राष्ट्र के बारे में ही नहीं बल्कि वैश्विक संदर्भ में राष्ट्र के बारे में दीर्घकालिक दृष्टिकोण रखने की इसकी क्षमता के संदर्भ में भी देखा जाना चाहिए |

सुशासन के गुण राष्ट्र के व्यापक सामाजिक और आर्थिक लक्ष्यों) के दृष्टिकोण और उस मूल्य प्रणाली से निर्धारित होने चाहिए जिसे वह बढ़ावा देना चाहता है। जबकि पूर्व के मामले में राजनीतिक दलों के बीच आम सहमति अधिक आसानी से प्राप्त की जा सकती है और इसलिए इसे वर्तमान सरकार से अलग करना संभव है, बाद के मामले में ऐसी आम सहमति तक पहुंचना बेहद मुश्किल है। हालाँकि, राजनीतिक सोच के स्पेक्ट्रम में एक न्यूनतम साझा एजेंडे की ओर बढ़ना संभव है, जिस मूल्य प्रणाली को बढ़ावा दिया जाएगा।

20वीं सदी का उत्तरार्ध क्रांतिकारी परिवर्तनों का युग था, कुछ आंतरिक मजबूरियों और देश के शासन के तरीकों के कारण और आंशिक रूप से तकनीकी परिवर्तन और वैश्विक संदर्भ के कारण। इन परिवर्तनों ने भविष्य की भविष्यवाणी को कम कर दिया है। सोनी के पूर्व अध्यक्ष अकियो मोरीता ने कहा कि भविष्य की भविष्यवाणी करने का एकमात्र तरीका इसे बनाना है। लेकिन भविष्य बनाने के लिए दूरदर्शिता के साथ–साथ प्रतिबद्धता की भी आवश्यकता होती है।

शासन की एक कार्यशील परिभाषा हो सकती है "प्रक्रियाएँ, प्रणालियाँ और संरचनाएँ जो सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक संबंधों का मार्गदर्शन करती हैं"। संबंधों को सरकार और बाज़ार, सरकार और नागरिक, सरकार और निजी क्षेत्र और स्वैच्छिक संगठनों, निर्वाचित और नियुक्त अधिकारियों, सरकारों के स्तरों (संघ, राज्य और स्थानीय) और विधायी और कार्यकारी संरचनाओं के बीच देखा जा सकता है।

शासन में प्रौद्योगिकी की परिवर्तनकारी भूमिका ने विद्वानों और नीति निर्माताओं दोनों का ध्यान आकर्षित किया है। विशेष रूप से, सरकार–नागरिक संपर्क को सुविधाजनक बनाने के लिए सूचना और संचार प्रौद्योगिकियों के उपयोग – जिसे आमतौर पर ई–गवर्नेंस कहा जाता है, में काफी प्रगति हुई है। इस क्षेत्र में, सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म सरकारों और उनके निर्वाचन क्षेत्रों के बीच संवाद, सूचना साझाकरण और सहयोगी निर्णय लेने की सुविधा प्रदान करके पारदर्शिता और भागीदारी शासन को बढ़ाने की अपनी क्षमता के लिए खड़े हैं। जबकि ई–गवर्नेंस पर फेसबुक और ट्विटर जैसे मुख्यधारा के सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स के प्रभाव को अच्छी तरह से प्रलेखित किया गया है इनमें से ज़्यादातर अध्ययन पश्चिमी लोकतंत्रों पर केंद्रित रहे हैं, और उनकी प्रयोज्यता अलग–अलग शासन चुनौतियों वाले देशों तक सीमित रही है। यह अध्ययन भारत के संदर्भ पर ध्यान केंद्रित करके इस अंतर को संबोधित करता है, जो नौकरशाही और मुख्यधारा के मीडिया में

जनता के भरोसे की कमी की विशेषता वाली अपनी अनूठी शासन चुनौतियों को देखते हुए विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

1992 में "गवर्नेंस एंड डेवलपमेंट" नामक रिपोर्ट में विश्व बैंक ने सुशासन की अपनी परिभाषा निर्धारित की। इसने सुशासन को "विकास के लिए किसी देश के आर्थिक और सामाजिक संसाधनों के प्रबंधन में शक्ति का प्रयोग करने के तरीके" के रूप में परिभाषित किया।

**भारत में ई–गवर्नेंस**

राष्ट्रीय ई–गवर्नेंस योजना (एनईजीपी) देश भर में ई–गवर्नेंस पहलों का समग्र दृष्टिकोण लेती है, उन्हें एक सामूहिक दृष्टि, एक साझा उद्देश्य में एकीकृत करती है। इस विचार के इर्द–गिर्द, दूर–दराज के गांवों तक पहुँचने वाला एक विशाल देशव्यापी बुनियादी ढाँचा विकसित हो रहा है, और इंटरनेट पर आसान, विश्वसनीय पहुँच को सक्षम करने के लिए अभिलेखों का बड़े पैमाने पर डिजिटलीकरण हो रहा है। अंतिम उद्देश्य सार्वजनिक सेवाओं को नागरिकों के घर के करीब लाना है, जैसा कि एनईजीपी के विज़न स्टेटमेंट में व्यक्त किया गया है।

"सामान्य सेवा वितरण केन्द्रों के माध्यम से सभी सरकारी सेवाओं को आम आदमी के लिए उसके इलाके में सुलभ बनाना, तथा आम आदमी की बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के लिए किफायती लागत पर ऐसी सेवाओं की दक्षता, पारदर्शिता और विश्वसनीयता सुनिश्चित करना"

सरकार ने 18 मई 2006 को 27 मिशन मोड परियोजनाओं और 8 घटकों वाली राष्ट्रीय ई–गवर्नेंस योजना (NeGP) को मंजूरी दी। वर्ष 2011 में, 27 एमएमपी की सूची को 31 मिशन मोड परियोजनाओं (एमएमपी) बनाने के लिए 4 परियोजनाएं – स्वास्थ्य, शिक्षा, पीडीएस और डाक पेश किए गए थे। सरकार ने एनईजीपी के लिए विजन, दृष्टिकोण, रणनीति, प्रमुख घटकों, कार्यान्वयन पद्धति और प्रबंधन संरचना को मंजूरी दे दी है। हालांकि, एनईजीपी की मंजूरी सभी मिशन मोड परियोजनाओं (एमएमपी) और इसके तहत घटकों के लिए वित्तीय मंजूरी नहीं है। विभिन्न केंद्रीय मंत्रालयों, राज्यों और राज्य विभागों द्वारा कार्यान्वित की जा रही एमएमपी श्रेणी में मौजूदा या चल रही परियोजनाओं को एनईजीपी के उद्देश्यों के साथ संरेखित करने के लिए उपयुक्त रूप से संवर्धित और उन्नत किया जाएगा।

ई–गवर्नेंस को समग्र रूप से बढ़ावा देने के लिए, कोर और सहायक बुनियादी ढांचे को विकसित करने के लिए विभिन्न नीतिगत पहल और परियोजनाएं शुरू की गई हैं। प्रमुख कोर बुनियादी ढांचे के घटक राज्य डेटा केंद्र (एसडीसी), राज्य व्यापी क्षेत्र नेटवर्क (स्वान), सामान्य सेवा केंद्र (सीएससी) और मिडलवेयर गेटवे यानी राष्ट्रीय ई–गवर्नेंस सेवा वितरण गेटवे (एनएसडीजी), राज्य ई–गवर्नेंस सेवा वितरण गेटवे (एसएसडीजी) और मोबाइल ई–गवर्नेंस सेवा वितरण गेटवे (एमएसडीजी) हैं। महत्वपूर्ण सहायक घटकों में सुरक्षा, मानव संसाधन, नागरिक जुड़ाव, सोशल मीडिया के साथ–साथ मेटाडेटा, इंटरऑपरेबिलिटी, एंटरप्राइज आर्किटेक्चर, सूचना सुरक्षा आदि से संबंधित मानकों पर

 ISBN: 978-81-993143-8-2

कोर नीतियां और दिशानिर्देश शामिल हैं। नई पहलों में प्रमाणीकरण के लिए एक ढांचा शामिल है, जैसे ई–प्रमाण और जीआई क्लाउड, एक पहल जो ई–गवर्नेंस परियोजनाओं के लिए क्लाउड कंप्यूटिंग के लाभों को सुनिश्चित करेगी।

## ई–गवर्नेंस और नागरिक सहभागिता

नागरिकों तथा व्यवसायियों को शासकीय सेवाएँ प्रदान करने के कार्य में सुधार लाने के उद्देश्य से आरंभ की गयी राष्ट्रीय ई–शासन योजना निम्नलिखित दृष्टि द्वारा मार्गदर्शित है।

"सभी सरकारी सेवाओं को सार्वजनिक सेवा प्रदाता केन्द्र के माध्यम से आम आदमी तक पहुँचाना और आम आदमी की बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा करने लिए इन सेवाओं में कार्यकुशलता, पारदर्शिता और विश्वसनीयता सुनिश्चित करना।" यह दृष्टि कथन अच्छे शासन को सुनिश्चित करने के लिए सरकार की प्राथमिकताओं को स्पष्ट रूप से दर्शाता है।

**पहुँच :** इस दृष्टि को ग्रामीण जनता की जरूरतों को ध्यान में रखकर बनाया गया है। आवश्यकता समाज के उन तबकों तक पहुँचने की है जो अभी तक भौगोलिक चुनौतियों तथा जागरूकता की कमी जैसे कारणों से सरकार की पहुँच से लगभग बाहर रहे हैं। राष्ट्रीय ई–शासन योजना (NeGP) में ग्रामीण क्षेत्रों के नागरिकों तक पहुँच के लिए प्रखण्ड स्तर तथा साझा सेवा केन्द्रों तक के सभी सरकारी कार्यालयों को राज्यव्यापी एरिया नेटवर्क (SWAN) द्वारा जोड़ा जा रहा है।

साझा सेवा वितरण केन्द्रः वर्तमान में खासकर दूर दराज़ के क्षेत्रों में रहने वाले नागरिकों को किसी सरकारी विभाग या उसके स्थानीय कार्यालय से कोई सेवा लेने के लिए लम्बी दूरी तय करनी पड़ती है। नागरिक सेवाएँ प्राप्त करने में लोगों का काफी समय तथा पैसा खर्च होता है। इस समस्या से निबटने के उद्देश्य से राष्ट्रीय ई–शासन योजना (NeGP) के एक भाग के रूप में प्रत्येक छः गाँव के लिए एक कंप्यूटर तथा इंटरनेट आधारित साझा सेवा केन्द्रों (CSCs) की स्थापना की योजना शुरू की गई है ताकि ग्रामीणजन इन सेवाओं का आसानी से अपने निकटवर्ती केन्द्र से प्राप्त कर सकें। इन साझा सेवा केन्द्रों (CSCs) का उद्देश्य है 'कभी भी, कहीं भी' के आधार पर एकीकृत ऑनलाइन सेवा प्रदान करना।

## राष्ट्रीय ई–शासन योजना की क्रियान्वयन रणनीति

राष्ट्रीय ई–शासन योजना (NeGP) के लिए एक सुगम सोच विकसित गई है जो राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर लागू किये गये ई–शासन अनुप्रयोगों के अनुभवों पर आधारित है। राष्ट्रीय ई–शासन योजना (NeGP) के लिये अपनाये जा रहे तरीके तथा पद्धति में निम्नलिखित तत्व शामिल हैं:

**सामूहिक ढाँचा :** राष्ट्रीय ई–शासन योजना (NeGP) के क्रियान्वयन में सामूहिक तथा सहायक सूचना प्रौद्योगिकी ढाँचा तैयार करना शामिल थे जैसे कि– राज्यव्यापी एरिया

नेटवर्क, राज्य आँकड़ा केन्द्र, सामूहिक सेवा केन्द्र तथा इलेक्ट्रॉनिक सेवा वितरण गेटवे जो धीरे–धीरे विकसित किये जा रहे हैं।

**शासन :** राष्ट्रीय ई–शासन योजना के क्रियान्वयन की निगरानी तथा समन्वय के लिए सक्षम प्राधिकारी के निर्देश के अंतर्गत उचित प्रबन्ध किये गये हैं। इस कार्यक्रम में मानक तथा नीतिगत मार्गदर्शिकाएँ तैयार करना, तकनीकी सहायता देना, क्षमता–निर्माण कार्य, अनुसंधान व विकास शामिल हैं। इलेक्ट्रॉनिकी और सूचना प्रौद्योगिकी विभाग (DeitY) स्वयं तथा नेशनल इंफॉर्मेटिक्स सेन्टर (NIC), स्टैंडर्डाइज़ेशन, टेस्टिंग एंड क्वालिटी सर्टिफिकेशन (STQC), सेंटर फॉर डेवलपमेंट ऑफ एडवांस्ड कम्प्यूटिंग (C&DAC), नेशनल इंस्टीट्यूट फॉर स्मार्ट गवर्नेंस (NISG) आदि, जैसे संस्थानों का सशक्तीकरण करेगा ताकि वे इन भूमिकाओं को प्रभावी तरीके से निभा सकें।

सामूहिक पहल, विकेन्द्रीकृत क्रियान्वयनःई–शासन को आवश्यक केन्द्रीय पहल के ज़रिये बढ़ावा दिया जा रहा है ताकि विकेन्द्रीकृत मॉडल के क्रियान्वयन में वह नागरिक–केन्द्रित हो, विभिन्न ई–शासन अनुप्रयोगों की परस्पर–संचालकता के उद्देश्य को हासिल कर सके तथा सूचना व संचार प्रौद्योगिकी ढांचे एवं संसाधनों का इष्टतम उपयोग सुनिश्चित हो सके। इसका उद्देश्य यह भी है कि सफलता उन्मुखी परियोजनाओं की पहचान हो सके और जहाँ भी आवश्यक हो, उन्हें आवश्यक फेरबदल के साथ दोहराया जा सके।

**सार्वजनिक–निजी भागीदारी (PPP) मॉडल :** इसे वहाँ अपनाया जा रहा है जहाँ भी सुरक्षा पहलुओं की अनदेखी किये बगैर संसाधनों में वृद्धि सम्भव हो।

**संपूर्णात्मक तत्व :** एकीकरण को सुचारू बनाने तथा विरोधाभास से बचने के लिये नागरिकों, व्यवसायियों तथा सम्पत्ति के लिए यूनिक आइडेंटिफिकेशन कोड को अपनाकर बढ़ावा दिया जा रहा है।

## ई–क्रांति–सेवाओं का इलेक्ट्रॉनिक वितरण

ई–क्रांति डिजिटल इंडिया पहल का एक अनिवार्य स्तंभ है। देश में ई–गवर्नेंस, मोबाइल गवर्नेंस और देश में सुशासन की महत्वपूर्ण जरूरत को देखते हुए ई–क्रांति के प्रमुख घटकों के रुप में "शासन को बदलने के लिए बदलने ई–गवर्नेंस में बदलाव "के विजन को यूनियन कैबिनेट ने 25 मार्च 2015 को केंद्रीय मंत्रिमंडल द्वारा अनुमोदित किया गया।

सभी नई की जा रही ई–गवर्नेंस परियोजनाओं के साथ ही मौजूदा परियोजनाओं का पुर्नोत्थान किया जा रहा है, जो अब ई–क्रांति के निम्न सिद्दांतों का पालन करेंगी –

- रुपातंरण और न कि अनुवाद
- एकीकृत सेवाओं और न कि व्यक्तिगत' सेवाएं
- 'प्रत्येक एमएमपी में गर्वेनमेंट प्रोसेस रिइंजीनियरिंग के प्रमुख सिद्धांतों का पालन करना जरुरी

 ISBN: 978-81-993143-8-2

- डिफ़ॉल्ट रुप से क्लॉउड
- मोबाइल प्रथम
- फास्ट ट्रैकिंग स्वीकृति
- अनिवार्य मानक और प्रोटोकॉल
- भाषा स्थानीयकरण
- राष्ट्रीय जीआईएस(भू–स्थानिक सूचना प्रणाली)
- आईसीटी इंफ्रास्ट्रक्चर
- सुरक्षा और इलेक्ट्रॉनिक डाटा संरक्षण

ई–क्रांति के तहत 44 मिशन मोड परियोजनाएं,जो विभिन्न चरणों कार्यान्वित हो रही हैं।

**मिशन मोड परियोजना**

मिशन मोड परियोजना (एमएमपी) राष्ट्रीय ई–शासन योजना के अंतर्गत एक स्वतंत्र परियोजना के तौर पर शुरु की गयी। यह परियोजना इलेक्ट्रॉनिक शासन के विभिन्न पहलुओं जैसे कि बैकिंग,भूमि रिकार्ड या व्यवसायिक कर आदि पर आधारित सेवाओं का ध्यान रख कर बनाई गई है। राष्ट्रीय ई–शासन योजना की "मिशन मोड" परियोजना स्पष्ट रूप से उद्देश्य,व्यापकता और कार्यान्वयन की समय सीमा और उपलब्धियों के साथ– साथ मूल्यांकनीय परिणामों और सेवा स्तरों को परिभाषित करती है। राष्ट्रीय ई–शासन परियोजना ४४ मिशन मोड परियोजनाओं (एमएमपी–पहले 27) जो कि राज्य, केंद्र या एकीकृत परियोजनाओं के रूप में वर्गीकृत की जा सकती है।

**निष्कर्ष**

शासन में सुधार के लिये ई–शासन को अपनाकर सूचना तथा संचार प्रौद्योगिकी (ICT) का उपयोग शासन को नागरिकों तक पहुँचने में सहायता दी और अध्ययन बताते है और जिसके फलस्वरूप शासन में सुधार हुआ है। इससे विभिन्न शासकीय योजनाओं की निगरानी तथा उसे लागू करना भी सम्भव हुआ है जिससे नागरिकों की अधिकतम सहभागिता सुनिश्चित कर शासन की जवाबदेही तथा पारदर्शिता में वृद्धि प्राप्त की गई।

नागरिकों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार के लिए ई–शासन न्यूनतम मूल्य पर नागरिक केन्द्रित सेवा प्रदान करने के प्रावधान के द्वारा इस लक्ष्य को हासिल करने में मदद कर रहा है और इसके फलस्वरूप सेवाओं की माँग तथा इन्हें प्राप्त करने में कम समय लगने से यह काफी सुविधाजनक साबित हो रहा है।

इसलिए, इस दृष्टि का उद्देश्य सुशासन को मज़बूती प्रदान करने के लिए ई–शासन का उपयोग करना है। ई–शासन की विभिन्न पहल के ज़रिये लोगों को दी जा रही सेवाएँ, केन्द्र व राज्य सरकारों को अब तक वंचित समाज तक पहुंचाने में मदद कर रही हैं। साथ ही, यह समाज के मुख्यधारा से कटे हुए लोगों को शासकीय क्रियाकलापों में

भागीदारी के द्वारा उनका सशक्तीकरण हो रहा है जिससे गरीबी में कमी आने की उम्मीद की जा रही जिससे सामाजिक व आर्थिक स्तर पर मौजूद विषमता में कमी आएगी।

## संदर्भ


- मिनिस्ट्री ऑफ इलेक्ट्रॉनिक्स एण्ड इन्फर्मेशन टेक्नोलॉजी, नई दिल्ली
- https://www.meity.gov.in/divisions/national-e-governance-plan
- कुमावत रतनलाल, ई–गवर्नेंस, पॉईन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2017
- मुत्तु सुनील के. और गुप्ता राजन, भारत में ई–गवर्नेंस, पालग्रेव मैकमिलन, नई दिल्ली, 2023
- ई–शासन, इंदिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय, नीरज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2022
- भारती सुदेशना, सुशासन और नागरिक सहभागिता का विचार, बी.पैक, बैंगलुरू, 2020
- पॉवेल, नागरिक सहभागिता क्या है, द पॉलिसी सर्किल, न्यूयॉर्क, 2021
- ईशासन, पीआईबी, इलेक्ट्रॉनिक्स एवं सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 2023
- बाजपेयी पी.के., पीपल्स पार्टीसिपेशन इन डेवेलपमेंट : ए क्रिटिकल एनालिसिस, आईजीपीए, नई दिल्ली, 1998


 ISBN: 978-81-993143-8-2

८

# डिजिटल युग में सांस्कृतिक परिवर्तन एवं चुनौतियाँ

**श्री बाल किशन**
सहायक आचार्य इतिहास
राजकीय कन्या महाविद्यालय झालामण्ड (लूनी) जोधपुर ग्रामीण

**सारांश**

आज के डिजिटल युग में निरन्तर हो रहे सांस्कृतिक परिवर्तन और इससे जुड़ी चुनौतियाँ एक ज्वलन्त एवं गंभीर विषय है। सूचना और संचार तकनीक के विकास ने हमारे जीवन को न केवल आसान बनाया है, बल्कि हमारी सांस्कृतिक पहचान और परम्पराओं पर भी गहरा प्रभाव डाला है। डिजिटल मीडिया के माध्यम से नई विचारधाराएँ और प्रवृत्तियाँ तेजी से फैल रही हैं, जहाँ इस डिजिटल युग की नई तकनीक ने जीवन की विभिन्न गतिविधियों को तीव्र एवं आसान बनाया है वहीं दूसरी ओर सांस्कृतिक विविधता को खतरा भी उत्पन्न हो रहा है।

हमें दृष्टिगोचर होता कि कैसे सोशल मीडिया, ऑनलाइन प्लेटफार्म और डिजिटल कंटेंट ने युवा पीढ़ी के सोचने के तरीके और जीवनशैली को अत्यधिक प्रभावित किया है। इसके साथ ही, पारम्परिक मान्यताएँ और रीति–रिवाज भी इस बदलाव से अछूते नहीं रहे। विकास के संदर्भ में डिजिटल युग को समझने से यह सुनिश्चित करने में मदद मिलेगी कि हम प्रौद्योगिकी और उन्नत ज्ञान दोनों के साथ स्थायी सामाजिक–आर्थिक संबंध बना सकें, जिसे प्रौद्योगिकी बनाने में हमारी मदद करती है।

डिजिटल युग में सांस्कृतिक संरक्षण की चुनौतियाँ क्या हैं और हमें कैसे संतुलित विकास के लिए उपाय करने की आवश्यकता है, इस विषय पर विश्लेषण किया गया है। अंततः, यह अध्ययन दर्शाएगा कि तकनीक और संस्कृति का सामंजस्य कैसे स्थापित किया जा सकता है ताकि हम एक समृद्ध और विविध सांस्कृतिक परिदृश्य की ओर बढ़ सकें।

**महत्वपूर्ण शब्द–** डिजिटल, सांस्कृतिक, विचारधाराएँ, मान्यताएँ, सामंजस्य

- **प्रस्तावना**

आज जिस युग में हम रह रहे हैं, उसे डिजिटल युग कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं होगा। आज हमारा समाज और हम सभी अपने बहुत सारे कार्यो के लिए डिजिटल माध्यम पर बहुत हद तक निर्भर है। डिजिटलाइजेशन ने हमारे जीवन को व्यापक रूप से प्रभावित किया है। कठिन और कठिन और असम्भव लगने वाले कार्य भी, डिजिटल प्रौद्योगिकी के उपयोग से, सुचारू और सुगमता पूर्वक किए जा सकते हैं। डिजिटल प्रौद्योगिकी ने समाज की कार्यशैली को अनेकों स्तर पर, आमूलचूल रूप से परिवर्तित किया है। इन्टरनेट मीडिया के अनेक प्लेटफार्मों का उपयोग करके हम गर्व की भी अनुभूति करते हैं।

डिजिटल युग विशेषतः एक उच्च प्रौद्योगिकी युग है जो अर्थव्यवस्था और समाज के भीतर ज्ञान के आदान–प्रदान की गति को तीव्रता से बढ़ाता है। शिक्षाविदों एवं वैज्ञानिकों के अनुसार हम जिस प्रणाली में हम रहते हैं, उसमें समाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक गतिशीलता ज्ञान के आदान–प्रदान पर निर्भर करती है। अर्थात् ज्ञान के आदान–प्रदान में जितनी अधिक गतिशीलता होगी विश्व में सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक क्षेत्रों परिवर्तनों की दर भी उतनी ही अधिक होगी।

आज के डिजिटल युग के अन्तर्गत (जिसे तीसरी औद्योगिक क्रांति के रूप में भी जाना जाता है) यांत्रिक और एनालॉग इलेक्ट्रॉनिक प्रौद्योगिकी से डिजिटल इलेक्ट्रॉनिक्स की ओर बदलाव है, जो 20वीं सदी के अंतिम वर्षों में तेजी से शुरू हुआ।

कम्प्यूटर और डिजिटल प्रौद्योगिकी के अन्य पहलुओं को अपनाने से मानव का अपने आस–पास के वातावरण के साथ व्यवहार बदल गया है, और ये परिवर्तन निरन्तर जारी है।

## डिजिटल युग के सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रभाव

डिजिटल युग के साथ नकारात्मक और सकारात्मक दोनों ही तरह के पहलू जुड़े हैं। इनका विवरण इस प्रकार है :–

### सकारात्मक पहलू:

- अधिकाधिक अंतर्संबंध
- आसान संचार
- ऐसी जानकारी का उजागर होना जिसे अतीत में अधिनायकवादी शासनों द्वारा आसानी से दबाया जा सकता था।
- 2010–2012 के अरब स्प्रिंग के दौरान हुई क्रांतियां सोशल नेटवर्किंग और स्मार्टफोन प्रौद्योगिकी के कारण संभव हुईं।
- डिजिटल क्रांति के आर्थिक प्रभाव के बारे में, इसके कई व्यापक प्रभाव रहे हैं। उदाहरण के लिए, इंटरनेट के आगमन के बिना, वैश्वीकरण आज की दुनिया में एक व्यवहार्य उद्यम नहीं होता।
- क्रांति ने व्यक्तियों और कंपनियों के एक दूसरे के साथ बातचीत करने के तरीके को बदल दिया। आज छोटे और मध्यम उद्यमों की दुनिया के बड़े बाजारों तक पहुँच है
- डिजिटल प्रौद्योगिकियों को अपनाने से आर्थिक उत्पादकता और उससे संबद्ध गतिविधियों में वृद्धि हुई है।
- तकनीकी प्रगति के बढ़ने के साथ–साथ डिजिटल क्रांति ने नए रोजगार कौशल की मांग पैदा कर दी है।

### नकारात्मक प्रभाव

- गलत जानकारी का आदान–प्रदान,
- इंटरनेट पर ठगी की संख्या में वृद्धि

 ISBN: 978-81-993143-8-2

- सामाजिक अलगाव एवं प्रतिद्वन्द्विता
- मीडिया का हस्तक्षेप
- व्यक्तिगत गोपनीयता का उल्लंघन
- कुछ ऐसे मामले सामने आए हैं जहां डिजिटल उपकरणों के साथ–साथ व्यक्तिगत उपयोग के लिए कंप्यूटरों के अत्यधिक उपयोग को कंपनी की उत्पादकता से जोड़ा गया है, जो वास्तविक उत्पादकता एवं प्रगति को ढक देता है।
- कार्यस्थल पर व्यक्तिगत कंप्यूटिंग और अन्य गैर–कार्य संबंधी डिजिटल गतिविधियों ने गोपनीयता के उल्लंघन के अधिक मजबूत रूपों को बढ़ावा दिया, जैसे कि कीस्ट्रोक रिकॉर्डिंग और सूचना फ़िल्टरिंग अनुप्रयोग (स्पाइवेयर और सामग्री नियंत्रण सॉफ्टवेयर)।

## भारत और डिजिटल युग

जुलाई 2015 में शुरू किया गया डिजिटल इंडिया कार्यक्रम भारत सरकार का एक प्रमुख कार्यक्रम है जिसका उद्देश्य भारत को डिजिटल रूप से सशक्त समाज और ज्ञान अर्थव्यवस्था में बदलना है।

भारत दुनिया के सबसे बड़े और सबसे तेजी से बढ़ते डिजिटल बाजारों में से एक है।

निर्णायक सरकारी कार्रवाई और निजी क्षेत्र के नवाचार तेजी से, बड़े पैमाने पर डिजिटल अपनाने को बढ़ावा दे रहे हैं।

लगभग 120 करोड़ मोबाइल सब्सक्रिप्शन और 56 करोड़ इंटरनेट सब्सक्रिप्शन के साथ, भारत दुनिया में दूसरा सबसे बड़ा मोबाइल सब्सक्रिप्शन आधार और दूसरा सबसे बड़ा इंटरनेट का उपयोगकर्ता है।

प्रौद्योगिकी हमारी दुनिया को अधिक निष्पक्ष, अधिक शांतिपूर्ण और अधिक न्यायपूर्ण बनाने में मदद कर सकती है। डिजिटल प्रगति सतत् विकास लक्ष्यों में से प्रत्येक की उपलब्धि का समर्थन और गति प्रदान कर सकती है – अत्यधिक गरीबी को समाप्त करने से लेकर मातृ और शिशु मृत्यु–दर को कम करने, टिकाऊ खेती और सभ्य कार्य को बढ़ावा देने और सार्वभौमिक साक्षरता प्राप्त करने तक।

डिजिटल तकनीकें हमारे इतिहास में किसी भी नवाचार की तुलना में अधिक तेज़ी से आगे बढ़ी हैं – सिर्फ़ दो दशकों में विकासशील दुनिया की लगभग 50 प्रतिशत आबादी तक पहुँच गई हैं और समाज को बदल रही हैं। कनेक्टिविटी, वित्तीय समावेशन, व्यापार और सार्वजनिक सेवाओं तक पहुँच को बढ़ाकर, तकनीक एक महान समतावादी हो सकती है।

उदाहरण के लिए, स्वास्थ्य क्षेत्र में, एआई–सक्षम अग्रणी प्रौद्योगिकियाँ जीवन बचाने, बीमारियों का निदान करने और जीवन प्रत्याशा बढ़ाने में मदद कर रही हैं। शिक्षा में, आभासी शिक्षण वातावरण और दूरस्थ शिक्षा ने उन छात्रों के लिए कार्यक्रम खोले हैं जो अन्यथा वंचित रह जाते। ब्लॉकचेन–संचालित प्रणालियों के माध्यम से सार्वजनिक सेवाएँ भी अधिक सुलभ और जवाबदेह बन रही हैं, और एआई सहायता के परिणामस्वरूप

नौकरशाही का बोझ कम हो रहा है। बड़ा डेटा अधिक उत्तरदायी और सटीक नीतियों और कार्यक्रमों का भी समर्थन कर सकता है।

हालांकि, जो लोग अभी भी इंटरनेट से नहीं जुड़े हैं, वे इस नए युग के लाभों से कटे हुए हैं और और भी पीछे रह गए हैं। पीछे छूटे हुए लोगों में से कई महिलाएं, बुजुर्ग, विकलांग व्यक्ति या जातीय या भाषाई अल्पसंख्यक, स्वदेशी समूह और गरीब या दूरदराज के इलाकों के निवासी हैं। कुछ निर्वाचन क्षेत्रों में कनेक्टिविटी की गति धीमी हो रही है, यहाँ तक कि उलट भी रही है। उदाहरण के लिए, वैश्विक स्तर पर, इंटरनेट का उपयोग करने वाली महिलाओं का अनुपात पुरुषों की तुलना में 12 प्रतिशत कम है। जबकि 2013 और 2017 के बीच अधिकांश क्षेत्रों में यह अंतर कम हुआ, यह सबसे कम विकसित देशों में 30 प्रतिशत से बढ़कर 33 प्रतिशत हो गया।

## शोध का उद्देश्य एवं महत्व

वर्तमान समय में डिजिटल युग के प्रभाव को स्पष्ट करते हुए इसके लाभकारी प्रभावों के बारे में विश्लेषण के साथ–साथ इसके दुष्प्रभावों को भी समझा जा सकता है। डिजिटल युग में सूचना व प्रौद्योगिकी के माध्यम से आम जनता, प्रशासन, राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न क्षेत्रों में लोगों के जीवन स्तर को तीव्र गति से बढ़ाया है। परन्तु साथ ही इसके कुछ दुष्प्रभाव भी देखने को मिलते हैं। परंपरागत सामाजिक एवं सांस्कृतिक मान्यताओं में परिवर्तन देखने को मिलते हैं। इससे मानसिक अवसाद, अलगाव, हिंसा, रोगग्रस्तता आदि दुष्परिणाम अधिक पाये जाते हैं। आज के इस डिजिटल युग में निजता के अधिकार पर भी बहस छिड़ी हुई है, व्यक्ति के निजी आँकड़ों पर विश्वभर में नजर रहती है और उसके चोरी होने व साईबर अपराधों में अत्यधिक बढ़ोतरी के दुष्परिणाम भी देखे जा रहे हैं।

इन लाभकारी व सुविधाजनक प्रभावों के साथ–साथ चलते दुष्प्रभावों को उजागर करना हमारा मुख्य उद्देश्य है।

नये शोध के द्वारा डिजिटल युग में हो रहे तेजी से बदलावों को आत्मसात करना जैसे – कृषि, स्वास्थ्य और पर्यावरण से जुड़ी समस्याओं का पता लगाने और उनका निदान करने या ट्रैफ़िक को नियंत्रित करने या बिल का भुगतान करने जैसे दैनिक कार्यों को करने के लिए डेटा पूलिंग और एआई जैसी डिजिटल तकनीकों का उपयोग किया जाता है। इनका उपयोग मानवाधिकारों की रक्षा और उनका प्रयोग करने के लिए किया जा सकता है। व्यक्तिगत डेटा स्वामित्व के बेहतर विनियमन के लिए कोई सूत्र हो, तो व्यक्तिगत डेटा किसी व्यक्ति के लिए एक परिसंपत्ति बन जाएगा। डेटा–संचालित प्रौद्योगिकी में व्यक्तियों को सशक्त बनाने, मानव कल्याण में सुधार करने और सार्वभौमिक अधिकारों को बढ़ावा देने की क्षमता है, जो लागू किए गए सुरक्षा के प्रकार पर निर्भर करता है।

## सांस्कृतिक परिवर्तन का कारण

 ISBN: 978-81-993143-8-2

डिजिटल युग में सांस्कृतिक परिवर्तन का तात्पर्य उन व्यवहारों, प्रथाओं और मूल्यों से है जो डिजिटल प्रौद्योगिकी के उपयोग से विकसित होते हैं। एक व्यापक शब्द, डिजिटल प्रौद्योगिकियों में स्मार्टफोन, सोशल मीडिया, डिजिटल सहयोग उपकरण, उद्यम सामग्री प्रबंधन, क्लाउड अवसंरचना और सेवा के रूप में सॉफ्टवेयर के साथ–साथ डिजिटल वातावरण – जैसे कि इंटरनेट – शामिल हैं, जो आधुनिक डिजिटल दुनिया का आधार बनते हैं। समाज में डिजिटल तकनीक के उपयोग में वृद्धि, जिसमें बड़ी और छोटी दोनों तरह की कंपनियाँ शामिल हैं, डिजिटल संस्कृति की निरंतर प्रमुखता और विकास सुनिश्चित करती है। इससे जुड़ा हुआ है अरबों लोगों के संवाद करने, काम करने, सीखने और मनोरंजन करने के तरीके में एक मौलिक बदलाव। आश्चर्य की बात नहीं है कि इस बदलाव ने सामाजिक संरचनाओं और मानदंडों में बदलाव किए हैं।

भारत में डिजिटल युग की क्रांति अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि इसने समाज के लगभग सभी क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर कायापलट की है। वर्तमान सरकार की डिजीटल इंडिया पहल के साथ शासन प्रणाली से लेकर बेहतर स्वास्थ्य सेवा और शिक्षा सेवाओं में डिजिटलीकरण, कैशलैस अर्थव्यवस्था और डिजीटल लेन–देन, अधिकारी तंत्र में पारदर्शिता, कल्याणकारी योजनाओं का निष्पक्ष और तेजी से वितरण जैसे लक्ष्य प्राप्त होते दिखाई दिए हैं। पिछले तीन वर्षों में विभिन्न क्षेत्रों में सरकार की पहलों पर अगर नज़र डाली जाए तो पता लगता है कि किस प्रकार से भारत में डिजिटल क्रांति ने न केवल समाज के कामकाज के तौर तरीकों को बदला है बल्कि देश के साधन सम्पन्न लोगों और वंचितों के बीच की खाई को पाट दिया है।

डिजिटल युग ने मानवीय अंतःक्रियाओं को बदल देती है और ग्राहक अनुभव को प्रभावित करती है। सहायता के लिए नौ से पांच बजे तक की पारंपरिक टेलीफोन कॉल अब अपवाद बन गई है। ग्राहक सेवा चैट, मैसेजिंग और सोशल मीडिया जैसे डिजिटल चैनलों के माध्यम से संचालित की जाती है।

इस प्रकार डिजिटल युग में सांस्कृतिक परिवर्तन एक प्रमुख चुनौती के रूप में उभर कर सामने आया है। यह चुनौती तेजी से हो रहे परिवर्तन को स्वीकार करने या अस्वीकार करने के साथ–साथ इसकी गति से भी जुड़ी है।

डिजिटल युग के अन्तर्गत किसी संगठन के उत्पादों, दिन–प्रतिदिन की प्रक्रियाओं और रणनीतिक पहलों में डिजिटल प्रौद्योगिकियों के एकीकरण से है। इसका उद्देश्य कर्मचारियों की सहभागिता को बढ़ाना और कार्यबल, उसके भागीदारों और उसके ग्राहकों के बीच सेवा वितरण में सुधार करना है।

डिजिटल संस्कृति, किसी संगठन के लिए नई प्रौद्योगिकियों और काम करने के तरीकों को पूरी तरह से एकीकृत करने के लिए आवश्यक मानसिकता, व्यवहार और मूल्यों को बढ़ावा देकर डिजिटल परिवर्तन को आधार प्रदान करती है।

डिजिटल परिवर्तन को सफलतापूर्वक पूरा करने का मतलब है संगठन की संस्कृति को बदलना। डिजिटल संस्कृति डिजिटल उपकरणों, नवाचार और सहयोग को

अपनाने को प्रोत्साहित करती है, जो सामान्य रूप से परिवर्तन और निरंतर सीखने के लिए अंतर्निहित खुलेपन पर आधारित है।

सहायक डिजिटल संस्कृति के बिना, संगठनों को सार्थक परिवर्तन के लिए महत्वपूर्ण बाधाओं का सामना करना पड़ता है, जिसके परिणामस्वरूप डिजिटल परिवर्तन धीमा, महंगा और अधूरा होता है।

पिछले कुछ वर्षों में, डिजिटल प्रौद्योगिकियों ने हमारे दैनिक जीवन के कई पहलुओं को बदल दिया है – हम एक–दूसरे से कैसे संबंध रखते हैं और दुनिया का अनुभव करते हैं – इसका सांस्कृतिक क्षेत्र पर भी गहरा प्रभाव पड़ने लगा है। दुनिया के कई हिस्सों में सांस्कृतिक संस्थान और व्यक्तिगत सांस्कृतिक पेशेवर खोए हुए समय की भरपाई के लिए डिजिटल तकनीकों को अपनाने में व्यस्त हैं। तेजी से, संस्कृति के प्रशंसक थिएटर प्रोडक्शंस या संगीत कार्यक्रम देख सकते हैं, या अपने घरों से किसी अन्य देश के संग्रहालय या विरासत स्थल की सांस्कृतिक सम्पदा का पता लगा सकते हैं। सांस्कृतिक संस्थान डिजिटल प्लेटफॉर्म के कारण अभिलेखपालों और क्यूरेटर के काम करने के तरीके को बदल रहे हैं, जबकि सोशल मीडिया ने नए दर्शकों तक पहुंचने के अवसर खोले हैं। शिल्पकारों, कलाकारों और कई अन्य सांस्कृतिक पेशेवरों के लिए यह "सांस्कृतिक डिजिटलीकरण" वेब प्लेटफ़ॉर्म और सोशल मीडिया की अधिक परिचित तकनीकों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता, आभासी और संवर्धित वास्तविकता, साथ ही रोबोटिक्स की तेज़ी से उभरती हुई तकनीकों तक भी फैला हुआ है, जिनमें से सभी में संस्कृति को संरक्षित करने, बनाने, एक्सेस करने और अनुभव करने के तरीकों में क्रांतिकारी बदलाव लाने की क्षमता है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता और बड़े डेटा की तैनाती से अगले 5 वर्षों में पिछले 30 वर्षों में किसी भी अन्य तकनीक की तुलना में अधिक परिवर्तन होने का अनुमान है।

COVID–19 महामारी के कारण वैश्विक बंद ने भी परिवर्तन की दर को तेज़ कर दिया है। एक अनुमान के अनुसार COVID–19 महामारी ने 5 साल की प्रगति को 3 महीनों में समेट दिया है। अप्रैल 2020 में यूनेस्को द्वारा बुलाई गई लगभग 130 संस्कृति मंत्रियों की बैठक में – जो स्वयं एक ऑनलाइन प्रारूप में थी – डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म के माध्यम से संस्कृति तक पहुँच बनाए रखने का सवाल सर्वोच्च प्राथमिकताओं में से एक था। वास्तव में, महामारी के दौरान, डिजिटल तकनीकों के उपयोग में तेज़ी से स्वतःस्फूर्त वृद्धि हुई, प्रसिद्ध कलाकारों ने अपने लिविंग रूम से मुफ़्त में प्रदर्शन किया, स्थानीय समूहों ने नृत्य, संगीत, शिल्प और खाना पकाने की जीवित विरासत परंपराओं का अभ्यास किया। प्रमुख संस्थानों ने भी ऑनलाइन सामग्री उपलब्ध कराई, कॉन्सर्ट हॉल और थिएटरों ने प्रदर्शनों को स्ट्रीम किया। पेरिस में लूवर – सामान्य समय में दुनिया का सबसे अधिक दौरा किया जाने वाला संग्रहालय – ने अपनी वेबसाइट पर ट्रैफ़िक में 10 गुना वृद्धि देखी।

हालाँकि, इस डिजिटल क्रांति में अभी सभी लोग शामिल नहीं हैं। ब्रॉडबैंड आयोग, जिसका यूनेस्को एक सक्रिय सदस्य है, का अनुमान है कि दुनिया के 53.6% लोगों के

 ISBN: 978-81-993143-8-2

पास अब डिजिटल तकनीकों तक पहुँच है, जिसका अर्थ है कि मानवता का लगभग आधा हिस्सा अभी भी पीछे छूट रहा है। देशों के बीच और भीतर भी स्पष्ट असमानताएँ हैं: सबसे कम आर्थिक रूप से विकसित देशों में डिजिटल पहुँच घटकर 19% रह गई है, जबकि पुरुषों की तुलना में वैश्विक स्तर पर इंटरनेट का उपयोग करने वाली महिलाओं की संख्या 12% कम है। स्पष्ट रूप से, डिजिटल तकनीकों तक पहुँच में असमानताओं की सीमा का संस्कृति पर गहरा प्रभाव पड़ता है: जबकि अधिकांश देशों में ऑनलाइन सांस्कृतिक उपभोग में भारी वृद्धि हुई है, डिजिटल विभाजन सांस्कृतिक उत्पादन और उपभोग पैटर्न में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

- **निष्कर्ष**

निष्कर्षतः कुल मिलाकर डिजिटल युग ने वर्तमान समय के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया है चाहे, विज्ञान, कला, साहित्य, संगीत, मनोरंजन हो या शिक्षा, खोज, अनुसन्धान या अन्य क्षेत्र प्रत्येक क्षेत्र में डिजिटल युग का क्रांतिकारी प्रभाव परिलक्षित होता है। यह डिजिटल उपकरणों को काम लेने वाले प्रत्येक व्यक्ति या समूह अथवा संगठन हो या कम्पनी, फर्म, कॉरपारेट अथवा सरकारी, अर्द्धसरकारी समूह, संगठन या संस्था हो उसके सकारात्मक प्रयोग तथा नकारात्मक प्रयोग पर अधिक निर्भर करता है।

सकारात्मक प्रभावों के तहत तेजी से परिवर्तनशील समाज के साथ तारतम्यता को रखते हुए मानव उत्थान व राष्ट्र की प्रगति के साथ ग्लोबल विजेज की अवधारणा को आत्मसात किया जा सकता है।

भारत की विशेषता कृषि क्षेत्र है। सरकार की डिजीटल इंडिया पहल किसानों की अनेक योजनाओं के लिए लाभकारी साबित हो रही है। कृषि क्षेत्र की कुछ योजनाओं में शामिल हैं, 'एम किसान', 'किसान पोर्टल', 'किसान सुविधा ऐप', 'पूसा कृषि', 'सॉइल हैल्थ कार्ड ऐप', 'ईनाम', 'फसल बीमा मोबाईल ऐप', 'एग्री मार्केट ऐप' और 'फर्टिलाईजर मॉनीटरिंग ऐप'। महिलाओं की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए 'निर्भय ऐप' और 'हिम्मत ऐप' जैसे एप्लीकेशन शुरू किए गए जिनका इस्तेमाल महिलाएं विपत्ति में पड़ने पर कर सकती हैं। कानूनप्रवर्तन एजेंसियों, अदालतों और न्याय प्रणाली के लिए भी ऐप हैं।

अतः विभिन्न क्षेत्रों में सरकार द्वारा की गई अनेक पहलें न केवल समाज में क्रांति लाने का एक प्रयास है बल्कि शोषितों को ऊपर उठाने के लिए डिजिटल प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल पर जोर देना है ताकि विभिन्न सामाजिक स्तरों के बीच अंतर को खत्म किया जा सके।

इसके नकारात्मक प्रभावों को देखें तो साईबर अपराध, चाईल्ड पोर्न, ऑनलाईन गेमिंग की लत, सोशियल मीडिया पर घंटों बिताने से अवसाद व चिंता को जन्म दे रहा है। मानसिक परेशानी के साथ शारीरिक दुष्परिणाम भी सामने आ रहे हैं। कई लोगों को सोशल मीडिया पर मौजूद अपने ही वर्ग के लोगों की तुलना करने में लगता है कि उनकी जिंदगी 'परफेक्ट' नहीं है। इससे ऐसे लोगों में एक खास किस्म की मानसिक

बीमारी 'सोशल मीडिया एंग्जायटी डिसऑर्डर' पनपने लगती है जो जाने–अनजाने में उन्हें अवसाद की ओर ले जाती है।

इस प्रकार आज का डिजिटल युग हमें अपनी सांस्कृतिक परम्परा व समृद्धि से दूर भी ले जा रहा है, जो एक प्रमुख दुष्परिणाम है। इस शोध में हम यह जांच करें कि डिजिटल सुविधाओं के उपयोग में सावधानी बरतते हुए हम सांस्कृतिक रूप से एक दूसरे जुड़े रहें तो यही डिजिटल क्रांति हमारे लिए अभिशाप की जगह एक वरदान ही सिद्ध होगी।

- **संदर्भ**


1. सिंह डा. गुरमीत, प्रेस इन्फॉर्मेशन ब्यूरो, भारत सरकार, सितम्बर, 2017
2. वॉशिंगटन शीन व पंच एलेक्जेंड्रा, सोशल मीडिया पर बहुत अधिक समय बिताने से नुकसान हो सकता है, जनसंख्या स्वास्थ्य अनुसंधान श्रृंखला, साईरेक्युज विश्वविद्यालय, न्यूयॉर्क
3. सारन समीर व राय त्रिशय, डिजिटल इतिहास के मुहाने पर दुनिया, दिसम्बर, ऑब्जर्वर रिसर्च फाउण्डेशन, मुम्बई, 2020
4. सेठ नितिन, डिजिटल युग में सफलता, मंजुल पब्लिशिंग हाऊस, नोयडा, 2023
5. सिंह प्रियंका, डिजिटल युग में पुस्तकों का महत्व, के–8–स्कूल, दिल्ली, 2022
6. अग्रवाल मनीषा, डिजिटल युग में पारम्परिक कला के स्वरूप, ए.एफ.ई.आई.ए.एस., भोपाल, मार्च, 2024
7. मिश्रा ओमप्रकाश, समसामयिक डिजिटल युग, समाज और हम, न्यूज ट्रैक, उ.प्र., जनवरी, 2023
8. https://newstrack.com/opinion/contemporary-digital-age-society-and-us-article-by-om-prakash-mishra-353948
9. चतुर्वेदी जगदीश्वर, डिजिटल युग में मासकल्चर और विज्ञापन, नया जमाना, जनवरी, 2010


 **ISBN: 978-81-993143-8-2**

९

# घरेलू हिंसा के प्रकार व स्वरूपः एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

**डॉ. अनिता टॉक**
**सहायक आचार्य – समाजशास्त्र**
**राजकीय कला महाविद्यालय कोटा**

**सार :–**

महिलाओं को समाज में समानता का दर्जा प्रदान करने के लिए न सिर्फ वैश्विक स्तर पर अपितु देश व राज्य स्तर पर भी अनेक प्रयास किये जा रहे है फिर भी वैश्विक स्तर पर महिलाओं की स्थिति में गिरावट देखी जा रही है। स्त्रियों के प्रति हिंसा एक प्रमुख समस्या है स्त्रियों के साथ उत्पीड़न, अत्याचार तथा प्रताड़ना वर्तमान युग का एक सार्वभौमिक तथ्य है। सर्वाधिक चिंता का विषय यह है कि घर जो कि स्त्री के लिए सबसे सुरक्षित स्थल समझा जाता था, वहाँ भी अब नारी सुरक्षित नहीं है। वर्तमान समय में स्त्रियों के साथ घरेलू हिंसा अधिक होने लगी है। दहेज–हत्या, कन्या–भ्रूण हत्या, ऑनर किलिंग, पर्दा–प्रथा, शारीरिक, मानसिक दुर्व्यवहार, बाल–विवाह, सती–प्रथा आदि घरेलू हिंसा के विभिन्न प्रकार व स्वरूप हैं, जिनकी गणना किया जाना सम्भव नहीं है। प्रस्तुत शोध पत्र घरेलू हिंसा के विभिन्न स्वरूपों व प्रकारों के समाजशास्त्रीय विश्लेण का लघु प्रयास है। अध्ययन से सम्बन्धित तथ्य प्राप्त करने के लिए विभिन्न पत्र–पत्रिकाऐं, इण्टरनेट, विभिन्न संगठनों की रिपोर्ट को द्वितीयक तथ्यों के स्त्रोत के रूप में प्रयोग किया गया है। शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य घरेलू हिंसा के विभिन्न स्वरूपों व प्रकारों को समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में देखना है।

**संकेत शब्द** :– घरेलू–हिंसा, उत्पीड़न, यौन–हिसां, आर्थिक हिंसा, मानसिक दुर्व्यवहार।

महिलाओं को समाज में उनका उचित स्थान प्राप्त हो। इस हेतु संयुक्त राष्ट्र संघ व देश की केन्द्रीय व राज्य सरकारों द्वारा अनेकों प्रयास किये गये हैं, फिर भी विश्व स्तर पर स्त्रियों की स्थिति में गिरावट देखने को मिल रही है और स्त्रियों को उनके अधिकारों से वंचित किया जा रहा है। स्त्रियों के अधिकारों के हनन का एक मुख्य प्रचलित तरीका उनके विरूद्ध हिंसात्मक कृत्य है। हिंसा की अवधारणा शक्ति के साथ जुड़ी है और सामान्य शब्दों में कहें तो हिंसा के भीतर शक्तिशाली सदैव विजयी होते हैं जबकि शक्तिहीन हार के भागीदार बन जाते हैं। स्त्रियों के साथ उत्पीड़न, अत्याचार तथा प्रताड़ना वर्तमान युग का एक सार्वभौमिक सत्य है। परिवार में पति द्वारा, समाज में उच्च वर्ग द्वारा तथा कार्यस्थल पर अधिकारियों द्वारा स्त्रियों के साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता है, स्त्री ना बाहर सुरक्षित है और न ही घर में। घर जो कि स्त्री के लिए सुरक्षित स्थल समझा जाता था, वहाँ भी अब नारी सुरक्षित नहीं है। वर्तमान समय में स्त्रियों के साथ घरेलू हिंसा का स्तर काफी बढ़ गया है। अशिक्षा, सामाजिक बन्धन, धार्मिक विश्वास, आर्थिक परतंत्रता, पारिवारिक दबाव की बेडियों में जकड़ी नारी बड़ी ही बेबस व विवश दिखाई देती है। दहेज हत्या, कन्या–भ्रूण हत्या, ऑनर किलींग, पर्दा–प्रथा, शारीरिक,

मानसिक दुर्व्यवहार, बाल–विवाह, सती प्रथा, विधवा–पुनर्विवाह निषेध आदि घरेलू हिंसा के विभिन्न स्वरूप हैं। यद्यपि घरेलू हिंसा के समस्त प्रकार व स्वरूपों की गणना करना और हिंसा के क्षेत्र को निर्धारित करना सम्भव नहीं है फिर भी हम यहाँ घरेलू हिंसा के प्रमुख प्रकारों व स्वरूपों का विवेचन करेंगे।

**घरेलू हिंसा के विभिन्न प्रकार व स्वरूप–**

घरेलू हिंसा का बहुत ही व्यापक आधार है। स्त्री मात्र एक व्यक्ति ही नहीं, अपितु एक शक्ति भी है। उसका नारीत्व माँ की ममता के रूप में परिलक्षित होता है फिर भी इसी नारी के साथ हिंसा, अपराध व शोषण देखने को मिलता है। दिसम्बर 1993 को संयुक्त राष्ट्र की महासभा में लिण्डमार्क के महिलाओं के प्रति हिंसा निष्कासन की घोषणा को स्वीकार किया गया जिसके भीतर महिलाओं के प्रति हिंसा को सात भागों में विभक्त किया गया। जो कि निम्न प्रकार हैं–

1. समुदाय तथा परिवार के भीतर शारीरिक, भौतिक तथा मनोवैज्ञानिक हिंसा जिसमें पत्नी को पीटना, लड़की का अनैतिक शोषण, दहेज सम्बन्धी हिंसा, वैवाहिक बलात्कार, महिला जनन अंगों की काँट–छाँट तथा अन्य महिलाओं के प्रति घातक पारम्परिक क्रियाऐं।
2. अवैवाहिक हिंसा
3. असंतोष आधारित हिंसा
4. शैक्षणिक संस्थानों एवं अन्य स्थानों में कार्य स्थल पर धमकी तथा यौन उत्पीड़न।
5. महिला को बेचना तथा व्यापारीकृत करना।
6. वैश्यावृत्ति हेतु दबाव डालना।
7. राज्य द्वारा क्षमादान तथा अपराधी हिंसा

- विश्वभर में हर तीन में से एक 15 साल से अधिक उम्र की स्त्री–हिंसा से उत्पीड़न है।
- हर 4 में से एक देश में घरेलू हिंसा के विरूद्ध कोई कानून नहीं है।
- एक बिलियन से अधिक महिलाओं को घरेलू आर्थिक व यौन हिंसा के विरूद्ध कोई कानूनी सहायता प्राप्त नहीं है। (विश्व बैंक)
- दुनिया भर में 3 में से एक महिला द्वारा यौन मारपीट या अंतरंग साझेदार की हिंसा का सामना किया गया है। विश्व स्तर पर महिलाओं की कुल होने वाली हत्याओं में से 38 प्रतिशत हत्याऐं पुरूष अंतरंग साझेदार द्वारा की जाती है।(WHO)

1989 से 1995 तक विभिन्न राज्यों की घरेलू हिंसा व महिलाओं के प्रति भारतीय दण्ड संहिता के तहत् निम्न छः प्रकार के अपराध देखने को मिलते हैं।

 ISBN: 978-81-993143-8-2

1. **बलात्कार–** जेल में महिला कैदियों के साथ अधीक्षकों द्वारा, अपराध संदिग्ध महिलाओं का पुलिस द्वारा, महिला रोगियों का हॉस्पिटल के कर्मचारियों द्वारा, दैनिक वेतन भोगी महिलाओं के साथ ठेकेदारों द्वारा, यहाँ तक की गूंगी, बहरी, पागल व अंधी भिखारिनों तक का बलात्कार किया जाता है।

2. **भगा ले जाना और अपहरण करना–** स्त्रियों के साथ जबरदस्ती विवाह या अवैध मैथुन करने के उद्देश्य से बलपूर्वक, छलपूर्वक या धोखेबाजी से बहला फुसलाकर भगाना भी स्त्री के प्रति अपराध है।

3. **हत्या–** क्रोध, उत्तेजना, घरेलू झगड़े, अवैध सम्बन्ध और महिलाओं की लम्बी बीमारी के कारण महिलाओं की हत्या कर दी जाती है और हत्यारा अधिकांशतः परिवार का ही सदस्य होता है।

4. **दहेज हत्याऐं–** दहेज के लालच में ससुराल वालों द्वारा बहु को शारीरिक व मानसिक यातनाऐं देने के साथ–साथ उनकी हत्या तक कर दी जाती है।

5. **पत्नी को पीटना–** विवाह के पश्चात् ही पुरूष मानता है कि उसे पत्नी को पीटने का अधिकार मिल गया है। सामाजिक दबाव व परिवार की इज्जत व गृहस्थी टूटने के डर के कारण पीड़ित महिला पुलिस व न्यायालय की शाखा में नहीं जा पाती है जिसके फलस्वरूप हिंसा की आवृति और तीव्रता और बढ़ती जाती है।

6. **विधवाओं के विरूद्ध हिंसा–** विधवा स्त्रियों के साथ, मारपीट, भावात्मक उपेक्षा, यातना, गाली गलौज करना, लैंगिक दुर्व्यवहार, सम्पति से वंचित करना, उनके बच्चों के साथ गलत व्यवहार किया जाना सामान्य बात है। विधवा स्त्रियों के साथ समाज व परिवार भी उनके जीवन जीने की सुख–सुविधाओं में कटौती कर देता है।

**पति द्वारा घरेलू हिंसा से उत्पीड़ित महिलाऐं**

| राज्य | पीड़ित महिलाऐं (%) में |
|---|---|
| क्र्नाटक | 44.00 |
| बिहार | 40.00 |
| मणिपुर | 39.00 |
| तेलंगाना | 36.00 |
| असम | 22.00 |
| आंधप्रदेश | 30.00 |

स्त्रोत – 5th NFHS सर्वे (2019.21)

सामाजिक हिंसा जैसे पत्नी/पुत्रवधु को कन्या भ्रूण हत्या के लिए विवश करना, स्त्रियों से छेड़छाड़ कर सम्पत्ति में स्त्री को हिस्सा देने से इंकार करना, अल्पवयस्क विधवा को सती होने के लिए मजबूर करना, पुत्रवधु को दहेज के नाम पर सताना। परिवार के सदस्यों द्वारा यौन शोषण कई महिलाऐं जिनमें विशेषतः विधवा स्त्रियों के साथ परिवार के ही पुरूष सदस्य जैसे– देवर, जेठ, श्वसुर आदि द्वारा स्त्री का यौनशोषण किया जाता है। आर्थिक रूप से आश्रित महिलाओं के साथ इस प्रकार के बलात्कार अधिक होते हैं।

घरेलू हिंसा से संरक्षण अधिनियम–2005 घरेलू हिंसा व उत्पीड़न की व्यापकता व तीव्रता को देखते हुए सन् 2005 में घरेलू हिंसा से संरक्षण अधिनियम 2005 लागू किया गया है। उक्त अधिनियम में घरेलू हिंसा के 4 प्रमुख प्रकार बताए गए हैं, जिसमें हिंसा व उत्पीड़न का व्यापक क्षेत्र सम्मिलित है, वे निम्न प्रकार हैं –

1. **शारीरिक हिंसा–** ऐसा कृत्य जिससे महिला को शारीरिक पीड़ा एवं हानि (चोट) होती है। जीवन अंग या स्वास्थ्य का संकट उत्पन्न हो जाता है या स्वास्थ्य के विकास का ह्रास होता है। इसमें प्रहार, आपराधिक भय और आपराधिक बल शामिल है।

2. **यौन दुर्व्यवहार–** यौन प्रकृति का आचरण जो स्त्री की प्रतिष्ठा का दुरूपयोग करता है एवं उसे अपमानित करता है, बदनाम करता है या लज्जा भंग करता है।

3. **मौखिक और मानसिक दुर्व्यवहार–** अपमान, मजाक बनाना या नीचा दिखाना अनादर, नाम बुलाना या नीचा दिखाना, तथा शारीरिक चोट पहुँचाने हेतु धमकियाँ देना।

4. **आर्थिक बल–प्रयोग–** बच्चों के लिए खाना, कपड़ा, दवाईयाँ उपलब्ध न कराना, रोजगार चलाने से रोकना या उसमें रूकावट डालना, वेतन इत्यादि से प्राप्त आय को ले लेना, घर से निकलने से लिए विवश करना, निर्धारित वेतन या पारिश्रामिक न देना।

उपर्युक्त प्रकार से प्रभावित स्त्री घरेलू हिंसा से पीड़ित मानी जाएगी। इस हेतु प्रभावित महिला के पास विकल्प है कि वे दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 व घरेलू हिंसा की संरक्षण की धारा 12 में से किसी भी एक में आर्थिक सहायता प्राप्त कर सकती है। घरेलू हिंसा व उत्पीड़न के सैद्धान्तिक परिप्रेक्ष्य को देखने के बाद हम कह सकते हैं कि लड़के–लड़की में भेद करना, पुरूषों के समान शिक्षा, निर्णय की स्वतंत्रता, पौष्टिक भोजन आदि प्रदान न किया जाना, कन्या–भ्रूण हत्या के लिए दबाव बनाना, पुत्र को जन्म न दे पाने के कारण मानसिक व शारीरिक प्रताड़ना भी घरेलू हिंसा व उत्पीड़न में सम्मिलित है।

 ISBN: 978-81-993143-8-2

## राजस्थान में पाँच वर्षों में महिला हिंसा के आँकड़े

| वर्ष हिंसा के स्वरूप | 2017 | 2018 | 2019 | 2020 | 2021 |
|---|---|---|---|---|---|
| दहेज हत्या | 457 | 404 | 452 | 479 | 395 |
| खुदकुशी के लिए उकसाना | 153 | 153 | 186 | 190 | 175 |
| महिला उत्पीड़न | 11508 | 12250 | 18432 | 13765 | 14709 |
| दुष्कर्म | 3305 | 4335 | 5997 | 5310 | 5452 |
| छेड़छाड़ | 4883 | 5249 | 6802 | 8661 | 7864 |
| अपहरण | 38 | 4247 | 5907 | 4739 | 5088 |
| अन्य | 1417 | 956 | 1379 | 1224 | 1065 |

स्त्रोत – etvbharat.com

**हिंसा की आसान शिकार स्त्रियाँ– हिंसा के लिए सबसे आसान शिकार जो स्त्रियाँ होती हैं वे निम्न प्रकार हैं–**

- असहाय व अवसादग्रस्त स्त्रियाँ।
- दबावपूर्ण पारिवारिक स्थितियों में रहने वाली महिलाऐं।
- जिन महिलाओं में सामाजिक परिपक्वता की कमी हो।
- जिनके पति/ससुराल वालों का विकृत व्यक्तित्व है।
- जिनके पति शराब का अत्यधिक सेवन करते हैं।

उपर्युक्त महिलाऐं घरेलू हिंसा व उत्पीड़न के लिए आसान लक्ष्य होती है। ऐसी महिलाओं के साथ हिंसा व अपराध की आवृति व तीव्रता दोनों अधिक देखने को मिलती है। जिस प्रकार ये स्त्रियाँ अधिक हिंसा की शिकार होती हैं, उसी प्रकार उन व्यक्तियों के व्यक्तित्व का भी विश्लेषण किया जा सकता है। जो कि स्त्रियों के प्रति तुलनात्मक रूप से अधिक हिंसक होते है।

**स्त्रियों के प्रति हिंसक व्यक्तियों की चारित्रिक विशेषताऐं –**

1. जो अवसाद ग्रस्त होते हैं, जिनमें हीन भावना होती है और आत्म सम्मान कम होता है।
2. जिन्हें व्यक्तित्व के दोष होते हैं और जो मनोरोगी होते हैं।
3. जिनके पास संसाधनों, प्रवीणताओं और प्रतिभाओं का अभाव होता है और जिनका व्यक्तित्व समाज– मनोवैज्ञानिक रूप से विकृत होता है।
4. जो प्रभुत्व, अधिकार पूर्णता व शक्की प्रवृति के होते हैं।

5. जिन्होंने स्वयं के पारिवारिक जीवन में तनाव को महसूस किया है।

6. जिनके साथ बाल्यकाल में हिंसा हुई है।

7. जो अत्यधिक शराब का सेवन करते हैं।

स्पष्ट है कि स्त्रियों के प्रति हिंसा करने वाले व्यक्तियों में विशिष्ट चारित्रिक व मानसिक विशेषताऐं होती हैं जो उन्हें ऐसा करने के लिए उकसाती हैं ये विशेषताऐं व्यक्ति अपने बाल्यकाल से ही अपने परिवार के माहौल से प्राप्त करता है। बाल्यावस्था में तनावपूर्ण पारिवारिक जीवन व हिंसा के शिकार व्यक्ति स्त्री के प्रति अपराध व हिंसा अधिक करते हैं।

**निष्कर्ष–**

भारत वर्ष में घरेलू हिंसा और उत्पीड़न की स्थिति इतनी विकट है कि पढ़े लिखे राजनेता भी अपनी पत्नी को काटकर तन्दूर में झोंक देते हैं। परिवार व समाज की इज्जत बचाने के लिए घर की लड़कियों, उनके प्रेमी पति व बच्चों तक की हत्या कर दी जाती है। दहेज के नाम पर बहुओं को आज भी जला दिया जाता है। गर्भ में ही कन्या भ्रूण खत्म कर दिये जाते हैं। अब समय है सरकार द्वारा चलाई गई योजनाओं से स्त्रियों के आत्मबल में वृद्धि और शिक्षा के प्रसार द्वारा इस अमानवीय कृत्य पर रोक लगाई जाए, जिससे नारी भी पुरूष के समान ही स्वतंत्रता, समानता व न्याय का अधिकार पा सके।

**सन्दर्भ –**


1. आहुजा, राम (2001), 'सामाजिक समस्याऐं' रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर

2. आहुजा, राम, आहुजा, मुकेश (2015) "विवेचनात्मक अपराधशास्त्र" रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर

3. अंजलि (2005), 'भारत में महिला अपराध', राधा पब्लिकेशन नई दिल्ली।

4. बबेल बसंतीलाल (2022) अशोका लॉ हाऊस, नई दिल्ली

6. गौड़, संजय (2006), 'आधुनिक महिलाऐं और समाज–उत्पीड़न, अत्याचार एवं अधिकार', बुक एनक्लेव जयपुर

7. घरेलू हिंसा से संरक्षण अधिनियम (2005) और घरेलू हिंसा से संरक्षण अधिनियम–2006 कानून प्रकाशक, जोधपुर

8. राजोरिया, शोभा (2011) 'महिला और कानून', ब्ल्यू स्टोर इन्दौर

9. रोहतगी अनिला (2010) 'प्राचीन भारत में नारियों का शोषण' साहित्य रत्नालय, कानपुर


 **ISBN: 978-81-993143-8-2**

१०

# भारत में न्यायिक सक्रियता: जनहित याचिकाओं के सन्दर्भ में

**डॉ महेश सिंह राठौड़**
**सहायक आचार्य,**
**राजनीति विज्ञान विभाग,**
**ओंकारमल सोमानी कालेज, जोधपुर**

## परिचय

भारतीय संविधान के तहत, देश में न्याय स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुत्व सुनिश्चित करने की मुख्य जिम्मेदारी राज्य की है। राज्य का दायित्व है कि वह मौलिक अधिकारों की रक्षा करे और राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तों को लागु करें। राज्य को अपनी जिम्मेदारियों से भागने से रोकने के किए भारतीय संविधान ने न्यायपालिका को राज्य के कार्यों की समीक्षा करने की अन्तर्निहित शक्तियां प्रदान की है। इस सन्दर्भ में न्यायपालिका को भारतीय संविधान का संरक्षक और रक्षक माना है। अपने संवैधानिक कर्तव्यों के तहत. न्यायपालिका ने, राज्य के अन्यायपूर्ण और अनुचित कार्यों या अकर्मण्यताओं के खिलाफ व्यक्तियों के मौलिक अधिकारों की रक्षा करने में जब भी आवश्यकता हुई, सक्रिय भूमिका निभाई है।.

'ब्लैक' की विधी शब्दकोष न्यायिक सक्रियता को इस प्रकार परिभाषित करती हैं, "न्यायिक निर्णय लेने का एक दर्शन जिसके तहत न्यायाधीश अन्य कारको के साथ साथ सार्वजनिक नीति के बारे में अपने व्यक्तिगत विचारों को अपने निर्णयों का मार्गदर्शन करने की अनुमति देते हैं।" न्यायिक सक्रियता तब होती हैं जब कोई न्यायाधीश ऐसे निर्णय लेते है जो नए कानून को बनाते हैं या मौजुदा कानून को बदलते हैं। कानून में जो कहा गया है उस पर अड़े रहने के बजाय न्यायाधीश अपने निर्णय को आकार देने के लिए स्वयं की मान्यताओं और मूल्यों का उपयोग करते हैं। इसका अर्थ है कि कानून को अपने विचारों के अनुरूप विस्तारित या पुनर्व्याख्यायित किया जाये।

न्यायिक सक्रियता के सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रभाव हो सकते है। समर्थकों का कहना है कि न्यायिक सक्रियता न्यायाधीशों को व्यक्तिगत अधिकारों रक्षा करने और कानून को अधिक निष्पक्ष बनाने की अनुमति देती है जबकि इसके आलोचको का मानना है कि यह न्यायाधीशों की उचित भूमिका के विरुद्ध हैं। यह निर्वाचित पदाधिकारियों की कानून बनाने कि शक्ति को कमजोर करती है। हालांकि इसमें कोई सन्देह नहीं कि भारत में न्यायिक सक्रियता ने कानून और सार्वजनिक नीति को आकार देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

## भारत में न्यायिक सक्रियता की शुरुआत

भारत में न्यायिक सक्रियता का सूत्रपात करने का वास्तविक श्रेय मुख्यत: उच्चतम न्यायालय को है, जिसने न्याय प्रक्रिया की जटिलताओं को शिथिल करते हुए न्यायालयी

प्रक्रिया को सरल बनाने का भरसक प्रयास किया। जनसाधारण को व्यापक रूप से न्याय मिल सके, इसके लिये नई नीति, नये साधन तथा नये अनुतोष का सृजन किया गया ताकि सामाजिक न्याय को प्राप्त किया जा सके। लोकहित वादों के माध्यम से विद्वान न्यायाधीशों ने मानवधिकार सम्बन्धि विधी–शास्त्र को अधिक व्यापक एवं व्यवहारिक बनाने का प्रयास किया।[1]

मामला दायर करने हेतु 'सुनवाई के अधिकार' के नियम को अधिक उदारता से लागू किये जाने पर बल देते हुए उच्चतम न्यायालय के न्यायमूर्ति वी. आर. कृष्णा अययर ने 'दाभोलकर मामले' में अभिनिर्धारित किया कि किसी जन हितैषी व्यक्ति को यह अवसर अवश्य मिलना चाहिये कि वह उपेक्षित, वंचित अथवा बेदखल हुए गरीब व्यक्ति की ओर से न्यायालय में याचिका दायर कर अनुतोष या न्याय की माँग कर सके। भले ही उस व्यक्ति का उस मामले में कोई प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष निजी हित न हो। इस प्रकरण में महाराष्ट्र की 'बार काउन्सिल' को व्यक्ति मानते हुए 'बार काउन्सिल ऑफ इण्डिया' की अनुशासन समीति के निर्णय के विरुद्ध 'बार काउन्सिल ऑफ इण्डिया' में अपील का अवसर दिया जाना उचित आना गया क्योंकि यह जनहित में विधी–व्यवसायियों के व्यवहारिक आचरण और नैतिकता बनाये रखने की दृष्टि से परम आवश्यक था। [2]

तत्पश्चात सन् 1978 में, मेनका गाँधी के प्रकरण में उच्चतम न्यायालय ने संविधान के अनुच्छेद 21 के सन्दर्भ में 'विधी द्वारा स्थापित प्रक्रिया' का व्यापक अन्वेषण करते हुए अभिनिर्धारित किया कि इसमें सारभूत तथा प्रक्रियात्मक दोनों ही प्रकार की विधी की सम्यक प्रक्रिया अभिप्रेरित है।

सन् 1979 में "हुसैन आरा खातून बनाम बिहार राज्य'' के वाद ने लोकहित मामलों के क्षेत्र को अधिक विस्तृत कर दिया। इस प्रकरण में समाचार पत्रों में प्रकाशित समाचार के आधार पर एक अधिवक्ता द्वारा बिहार की जेल में विचाराधीन कैदियों की दुर्दशा की ओर ध्यान आकर्षित करने के लिए दायर याचिका को जनहित के आधार पर उच्चतम न्यायालय ने ग्राह्य माना । [3]

इस प्रकार हम देखते हैं कि स्वतन्त्रता के शुरु के वर्षों में भारतीय न्यायपालिका एक हद तक निष्क्रिय थी। इसकी भूमिका बहुत सीमित थी लेकिन समय के साथ न्यायपालिका के अधिक सक्रिय रुख अपनाना शुरु कर दिया विशेष रूप से 1970 से 1980 के दशक में अनेक न्यायाधीशों ने कानून और सार्वजनिक नीति को आकार देने में अधिक सक्रिय भूमिका निभानी शुरु कर भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने संविधान की व्यापक व्याख्या करना शुरु कर दिया। इसमें उन्होंने मूल अधिकारों एवं सामाजिक न्याय को महत्व दिया।.

इसी का परिणाम था कि भारत में उसी समय जनहित याचिका की शुरुआत हुई, जिससे 'सुनवायी के अधिकार' का नियम शिथिल हुआ एवं लोगों को उन लोगों की तरफ से भी अदालत जाने का अधिकार मिल गया जिनके साथ गलत व्यवहार किया गया था या हो रहा था एवं वे अपने अधिकारों की रक्षा के निमित्त अदालत जाने में असमर्थ

 ISBN: 978-81-993143-8-2

थे। 'केशवानन्द भारती बनाम केरल राज्य' (1973) ऐसा ही एक प्रसिद्ध मामला है, जिससे 'न्यायिक सक्रियता की शुरुआत माना जा सकता हैं। इस मामले में निर्णय भारत में न्यायिक सक्रियता के विकास में एक महत्वपूर्ण मोड़ साबित हुआ। उसके बाद ही भारत में न्याय पालिका कानून और सामाजिक न्याय को नया आकार देने में सक्रिय हो गई है।

## जनहित याचिकाएँ एवं न्यायिक सक्रियता

जनहित याचिकाओं को न्यायाधीश पी. एन. भगवती तथा वी. के. कृष्ण अय्यर ने 1970 के दशक में शुरु किया। इसे जे. एस. वर्मा, कुलदीप सिंह, वैंकटचैलययया जैसे अन्य न्यायाधीशों ने आगे बढ़ाया तथा जनता की अनेक समस्याओं के समाधान का प्रयास किया।.

जनहित याचिका द्वारा न्यायिक प्रक्रिया को आसान एवं सर्वसुलभ बनाने का प्रयास किया गया है। पहले की स्थिति में न्यायपालिका द्वारा दलित, पिछड़े, अनाथ एवं निर्धन लोगों को शीघ्र न्याय दिलाने के उद्देश्य से तभी कोई प्रक्रिया आरंभ की जा सकती थी जब वादी एवं प्रतिवादी पक्ष न्यायालय में उपस्थित होकर न्याय की मांग करते। जनहित याचिका में जीवन की आधारभूत जरुरतों, शोषण, पर्यावरण, बालश्रम, स्त्रियों का शोषण आदि मुद्दों पर न्यायालय को किसी भी व्यक्ति या संस्था द्वारा मात्र सूचित करने पर न्यायालय स्वयं उसकी जांच करवाकर या वस्तुस्थिति को मद्देनजर रखते हुए जनहित में निर्णय देता है।. इसी प्रकार के वाद को जनहित वाद या लोकहितवाद कहते है।

वास्तव में देखा जाये तो जनहित याचिकाओं की शुरुआत से भारतीय न्याय व्यवस्था के स्वरूप में आमूलचूल परिवर्तन आया है। पिछले लगभग चार दशकों (1980–वर्तमान तक) में न्यायपालिका का व्यवहार, क्षेत्राधिकार और वस्तुतः उसका लक्ष्य ही बदल गया है। वर्तमान में न्यायपालिका का लक्ष्य व्यक्तिगत न्याय के साथ सामाजिक न्याय की स्थापना करना है। अब न्यायपालिका केवल न्याय प्रदान करने का ही कार्य नही कर रही वरन् वह एक प्रशासक, अनुसंधानकर्ता, सुधारक एवं नीति निर्धारिक का कार्य भी कर रही हैं।

न्यायपालिका की यह सक्रियता वास्तव में कार्यकारिणी की निष्क्रियता का स्वाभाविक परिणाम थी। सामाजिक न्याय से सम्बन्धित अनेक मामलों यथा, जेलों में कई वर्षों से सुनवाई की प्रतीक्षा करते कैदी, अवैध बन्दीकरण, बच्चों, स्त्रियों एवं श्रमिकों का शोषण, जेलों एव महिला संरक्षण गृहों की अमानवीय स्थिति, पुलिस अत्याचार, बेगार आदि का निराकरण करने में कार्यकारिणी अक्षम सिंद्ध हुई।

अब सवाल ये था कि न्यायपालिका कैसे समाज में हो रहे शोषण एवं अन्याय को रोके क्योंकि इसमें कुछ बाधाएँ थी। प्रथम तो उसे कार्यकारिणी के क्षेत्र में प्रवेश करना पड़ता एवं न्यायिक प्रक्रिया को सरल एवं सुलभ बनाने हेतु कुछ स्वरोपित प्रतिबन्ध भी बाधक थे, इनमें सबसे मौलिक प्रतिबंध यह था कि न्यायालय में केवल वही व्यक्ति मुकद्द मा दायर कर सकता था जिसके कानूनी अधिकारों का अतिक्रमण हुआ हो, इसे 'अधिकारिता' कहा जाता है। दूसरा प्रतिबंध यह था कि न्यायालय किसी भी अवैधानिक

मामले में तब तक संज्ञान नहीं ले सकता था तब जब तक वह मामला औपचारिक रूप से न्यायालय के सामने ना लाया जाये।

संविधान लागू होने के बाद 25–30 वर्षों तक भारत की न्यायपालिका ने उपरोक्त प्रतिबन्धों का अनुपालन करते हुए नकारात्मक भूमिका अदा की लेकिन जब कार्यकारिणी की उदासीनता एवं स्वेच्छाचारिता अपनी पराकाष्ठा पर पहुंच गई तब न्यायपालिका ने अपने पारंपरिक प्रतिबन्धों को शिथिल करते हुए कार्यपालिका के क्षेत्र में प्रवेश किया। वास्तविकता यह है कि 'अधिकारिता के नियम' को शिथिल करने का परिणाम ही 'न्यायिक सक्रियता' के रूप में सामने आया। जनहित विवादों के आध्यम से महिलाओं, बच्चों, मजदूरों, गरीबों, शोषित तथा कमजोर वर्ग के लोगों, जेलों में बंद सुनवाई की प्रतीक्षा करते कैदी, पुलिस अत्याचार के शिकार व्यक्ति आदि समस्याओं को न्यायालय के समक्ष लाया गया और न्यायपालिका ने उनके निराकरण हेतु आवश्यक निर्देश व आदेश दिये हैं। यही नहीं, जेलों, महिला एवं बाल संरक्षण गृहों की आवासीय दशाओं को सुधारने के किए उच्चतम न्यायालय ने समय समय पर बहुमुल्य निर्देश दिये है।

प्रस्तुत शोधपत्र में उच्चतम न्यायालय द्वारा पिछले तीन से चार दशकों में विचार किये गये ऐसे ही कुछ प्रमुख जनहित विवादों का उल्लेख हम नीचे कर रहे हैं जिन्होंने भारत में न्यायिक सक्रियता की शुरुआत एवं विकास में प्रमुख भूमिका निभाई है।

न्यायिक सक्रियता के सन्दर्भ में जनहित वादों से सम्बन्धित कुछ प्रमुख प्रकरण निम्नलिखित हैं–

**1 वैधानिक स्वतन्त्रता एवं मानव गरिमा के संरक्षण हेतु न्यायिक सक्रियता –**

संविधान निर्माताओं ने मौलिक अधिकार के अध्याय में अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत वैयक्तिक स्वतन्त्रता का प्रावधान किया है, लेकिन ये मूल अधिकार पूर्ण नहीं हैं और विधि के अन्तर्गत स्थापित प्रक्रिया द्वारा किसी को भी वैयक्तिक स्वतन्त्रता से वन्चित किया जा सकता है। वैयक्तिक स्वतन्त्रता की सीमा क्या हो एवं तथा विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया कैसी हो, को पुनरावलोकित करते हुए न्यायपालिका ने इसको बहुत ही व्यापक बना दिया जो कि न्यायिक सक्रियता का स्पष्ट उदाहरण है। न्यायपालिका ने हजारों लोकहित वादों के माध्यम से यह स्पष्ट कर दिया की अनुच्छेद 21 का आशय केवल शारीरिक स्वतन्त्रता से ही नहीं है। इसमें न केवल जीवन की सभी न्यूनतम आवश्यक्ताओं का अधिकार शामिल हैं बल्कि साथ ही में व्यक्ति को मानव गरिमा से शुद्ध पर्यावरण में जीने का अधिकार भी हैं तथा मानव गरिमा के लिए आवश्यकताएं को पूरा करना राज्य का दायित्व है।

इस आधार उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्णित कुछ मामले इस प्रकार है –

**(i) 'मेनका गाँधी बनाम भारत संघ वाद' :–**

इस मामले में उच्चतम न्यायालय ने अनुछेद 21 को एक नया आयाम दिया है और इसके क्षेत्र को अत्यन्त वृहद बना दिया है। इसमे न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित

 ISBN: 978-81-993143-8-2

किया कि 'प्राण का अधिकार' केवल भौतिक अस्तित्व तक ही सीमित नहीं हैं वरन इसमें मानव गरिमा को बनाये रखते हुए जीने का अधिकार है।[4].

### (ii) खड़ग सिंह बनाम उत्तरप्रदेश राज्य वाद :–

उक्त मामले में न्यायमूर्ति आयंगर ने कहा कि दैहिक स्वतन्त्रता का प्रयोग अनुच्छेद 21 में सारगर्भित अर्थ में किया गया है, जिसके अन्तर्गत सभी प्रकार के अधिकार शामिल हैं जिनसे मिलाकर किसी भी व्यक्ति की दैहिक स्वतन्त्रता बनती है। [5]

### (iii) राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग बनाम अरुणाचल प्रदेश राज्य वाद–

इस प्रकरण में चकमा शरणार्थियों की सुरक्षा हेतु मानवाधिकार आयोग की अपील पर निर्णय देते हुए न्यायालय ने कहा कि राज्य का कर्तव्य है कि वह प्रत्येक मनुष्य के 'प्राण एवं दैहिक स्वाधीनता' की रक्षा करे चाहे वह नागरिक हो. या अनागरिक। [6.]

### 2 आर्थिक व सामाजिक सुधार एवं न्यायिक सक्रियता –

न्यायपालिका ने जनहित वादों की सुनवाई करते हुए न केवल न्याय देने तक अपने को सीमित रक्षा, वरन किसी भी माध्यम से स्वयं के सामने आने वाले आर्थिक सामाजिक सुधारों सम्बन्धी प्रकरणों में भी अपने क्षेत्राधिकार से बाहर जाकर व्यवस्था दी है। ऐसे कतिपय मामले निम्न प्रकार हैं–

### (i) बन्धुआ मुक्ति मोर्चा बनाम भारत संघ :–

श्रमिकों के हितो से सम्बन्धित यह मुकदमा 1982 में सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष आया। इसमें फरीदाबाद (हरियाणा) की पत्थर की खदानों में काम करने वाले श्रमिकों की पाशविक एवं अमानवीय दशा एवं बंधुआ की स्थिति को देखकर 'बंधुआ मुक्ति मोर्चा' नामक संगठन के अध्यक्ष स्वामी अग्निवेश ने सर्वोच्च न्यायालय को एक पत्र द्वारा जानकारी दी।.

न्यायालय ने उक्त पत्र को रिट मानकर दो अधिवक्ताओं के एक आयोग का गठन कर इस मामले की जांच करवाई गई। आयोग की जांच में ये मामले में सत्य पाया गया। न्यायमूर्ति श्री भगवती ने निर्णय सुनाते हुए हरियाणा सरकार को बन्धुआ मजदूरों को रिहा कराने के साथ ही यह सुनिश्चित करने के आदेश दिये कि श्रमिको के कार्य की मानवीय दशाओं को उत्पन्न किया जाये। [7.]

### (ii) सुनील बत्रा बनाम दिल्ली प्रशासन वाद :–

उपरोक्त मामले में आजीवन कारावास का दण्ड भुगत रहे एक कैदी के साथ क्रूर एवं अमानवीय व्यवहार के विरुद्ध एक अन्य कैदी ने पत्र लिख कर न्यायालय को इस अमानवीय कृत्य की सूचना दी। न्यायालय ने इस पत्र को बन्दी प्रत्यक्षीकरण रिट मानकर जेल प्राधिकारियों के विरुद्ध निर्देश जारी किया कि उक्त कैदी के साथ अमानवीय व्यवहार न किया जाये एवं अपराधी व्यक्ति को दण्ड देने की उचित कार्यवाही की जाये। न्यायालय ने यह माना कि बंधी प्रत्यक्षीकरण रिट का प्रयोग केवल अवैध कारावास से

विमुक्ति के लिए ही नहीं वरन् जेल में कैदियों के विरुद्ध किये गये सभी अमानवीय व्यवहारों के विरुद्ध सरंक्षण प्रदान करने हेतु भी किया जा सकता है।

### 3 महिलाओं के हितों के सन्दर्भ में न्यायिक सक्रियता–

महिलाओं के हितों की सुरक्षा प्रदान करने एवं संरक्षित करने के किए बहुत से जनहित वाद सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष लाये गये जिनमें से कुछ निम्नलिखित है –

### (i) 1982 का दिल्ली के नारी निकेतन का मामला :–

1982 में श्रीमति चिन्नम्मू शिवदास ने उच्चतम न्यायालय का एक पत्र द्वारा दिल्ली नारी निकेतन नामक महिला उद्धार गृह की अमानवीय दशा की तरफ ध्यान आकर्षित करवाया। न्यायालय ने इस पत्र को याचिका के रूप में मान्यता देकर उक्त मामले का निस्तारण करवाया जो कि विशेष रूप से महिलाओं को एक विशेष समय के दौरान सेनेट्री नैपकिन उपलब्ध करवाने से सम्बन्धित था। इस मामले से न्यायपालिका ने यह सिद्ध किया कि वह महिला–अधिकारों के प्रति वह कितना जागरुक व चिन्तित रही।

### (ii) उपेन्द्र बख्शी बनाम उत्तरप्रदेश राज्य वाद :–

एक अन्य मुकदमे 'उपेन्द्र बख्शी बनाम उत्तरप्रदेश' राज्य मामले में आगरा में स्थित 'महिला प्रोटेक्शन होम' में व्याप्त अमानवीय दशाओं की ओर ध्यान आकृष्ट कराया गया था। याची की ओर से यह कहा गया था कि उक्त होम में रहने वाली लड़कियों के लिए स्नानगृह नहीं है एवं शौचालयों के दरवाजे नहीं हैं।

### 4 समाज के कमजोर वर्गों के हित में न्यायिक सक्रियता –

जनहित याचिकाओं का मूल उद्देश्य समाज के उन वर्गों को न्याय दिलाना हैं जो सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से निर्बल है। इस वर्ग से सम्बंधित कुछ मामलो सर्वोच्च न्यायालय ने नीति–निर्धारक की भूमिका अदा की है–

### (i) 'आजाद रिक्शा पुलर्स यूनियन अमृतसर बनाम पंजाब राज्य :–

1976 में पंजाब सरकार ने एक अधिनियम पारित किया जिसमें प्रावधान था कि रिक्शा मालिक अपना रिक्शा किसी दूसरे को किराये पर ना देंगे। यानि रिक्शा वो ही व्यक्ति चला सकेगा जिसका स्वयं का रिक्शा होगा। इस अधिनियम का, तुरन्त प्रभाव यह पड़ा कि अधिसंख्य रिक्शा चलाने वाले अपनी दैनिक आजीविका से वंचित हो गये, तब उपरोक्त रिक्शा चालक यूनियन ने इस अधिनियम को सर्वोच्च न्यायालय में चुनौति दी। सर्वोच्च न्यायालय ने इस अधिनियम को अवैध घोषित करने के बजाय पंजाब नेशनल बैंक द्वारा रिक्शा चालकों को रिक्शा खरीदने के लिए ऋण देने की एक योजना तैयार करने हेतु बैंक को आवश्यक निर्देश जारी किया । इस प्रकार सर्वोच्च न्यायालय ने एक नई रोजगार नीति प्रतिपादन किया एवं असंख्य रिक्शा चालकों को बेरोजगार होने से बचा लिया।[9]

 ISBN: 978-81-993143-8-2

**(ii) मुम्बई के फुटपाथ व्यवसायियों (ओल्गा तेलिस बनाम बम्बई म्युनिसिपल कारपोरेशन., 1985)**

यह मामला भी सार्वजनिक हित संरक्षण मे सम्बन्धित है। मुख्य न्यायाधीश के सामने एक पत्रकार ओल्गा तेलिस ने बम्बई के पटरीवासियों का का मामला उठाया और न्यायालय ने अन्तरिम आदेश जारी करके पटरीवासियों की सुरक्षा का इन्तजाम किया।

**5 पर्यावरण सरंक्षण एवं न्यायिक सक्रियता :–**

औद्योगिक प्रदूषण कम करने के लिए इस दशक में अनेक जनहित याचिकाओं के माध्यम से सर्वोच्च न्यायालय ने ऐतिहासिक निर्णय दिए हैं। देश भर में प्रदूषण फैलाने वाली 10,000 से ज्यादा औद्योगिक इकाइयों पर सन् 1995 में न्यायपालिका का चाबुक पड़ा। सर्वोच्च न्यायालय और गुजरात उच्च न्यायालय के निर्णय के बाद वर्ष 1995–96 में दस हजार से ज्यादा उद्योगों को या तो बन्द कर दिया गया या उन्हें चेतावनी दी गई या अन्यत्र जाने को कहा गया या फिर प्रदूषण नियन्त्रित करने को कहा गया। न्यायिक हस्तक्षेप ने सुस्त प्रदूषण नियन्त्रण बोर्डों और शहरी निकायों को झकझोर दिया और सरकारी एजेंसियां अब समाधान ढूंढने में उद्योगों की सहायता करने लगी है।

1995 में प्रसिद्ध वकील एम.सी. मेहता की अपील पर न्यायालय ने अपने आदेश में कहा कि जूता और ढलाई उद्योग से आगरा का पर्यावरण दूषित हो रहा है, अत: वहाँ पर्यावरण को बहाल करने के लिए इन उद्योगों को स्थानान्तरित किया जाए। ताजमहल के आसपास आयरन बाउंड्रियों और ईंट भट्टों के कारण इस ऐतिहासिक इमारत को खतरा बढ गया, अत: अगस्त 1995 में 508 उद्योगों का प्रदूषण घटाने या फैक्टरी बंदी का आदेश दिया। फरवरी 1995 में कोलकाता के 30 बड़े उद्योगों को प्रदूषण कम करने के लिए तीन माह की मोहलत दी गई, हावड़ा की 350 आयरन बाउंड्रियों को चेतावनी दी गई और 537 चमड़ा इकाइयों को कोलकाता से बाहर से ले जाने हुक्म दिया गया । प्रदूषण पर न्यायिक सक्रियता के कारण सबसे बड़ा बड़ा संकट दिल्ली के उद्योगों पर मंडरा रहा है, जहाँ 2064 प्रदूषणकारी ओर प्रदूषणकारी और भारी उद्योगों को दिल्ली मे बाहर जाना है या फिर बंद होना है।

**निष्कर्ष**

उपरोक्त प्रकरणों के अध्ययन करने से हमें ये ज्ञात होता है कि न्यायपालिका पूर्व की अपेक्षा वर्तमान में ज्यादा मुखर एवं सक्रिय हो चुकी हैं। वह लोगों को सामाजिक न्याय दिलाने एवं न्याय विधी के शासन की स्थापना को सुरक्षित करने हेतु कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया से इतर सोचने से घबराती नहीं हैं एवं ऐसे मामलों में अपनी भूमिका को वृहद् बनाते हुए अपने कार्य क्षेत्र से बाहर कदम रखने से भी नहीं चूकती।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि जनहित याचिकाओं ने देश में सामाजिक न्याय को सर्वसुलभ एवं सुरक्षित करने में अपना अमूल्य योगदान दिया है वही न्यायिक सक्रियता को बढाने एवं उसके विकास में भी उसकी अहम भूमिका साबित हुई है। जनहित विवादों की

सुनवाई करते हुए एवं उनपर निर्णय देने हुए न्यायपालिका की भूमिका न्याय करने वाली संस्था से एक नीति निर्धारक या सुधारक के स्वरूप में परिवर्तित हो जाती है।

विगत कुछ वर्षों में न्यायपालिका की सक्रियता बढने से जहां लोगों में उसकी ख्याति एवं लोकप्रियता भी बढ़ी है। वहीं बुद्धिजीवियों एवं राजनीतिज्ञों के बीच चर्चा एवं विवाद का केन्द्र भी बनी है। न्यायपालिका भी इस सक्रियता के सन्दर्भ में कुछ लोगों को यह लगता है कि यह अच्छी पहल हैं क्योंकि इससे लोगों के अधिकारों की रक्षा करने एवं बदलाव लाने में मदद मिलती है। अन्य लोग तर्क देते हैं कि न्यायाधीशों को कानून बनाने के बजाय उनकी व्याख्या करने तक सीमित रहना चाहिये। लोगों के अधिकारो की रक्षा करने के साथ ही सरकार की अन्य शाखाओं की भूमिका का सम्मान भी महत्वपूर्ण है। न्यायिक सक्रियता बदलाव का महत्वपूर्ण उपकरण साबित हो सकती है लेकिन न्यायाधीशों का निष्पक्ष होना एवं संविधान का सम्मान करना भी उतना ही महत्वपूर्ण है।

## संदर्भ


1. मेनन माधवः "द डाउन ऑफ ह्यूमन राइट्स ज्यूरिसप्रूडेंस'' 1987. 1 एस. सी. सी.
2. ''बार काउन्सिल ऑफ इण्डिया बनाम ए. व्ही. डाभोलकर (1996) 1. एस. सी. आर., 366 एस.सी. सी. (जे.) पी. एस.
3. ''हुसैन आरा खातून बनाम बिहार राज्य'', ए.आई.आर. 1979,एस.सी.सी. (जे.) पी.एस
4. ए.आई.आर., 1963 एस.सी 1295 (1996) एस.सी.सी., 742
5. पुखराज, डॉ. जैन व फड़िया, डॉ बी.एल., ''भारतीय शासन एवं राजनीति'' साहित्य भवन प्रकाशन, 21 वां संशोधित संस्करण, आगरा 2016, पृ.सं. 362
6. ''सईद, एस.एम., ''भारतीय राजनीतिक व्यवस्था'', भारत बुक सेन्टर प्रकाशक, लखनऊ पृ.सं. 559
7. ''सईद, एस.एम., ''भारतीय राजनीतिक व्यवस्था'', भारत बुक सेन्टर प्रकाशक, लखनऊ पृ.सं. 560


 ISBN: 978-81-993143-8-2

११

# आर्टिफिशियल इन्टेलिजेंस का मानव जीवन पर प्रभाव

**शिबा**
**सहायक आचार्य (हिन्दी विभाग)**
**श्री खुशाल दास विश्वविद्यालय, हनुमानगढ़ (राजस्थान)**

**सारांश :–**

कृत्रिम बुद्धिमता (ए॰आई॰) केवल मानव के कार्य करने तरीके को ही नहीं, बल्कि कार्य संबंधो को भी प्रभावित कर रहा है। इसका मानव के आर्थिक, सामाजिक, औद्योगिक वैयक्तिक जीवन पर अत्यंत प्रभाव पड़ा है। प्रभाव का प्रथम बिंदु सुचना प्रौद्योगिकी था, जहाँ इसे मानव बुद्धि द्वारा निर्मित सिस्टम के माध्यम से मानव बुद्धि की तरह तार्किक युक्ति के रूप में बनाया था। कृत्रिम बुद्धिमता ने मानव जीवन की वृहद चुनौतियों को दूर कर अपना एक महत्वपूर्ण स्थान बना लिया है और मानव इस पर आश्रित हो चुका है। ए॰आई॰ को चौथी औद्योगिक क्रांति भी माना गया है। प्रस्तुत शोध पत्र में ए॰आई॰ के मानव जीवन पर प्रभाव को गुण–दोषों के तुलनात्मक अध्ययन के सापेक्ष रूप में किया गया है। आर्टिफिशियल इटेलिजेंस केवल आंशिक रूप से दिखाई देता है, बिलकुल एक हिमखंड के समरुप इसे पूरी तरह से देखने के लिए सतह के नीचे देखना होगा। तकनीक मशीनो को और अधिक स्मार्ट बना रही है, मानवीय सरलता बढ़ रही है, परन्तु धन व शक्ति का अभूतपूर्व संकेद्रण होगा और यह लोगों की बढ़ती संख्या को संज्ञात्मक और मनोवैज्ञानिक रूप से डिजिटल नेटवर्क पर निर्भर बना रहा है।

**मुख्य शब्द :–**

कृत्रिम बुद्धिमता, मशीन, भावनाशून्य, तार्किक, सटीक, बुद्धि।

प्रस्तावना :–

वर्तमान युग तकनीकी युग है। तकनीक का जो चमत्कार कम्पयूटर के रूप में अवतरित हुआ, उसमें भी बड़ा क्रांतिकारी परिवर्तन ए॰आई॰ के रुप में हुआ। वर्तमान की तकनीको में ए॰आई॰ के बढ़ते प्रयोग ने उस पर मानवीय निर्भरता भी बढ़ा दी है। ए॰आई॰ के कारण व्यक्ति का जीवन में आमूल चूल परिवर्तन हुए हैं। ए॰आई॰ ने मानव के चारों ओर एक ऐसी दुनिया का निर्माण कर दिया है जो सजीव मानवीय दुनिया से भिन्न है।

**ए॰आई॰(कृत्रिम बुद्धिमता) का अर्थ :–**

कृत्रिम बुद्धिमता वह तकनीक है जो कम्पयूटर व मशीनों को मानवीय क्षमताओं के अनुरूप सीखने, समझने, समस्या समाधान, निर्णय लेने, रचनात्मक व स्वायत्ता का अनुकरण करने में सक्षम बनाती है। ए॰आई॰ शब्दावली का सर्वप्रथम प्रयोग 1955 में जॉन मैकार्थी ने किया था। ए॰आई॰ का हिन्दी अनुवाद कृत्रिम बुद्धिमता है। विस्तृत रूप में जो बुद्धिमता

मशीनों द्वारा प्रारुपित हो, विशेषकर कम्पयूटर सिस्टम द्वारा। कम्पयूटर विज्ञान के शोध के क्षेत्र तकनीकी विशेषज्ञों द्वारा बनाए गए ऐसे सॉफ्टवेयर जिससे समझ और बुद्धि का प्रयोग कर निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त किया जो सके और ऐसी तकनीकी से युक्त मशीनों को ही ए॰आई॰ कहा जाता है।

कृत्रिम बुद्धिमता का शैक्षिक अनुदेशन में प्रयोग 1956 में किया गया था। उसके बाद अनेक परीक्षणों, हताशाओं, प्रयासो का दौर आया। 2017 में इस दिशा में व्यापक प्रयोग हुए और 2020 में सैंकड़ो डॉलर का निवेश इस क्षेत्र में हुआ जिसे ए॰आई॰ लूप कहा गया।

**क्षेत्र :–**

कृत्रिम बुद्धिमता का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। सर्च इन्जिन गूगल सर्च क्रोम हो या आधुनिक टी॰वी जिनमें भाषा के माध्यम से मनचाहे चैनल और प्रोग्राम चलाए जाए ए॰आई॰ ही है। आधुनिक उपकरण चैट जी॰पी॰टी॰ एलेक्सा और सिरी, जो मानवीय आवाजों के प्रतिक्रियास्वरूप हर समस्या का समाधान बताती है जैसे समक्ष एक मानव ही प्रतिक्रिया दे रहा है।

ए॰आई॰ से युक्त डिवाइस वस्तुओं को देख व पहचान सकती है। वे मानवीय भाषा को समझ सकते हैं और तंत्र रुप से भी मानवीय निर्णयों में परिवर्तन करवा सकती है। उदाहरण के तौर पर ए॰आई॰ तकनीकी से युक्त कारें सम्भावित खतरे को देखकर स्वनिर्णय से कार की दिशा और गति में परिवर्तन कर सकती है।

**ए॰आई॰ के प्रभाव :–**

ए॰आई॰ ने निश्चित रुप से मानव जीवन के हर पहलू को प्रभावित किया है जिसके परिणम स्वरुप तकनीक पर मानवीय निर्भरता भी बढ़ी है। इसीलिए कम्पयूटर साइंस में इस तकनिक को 'इटेंलिजेंट एजेंट' कहा गया है।

**ए॰आई॰ के सकारात्मक पक्ष :–**

1. श्रेष्ठ समाधान उपलब्धता – कृत्रिम बुद्धिमता में इस प्रकार निरूपित किया जाता है कि समस्या का सर्वोत्तम समाधान उपलब्ध है। इनमें गलती होने की शून्य संभावना होती है।
   मानव की तरह इनमें गल्तियों की कोई संभावना नहीं होती
2. बिना थकावट कार्य – मानवीय क्षमता सीमित है, मानसिक व शारीरिक अक्षमताओं से कार्यक्षमता प्रभावित हो सकती है पर ए॰आई॰ उच्च तनाव की परिस्थितियों में भी समान व प्रभावी तरीके से कार्य करता है और अनुकूलन की विशेषता के कारण इनके हार्डवेयर में टूट फूट की विशेष समस्या नहीं होती।
3. उत्पादकता को बढ़ावा – ए॰आई॰ मानवीय बुद्धिमता व उत्पादकता को बढावा है। यह कई व्यक्तियों का कार्य एक व्यक्ति को करने में सक्षम बनाएगा और निपुणता में सहायता प्रदान करता है।

 ISBN: 978-81-993143-8-2

4. निर्णय लेने की क्षमता को बढावा – ए॰आई॰ विशाल डेटा संप्रेषण की सुविधा देकर निर्णय लेने की क्षमता को बढाता है डेटा का विश्लेषण कर भविषय के परिणामों की सटीक भविष्यवाणी कर सकते हैं।
5. समय व धन की बचत – प्रत्येक व्यवसाय में कुछ कार्य पुनरावृति योग्य होते हैं जिन्हें ए॰आई॰ की मदद से करके समय व धन की बचत होती है।
6. शैक्षिक प्रभाव – दोहराए जाने वाले प्रशासनिक कार्यो को अब ए॰आई॰ का प्रयोग कर स्वचालित किया जा सकता है जिससे शिक्षक शिक्षार्थियों की शिक्षा पर ध्यान दे सकता है।

   टेम्सट टू स्पीच, विजुअल रिकॉगनिशन जैसी ए॰आई॰ क्षमताओं की सहायता से विद्यार्थी अधिक समावेशी पाठों को आसनी से समझ सकते है।
7. 24ग7 उपलब्धता – ए॰आई॰ पर आधारित साधनों को मानव की तरह हर 4–5 घंटे बाद रिक्त समय नहीं चाहिए। यह हर 24ग7 बिना आराम किए प्रारम्भिक सक्रियता से ही कार्य करते हैं

**ए॰आई॰ के नकारात्मक पक्ष :–**

1. मानवीय निष्क्रियता – जितनी तकनीकी कुशलता बढ़ी है उतनी ही मानवीय निष्क्रियता भी। एक ऐसा समय था जब व्यक्ति फोन नम्बरों की लम्बी लिस्ट याद रख लेता था पर आज दो–तीन नम्बरों से ज्यादा नम्बर भी कम ही याद रखे जाते हैं। विद्यार्थी भी किसी समस्या पर खोज व मनन करने की बजाय गूगल पर सर्च करना ज्यादा पसंद करते हैं जिससे बौद्धिक क्षमता कम हुई है।
2. बेरोजगारी को बढावा – ए॰आई॰ की सटीकता व विस्तृत कुशलता ने मानवीय शक्ति की जगह ले ली है। उद्योगों में कृत्रिम मशीनों की संख्या बढ़ने से एक वृहद वर्ग को बेरोजगारी का सामना करना पड़ रहा है। मशीने न तो गलती करती है और न कार्य से छुट्टी लेती है और कम समय में ज्यादा कार्य सम्पन्न होने के कारण रोबोट ने मानव कर्मचारियों का स्थान ले लिया है।
3. ए॰आई॰ टैक्नोलोजी रचनात्मक नहीं है – मानव को प्रकृति ने एक उपहार दिया है रचनात्मकता। मानवीयता रचनात्मकता असीमित है। ए॰आई॰ का निर्माण भी मानव ने ही किया है मशीने सिर्फ एल्गोरिदम पर कार्य करती है और वह भी उतना जितना उनमें कार्यान्वित किया गया है। जबकि मानवीय रचनात्मकता पूर्व निष्कर्षो, अनुभवों और निष्कर्षो का परिणाम है जो हर दिन एक नया अवसर प्रदान करता है।
4. सुधार में कमी – कृत्रिम बुद्धिमता में हर एक कार्य को करने के लिए अलग नियम व एल्गोरिदम होता है तकनीकी सुधार हेतु हमें अपने टूल और एल्गोरिदम को बदलना होगा। व्यक्ति अपने पूर्व अनुभवों से सीखता है पर कृत्रिम बुद्धिमता अपनी गणनाओं अनुसार निर्णय लेती है।
5. नीति व भावनाओं का अभाव – ए॰आई॰ के सामान्य प्रयोग हेतु मानव में सबसे भय यही है कि उनमें नीति व भावनाओं का अभाव है जो कि मानवता के विनाश

का कारण बन सकता है और समूह नेतृत्व व समन्वय हेतु मानवीय भावनाओं का सम्प्रषण अनिवार्य है।

6. सूचनात्मक सुरक्षा में सेंध – ए॰आई॰ सिस्टम वृहद रूप से सूचनाओं पर आधारित है। इससे डाटा की सुरक्षा में सेंध लगने की आशंका है।
7. उत्तरदायित्व का अभाव – कृत्रिम बुद्धिमता स्वायत्त है, वह दिए गए निर्देशों के अनुसार निर्णय लेने में स्वतंत्र है पर व्यक्ति की तरह गुण दोषों को परखने में सक्षम नहीं है, परिणाम स्वरूप किसी भी गलत परिणाम पर वह देय नहीं है बल्कि संगठन जिम्मेदार होगा।

**निष्कर्ष :–**

कृत्रिम बुद्धिमता मानव जीवन के हर क्षेत्र में अपना स्थान बना रही है इनका प्रयोग विनिर्माण, स्वास्थ्य, सेवा, कृषि, आपदा प्रबंधन रोजमर्रा के जीवन हर क्षेत्र में प्रचुरता से हो रहा है पर मानव को मानवीयता पर कृत्रिमता को हावी नहीं होने देना है। यह निर्णय लेने की क्षमता को तो बढाता है पर यह भी ध्यान रखना है कि यह मशीन है मानव नहीं तो यह मानव के स्थान पर निर्णय न ले। महान ब्रिटिश वैज्ञानिक स्टीफन हॉकिंग ने कैब्रिज यूनिवर्सिटी में लिवरहम सेंटर फॉर द फ्यूचर ऑफ इटेंलिजेंस (एल॰सी॰एफ॰आई॰) के उद्घाटन के मौके पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा था ''मुझे लगता है आज की तारीख में मनुष्य के दिमाग और कम्पयूटर में बहुत फर्क नहीं रह गया है। ए॰आई॰ का विकास मानव सभ्यता की सबसे बड़ी कामयाबी हो सकता है लेकिन यदि इसके खतरे से निबटने के तरीके नहीं समझे गये तो यह आखिरी उपलब्धि बन कर रह जाएगी।'' इसीलिए कृत्रिम बुद्धिमता के विकास में सतर्कता व विवेक आवश्यक है।

**संदर्भ ग्रंथ सूची :–**


1. रशेल और नॉरविग (2021) च्च्च्1.4
2. स्टुअर्ट रशेल और पीटर नारविग, आटिफिशयल इन्टिलजेंस (ए माडर्न अपरोच) तीसरा प्रकाशन
3. राजीव मलहोत्रा आर्टिफिशियल इन्टेलिजेंस एण्ड फ्यूचर ऑफ पावर (5 बेटलग्राउड) (रुपा,2021)
4. डा० धीरज मल्होत्रा, बेसिक ऑफ आर्टिफिशियल इन्टेलिजेंस और मशीन लर्निंग, नोशन प्रेस,(2019)
5. शोर्घी तुसाई, आर्टिफिशियल इन्टेलिजेंस विले इन्टरडिसिपलिन्री रिव्यू (मार्च 2012)


 ISBN: 978-81-993143-8-2

१२

# 'राष्ट्र निर्माण में आदर्श शिक्षक की भूमिका, दायित्व, चुनौतियां व समाधान

डॉ. सपना प्राध्यापिका,हिन्दी,

राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय चांदना

सांराशः—

शिक्षा मानव जीवन में बहुत ही महत्वपूर्ण हैं शिक्षा सामाजिक व अन्य क्षेत्र में उन्नयन का सबसे अधिक महत्वपूर्ण और सशक्त साधन हैं शिक्षा से ही मानव का सर्वागीण विकास संभव हो पाता हैं। जॉन डीवी के शब्दो में ''शिक्षा ही एक ऐसा साधन है जो किसी भी समाज को प्रगति की और ले जा सकती है।'' सामाजिक व अन्य क्षेत्रों में उन्नयन की दृष्टि से शिक्षक एक पथ प्रदर्षक, मित्र, दार्शनिक के रूप में बहुत ही महत्वपूर्ण व्यक्तित्व होता हैं। भारतीय शिक्षा प्रणाली में एक आदर्श शिक्षक को राष्ट्रपिता, मनुष्यों का निर्माता, शिक्षा पद्धति की आधारशिला, समाज को उत्तरोत्तर गति प्रदान करने वाला आदि सब कुछ माना जाता है। शिक्षक ही लोंगो के अन्दर फैले अज्ञान के अन्धकार को दूर कर उन्हें भविष्य में आने वाली बाधाओं को दूर कर उन्हें उत्तरोत्तर प्रगति पथ की और नित नवीन राह दिखाता हैं। विद्यालय, महाविद्यालय या किसी भी क्षेत्र से संबधित प्रशिक्षण प्रदान करने में, शिक्षक ही अपने विद्यार्थी के समुचित नवनिर्माण की महती भूमिका निभाता है। शिक्षक विद्यार्थी को सही दिषा और दषा प्रदान कर उसके भविष्योन्मुखी राष्ट्र निर्माण में अपनी अद्वितीय और अनुपम भूमिका निभाता हैं। किसी भी राष्ट्र का चहुंमुखी विकास उस देष के युवा पर ही निर्भर करता हैं। अतः राष्ट्र की शिक्षा प्रणाली एक आदर्श शिक्षक और उसके दायित्व के समुचित समन्वय और क्रियान्वयन पर ही निर्भर करती हैं। हुमायुं कबीर का मत है कि ''शिक्षा पद्धति की कुषलता शिक्षको की योग्यता पर निर्भर हैं। अच्छे शिक्षकों के अभाव में सर्वोत्तम शिक्षा पद्धति का भी असफल होना अवष्यम्भावी हैं। अच्छे शिक्षकों के द्वारा शिक्षा पद्धति के दोषो को भी अधिकांषतः दूर किया जा सकता है।''

प्रस्तावनाः—

शिक्षा विद्यार्थी का सर्वांगीण विकास करके उसे बुद्धिमान, तेजस्वी, विद्वान, चरित्रवान बनाती हैं तो उसी प्रकार दूसरी और शिक्षा समाज की उन्नति के लिए एक आवष्यक एवं अत्यधिक शक्तिशाली साधन हैं। शिक्षा के द्वारा समाज भावी पीढ़ी के विद्यार्थियों को कुछ आदर्शों, आकांक्षाओं, विष्वासों एवं परम्पराओं आदि सांस्कृतिक व अन्य

सम्पति को इस प्रकार से हस्तान्तरित करता है कि उनके हृदय में देष–प्रेम, त्याग की भावना प्रज्जवलित हो जाती हैं। इस प्रकार व्यक्ति एवं समाज दोनो ही के विकास में शिक्षा का होना परम आवष्यक हैं। स्वामी विवेकानन्द के शब्दों में '' शिक्षा मनुष्य के अन्दर सन्निहित पूर्णता का प्रदर्षन हैं।'' प्राचीन काल से भारतीय समाज में गुरू का स्थान सदैव सम्माननीय और आदर्श रहा हैं। आदर्श शिक्षक की गरिमा का वर्णन गीता में इस प्रकार से किया गया है।

गुरूर्ब्रहृमा गुरूर्विष्णुः गुरूर्देवो महेश्वरः।
गुरूः साक्षात् परब्रहृम तस्मै श्री गुरवे नमः।।

अर्थात गुरू में ही ब्रहमा, विष्णु एवं महेश के दर्षन होते हैं, वे स्वयं परब्रह्म परमेश्वर हैं। अतीत में गुरू को समाज में अत्यधिक सम्मान प्राप्त था। यूनान के बादशाह सिकन्दर जब भारत को जितने की अत्यंत लालसा लिये अपनी सेना के साथ आगे बढ़ रहा था तो उसने अपने गुरू सुकरात से जानना चाहा था कि वे भारत से कौनसी वस्तु उपहार में लेना पसंद करेंगे। तब गुरू सुकरात ने कहा ''राजन विजय कर जब यहां आना हमारे वास्ते भारत से एक ज्ञानी गुरू लाना।'' परंतु वर्तमान समय में शिक्षक अपने मौलिक दायित्व से विमुख होकर व्यवासायोन्मुखी हो गया हैं। और उसका समस्त ध्यान धनोपार्जन पर हैं। भारत या किसी भी राष्ट्र के लिए उपरोक्त सभी चिन्तन का विषय है कि शिक्षक को समाज में सम्मान बनाये रखना है तो साधारण परिस्थितियों में असाधारण कार्य करने की क्षमता विकसित करनी होगी और समाज के समक्ष 'डल स्पमि ˺ डल डमेंहमˢ के साथ–साथ '। तजवस्पिमि' के रूप में उदाहरण प्रस्तुत करने होंगे।

डॉक्टर राधा कृष्ण ने कहा है कि ''शिक्षा परिवर्तन का साधन हैं जो कार्य साधारण समाज में परिवार, धर्म, सामाजिक और राजनीतिक संस्थाओं द्वारा किया जाता है वही आज शिक्षा संस्थाओं द्वारा किया जाता है।'' जॉन डीवी के शब्दों में–''शिक्षा ही एक ऐसा साधन हैं, जो किसी भी समाज को प्रगति की और ले जा सकती हैं।'' कोठारी आयोग ने इस बात पर बल दिया है, कि–''आज युग में शिक्षा ही एक ऐसा साधन है, जिसके द्वारा शांति पूर्ण ढ़ग से व्यापक सामाजिक परिवर्तन लाये जा सकते हैं। उसके शब्दों में यदि बिना हिंसक क्रान्ति के बड़े पैमाने पर परिवर्तन करना है तो केवल एक ही साधन है, जिसका प्रयोग किया जा सकता हैं और वह शिक्षा को सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक परिवर्तनों के एक साधन के रूप में परिवर्तन किया जा सकता हैं।

 ISBN: 978-81-993143-8-2

एक आदर्श शिक्षकः– एक आदर्श शिक्षक ही विद्यालय एवं शिक्षा पद्धति की वास्तविक गत्यात्मक जीवन्त शक्ति है। यह सार्वभौमिक सत्य है कि विद्यालय भवन, पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाएँ, निर्देशन कार्यक्रम, पाठ्य पुस्तकें, आदि समस्त वस्तुएँ शैक्षिक कार्यक्रम में बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं, परन्तु जब तक उनमें अच्छे शिक्षकों द्वारा जीवन–शक्ति प्रदान नहीं की जाएगी, तब तक वे सभी निरर्थक रहेंगी। शिक्षक ही वह शक्ति है जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से आने वाली सन्ततियों पर अपना सम्पूर्ण प्रभाव डालती है। शिक्षक राष्ट्रीय एवं भौगोलिक सीमाओं को लाँघकर विश्व–व्यवस्था तथा मानव जाति को उन्नति के पथ पर अग्रषित करता है। अतः यह निर्वविवाद रूप से कहा जा सकता है कि मानव समाज एवं देश की उन्नति एक आदर्श शिक्षकों पर निर्भर होती है।

भारतीय शिक्षा प्रणाली में आदर्श शिक्षक का अर्थ, परिभाषा, अवधारणा व स्थितिः–

(1) माध्यमिक शिक्षा आयोग ने अपने प्रतिवेदन में लिखा है–"अपेक्षित शिक्षा के पुनर्निर्माण में सबसे महत्त्वपूर्ण तत्व शिक्षक– उसके व्यक्तिगत गुण, उसकी शैक्षिक योग्यताएँ, उसका व्यावसायिक प्रशिक्षण और उसकी स्थिति जो वह विद्यालय तथा समाज में ग्रहण करता है, ही हैं। विद्यालय की प्रतिष्ठा तथा समाज के जीवन पर उसका प्रभाव निस्सन्देह रूप से उन शिक्षकों पर निर्भर है जो कि उस विद्यालय में कार्य कर रहे हैं।''

(2) हुमायूँ कबीर का कथन है–"वे (शिक्षक) राष्ट्र के भाग्य निर्णायक हैं। यह कथन प्रत्यक्ष रूप से सत्य प्रतीत होता है परन्तु अब इस बात पर अधिक बल देने की आवश्यकता है कि शिक्षक ही शिक्षा के पुनर्निर्माण की महत्त्वपूर्ण कुंजी है। यह शिक्षक वर्ग की योग्यता ही है जो कि निर्णायक है।"

(3) एक आदर्श शिक्षक के गुण– आदर्श शिक्षक को राष्ट्र निर्माता, मनुष्यों का निर्माता, शिक्षा पद्धति की आधारशिला समाज को गति प्रदान करने वाला, परिवार, समाज व देष आदि का कल्याण सब कुछ आदर्श शिक्षक के कंधों पर ही होता हैं।

संयुक्त राष्ट्र अमरीका में डॉ. एफ. एल. क्लैप ने सन् 1913 में एक अध्ययन किया जिसके आधार पर उन्होंने आदर्श शिक्षक के व्यक्तित्व के निम्नलिखित दस गुणों का उल्लेख किया है.

1. सम्बोधन, 2. आशावादिता, 3. उत्साह, 4. शुभचिन्तन, 5. जीवन–शक्ति, 6. वैयक्तिक आकृति, 7. संयम, 8. मानसिक निष्पक्षता, 9. सहानुभूति, 10. विद्वता।

अमरीका में बागले एवं कीथ के अध्ययन के फलस्वरूप उपर्युक्त में चातुर्य, नेतृत्व की क्षमता तथा अच्छा स्वर नामक गुण और जोड़े गये।

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधीजी ने भी खेद के साथ कहा था कि–''शिक्षकों के आदर्श एवं व्यवहार में प्रायः सामंजस्य नहीं हो पाता; वे कहते कुछ और हैं, करते कुछ और हैं।''

उपर्युक्त आधार पर एक आदर्श शिक्षक के प्रमुख गुणः का विवेचन– (1) 'वैयक्तिक गुण' (2) 'व्यावसायिक गुण' नामक शीर्षकों के अन्तर्गत किया जा रहा है–

(1) वैयक्तिक गुणः

वैयक्तिक गुण निम्न प्रकार हैं–

(1) उत्तम स्वास्थ्य एवं उत्तम जीवन का होना– उत्तम स्वास्थ्य एवं उत्तम जीवन शिक्षक का प्रमुख गुण है। अनेक परीक्षणों के आधार पर यह देखा गया है कि स्वस्थ शरीर का स्वस्थ मस्तिष्क से उच्च प्रकार का सह–सम्बन्ध होता है। हरबर्ट स्पेन्सर का मत है " जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए अच्छा प्राणी होना आवश्यक है।" यदि शिक्षक का स्वास्थ्य खराब है तो वह सफलतापूर्वक अध्यापन कार्य नहीं कर सकता क्योंकि शक्ति एवं स्फूर्ति शिक्षक के कार्य में आशावादिता, उत्साह एवं जीवन–शक्ति लाती हैं।

(2) उच्च चरित्र एवं दृढ़–संकल्प एक राष्ट्र निर्माता होने के नाते शिक्षक से अपेक्षा की जाती है कि उसका चरित्र निर्मल हो और उसमें मिशनरियों की भाँति अपने कार्य के लिए उत्साह हो। यदि शिक्षक में सच्चरित्रता का अभाव है तो वह अपने छात्रों एवं समाज का उपयुक्त ढंग से पथ–प्रदर्शन नहीं कर सकता है।

(3) संवेगात्मक सन्तुलन का होना– शिक्षक में संवेगात्मक सन्तुलन का होना परमावश्यक है। इसके अभाव में वह अपने छात्रों का भावात्मक विकास करने में असफल रहेगा। यदि शिक्षक स्वयं संवेगात्मक रूप में असन्तुलित है तो इससे छात्रों को हानि ही नहीं, वरन् विद्यालय संगठन में भी बहुत सी समस्याएँ उत्पन्न होंगी।

(4) सामाजिक गुणों का होना– सामाजिक समझदारी मुख्यतः सामाजिक सम्बन्धों द्वारा अनुप्राणित विश्वास के माध्यम से प्राप्त की जाती है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति में सामाजिक गुणों का होना आवश्यक है, क्योंकि असामाजिक व्यक्ति इस विश्वास का निर्माण करने में असफल रहता है। शिक्षक को उन सामाजिक गुणों को अवश्य ग्रहण करना चाहिए, जो कि उसे कक्षा–कक्ष तथा समुदाय दोनों में सहायता प्रदान करेंगे।

 ISBN: 978-81-993143-8-2

(5) नेतृत्व की क्षमता– शिक्षक में नेतृत्व की क्षमता होना भी आवश्यक है। परन्तु शिक्षक को जिस प्रकार की नेतृत्व क्षमता की आवश्यकता है वह अन्य प्रकार के नेतृत्व से भिन्न है। शिक्षक का नेतृत्व उसके चरित्र, शक्ति, प्रभावकारिता तथा दूसरों से प्राप्त आदर पर निर्भर है, अर्थात् शिक्षक का नेतृत्व उसके व्यक्तित्व पर आधारित है। इस तथ्य पर बल देते हुए डॉ. बैलार्ड ने कहा है–"भावी शिक्षक अपने छात्रों पर अपने व्यक्तित्व का प्रभाव डालने से बहुत कम सम्बन्ध रखेगा।

(5) मित्रता एवं सहानुभूतिपूर्ण व्यवहारः– उपर्युक्त गुणों के अतिरिक्त शिक्षक में यह गुण होना चाहिए कि वह अपने छात्रों तथा सहयोगी शिक्षकों के साथ मैत्रीपूर्ण एवं सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करे। यदि शिक्षक इस प्रकार का व्यवहार अपने छात्रों के साथ करेगा तो वह उनके विश्वास को शीघ्र ही प्राप्त कर लेगा।

व्यावसायिक गुणों का होनाः

ये गुण निम्न प्रकार से हैं–

(1) अपने विषय का पूर्ण ज्ञान होना– कोई भी व्यक्ति विषय के ज्ञान के अभाव में शिक्षक नहीं हो सकता है। अतः शिक्षक के लिए यह अति आवश्यक है कि वह विद्यालय में जिस विषय का शिक्षण करे, उसका उसे पूर्ण ज्ञान हो। यदि उसका विषय सम्बन्धी ज्ञान अधूरा या छिछला होगा तो वह अपने छात्रों का विश्वासपात्र नहीं बन सकेगा। इस सम्बन्ध में एक विद्वान् का मत है "एक अयोग्य चिकित्सक मरीज के शारीरिक हित के लिए खतरनाक है।'' परन्तु एक अयोग्य शिक्षक राष्ट्र के लिए इससे भी अधिक घातक है, क्योंकि वह न केवल अपने छात्रों के मस्तिष्कों को विकृत बनाता तथा हानि पहुंचाता है। के. जी. सैयदैन ने सत्य ही कहा है. 'आप एक बर्तन में से कोई वस्तु तब तक उड़ेलकर नहीं निकाल सकते; जब तक कि आपने वह वस्तु उसमें रख न दी हो।

(2) व्यावसायिक प्रशिक्षण– शिक्षक के लिए यहाँ आवश्यक नहीं है कि वह यह जाने कि 'उन्हें क्या पढ़ाना है' वरन् उनको यह भी जानना है कि "किस प्रकार पढ़ाना है तथा किसको पढ़ाना है।" इन प्रश्नों का उत्तर जानने के लिए उसको व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त करना आवश्यक है।

(3) व्यावसायिक निष्ठावादी होना– शिक्षक को अपने विषय तथा व्यवसाय में निष्ठा रखना आवश्यक है। निष्ठा ही उसे कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करती है। यदि उसे अपने विषय एवं व्यवसाय में निष्ठा नहीं होगी तो वह अपना तथा

अपने छात्रों का विकास अवरुद्ध कर देगा। मार्क पैटिसन का कथन है "एक अच्छे शिक्षक का प्रथम गुण यह है कि वह एक अध्यापक हो और कुछ नहीं, और उसको एक शिक्षक के रूप में प्रशिक्षित किया जाये।''

(4) प्रयोग एवं अनुसन्धान में रुचि होना– आधुनिक युग शिक्षकों से यह भी माँग करता है कि उनको अपने कार्य क्षेत्र में अनुसन्धानकर्ता होना चाहिए। शिक्षा में अनुसन्धान का महत्त्व प्रतिदिन अपना आधार निर्मित करता जा रहा है। शिक्षकों को कक्षा–कक्ष समस्याओं के निराकरण के लिए वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग करके शिक्षा की प्रगति में सहयोग देना चाहिए।

(5) पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं में रुचि होना– आजकल शिक्षण कार्य कक्षा–कक्ष में दिये जाने वाले निर्देशों तक ही सीमित नहीं, वरन् इससे कहीं अधिक माना जाता है। आधुनिक विद्यालय शिक्षकों से इस बात की अपेक्षा करते हैं कि वे विषयों का ज्ञान प्रदान करने के अतिरिक्त कक्षा–कक्ष के बाहर की क्रियाओं के संगठन एवं संचालन का भी कार्य करना चाहिए।

एक आदर्श शिक्षक को अपने विषय में हमेषा सर्तरक रहना चाहिए।

1. वह वक्त का पाबन्द होना चाहिए। दूसरे शब्दों में, वह समयनिष्ठ होना चाहिए।
2. वह सभी के प्रति सहृदय होना चाहिए।
3. वह अपने प्रत्येक कार्य में निष्पक्ष होना चाहिए।
4. वह सम्मान प्राप्त करने के योग्य होना चाहिए।
5. वह प्रत्येक स्थिति में ईमानदार होना चाहिए।
6. उसको स्वयं को जानना चाहिए।
7. वह छात्रों की सम्मतियों का आदर करने वाला होना चाहिए और उनको स्वतन्त्र रूप से विचार–विमर्श करने के लिए आमन्त्रित करे।

किसी भी समाज के निर्माण में शिक्षक की भूमिका सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होती है, चाणक्य ने स्पष्ट कहा है "शिक्षक कभी साधारण नहीं होता, प्रलय और निर्माण उसकी गोद में पलते हैं।" समाज में शिक्षक की महत्वता को रेखांकित करते हुए डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने लिखा है कि "समाज में अध्यापक का स्थान अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। वह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को बौद्धिक परम्पराएँ और तकनीकी कौशल पहुंचाने का केंद्र है और सभ्यता के प्रकाश को प्रज्वलित रखने में

 ISBN: 978-81-993143-8-2

सहायता देता है।" कोठारी आयोग ने भी अध्यापकों को 'राष्ट्र–निर्माता' की संज्ञा दी है।

किसी भी राष्ट्र का आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक विकास उस देश की शिक्षा पर निर्भर करता है इसलिए आज हमारे समक्ष कई प्रश्न हैं कि आखिरकार कैसी शिक्षा व्यवस्था होनी चाहिए जो हमारे समाज के अनुकूल हो? बदलते परिवेश में शिक्षक की क्या भूमिका है? विविधता और असमानता वाले भारतीय समाज में शिक्षा व्यवस्था को कैसे समावेशी बनाया जाए?

भारतीय समाज और शिक्षा– भारतीय समाज में अनेक विविधताएँ हैं इसलिए भारतीय समाज और संस्कृति को समझने के लिए एक अंतर्दृष्टि की आवश्यकता पड़ती है। भारत के शैक्षणिक इतिहास को जानने के लिए इसके सांस्कृतिक प्रवाह को समझना होगा क्योंकि शिक्षा और समाज का शाश्वत संबंध रहा है। सभ्यता की शुरुआत से ही धर्म–दर्शन तथा शिक्षा भारतीय समाज का आधार रहा है। वैदिक काल से ही भारत शैक्षणिक स्तर पर समृद्ध रहा है। वेदों में शिक्षकों के गुण एवं कर्त्तव्य, शिष्य के गुण तथा कर्त्तव्य, शिक्षक और शिष्य का संबंध, शिक्षा की विधि, शिक्षण की विधि, शिक्षा सत्र तथा शिक्षा के विषय आदि पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है। वैदिक काल से उपनिवेशीकरण के पूर्व तक भारत में अनौपचारिक शिक्षा प्रणाली प्रचलित रही है। गुरुकुल आधारित शिक्षा प्रणाली भारतीय परंपरा का प्रमुख अंग है। नालंदा और तक्षशिला की स्थापना तथा इसके प्रभाव से भारतीय शिक्षा व्यवस्था की समृद्ध परंपरा को जाना जा सकता है। बौद्ध और जैन धर्म ने परंपरागत भारतीय शिक्षा प्रणाली में बदलाव किया, लेकिन यह स्पष्ट है कि प्राचीन शिक्षा प्रणाली धर्म पर आधारित थी।

भारतीय राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 द्वारा भारत की शिक्षा प्रणाली में आमूलचूल परिवर्तन किया गया। इसका उद्देश्य 21 वीं सदी के अनुकूल भारतीय शिक्षा व्यवस्था की संरचना को विकसित करना है। इसका प्रमुख उद्देश्य बच्चों को सिर्फ साक्षर नहीं बनाना है बल्कि उनमें सामाजिक और भावनात्मक कौशल का समुचित विकास करना है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में 2030 तक स्कूली शिक्षा के सर्वव्यापीकरण का लक्ष्य रखा गया है। इसमें पाठ्यक्रम की संरचना के साथ–साथ अध्यापन के तौर तरीकों और आकलन व्यवस्था में भी बदलाव को इंगित किया गया है। यह एक वृहद दस्तावेज है जिस पर विमर्श जारी है।

भारतीय शिक्षा व्यवस्था के समक्ष विविध चुनौतियाँ– वैश्वीकरण के इस दौर में हमारा समाज एक अज्ञात भविष्य की ओर अग्रसर दिखाई देता है। बढ़ती जनसंख्या और सीमित संसाधनों के साथ हमारे देश को नई समस्याओं का सामना करना है। भविष्य की चुनौतियों का सामना करने के लिए हमें ऐसे ज्ञान और दक्षता की आवश्यकता होगी जो हमारी समस्या समाधान में योगदान कर सके।

वर्तमान में भारत में 1200 से ज्यादा विश्वविद्यालय हैं जिनमें 65 केंद्रीय विश्वविद्यालय, 440 राज्य विश्वविद्यालय, 150 डीम्ड यूनिवर्सिटी, 400 निजी विश्वविद्यालय, 190 राष्ट्रीय महत्व के शोध संस्थान जिनमें अनेक आईआईटी एवं आईआईएम शामिल हैं। उपरोक्त संस्थानों से यदि कॉलेजों की संख्या को जोड़ दिया जाए तो यह संख्या लाखों में पहुंचती है। लेकिन इतने शैक्षणिक और शोध संस्थानों तथा मानव संसाधन की प्रचुरता के बावजूद भारत में अभी 'ज्ञान संस्कृति' का विकास और विस्तार तीव्र गति से नहीं हो पाया है। हमारी बौद्धिक संपदा का व्यवहारिक उपयोग भी ना काफी है।

- निष्कर्ष–

उपरोक्त के आधार पर कहा जा सकता है कि किसी भी राष्ट्र के निर्माण में एक शिक्षक की भूमिका सर्वोत्तम होती हैं। यदि एक आदर्श शिक्षक के द्वारा व्यवस्थित और समुचित रूप से देष के कर्मधारों का सर्वांगीण विकास उत्तरोत्तर अपनी भूमिका का निर्वहन किया जाता है, तो किसी भी राष्ट्र का निर्माण स्वतः ही हो जाता है। किसी भी राष्ट्र के लिए 75 वर्ष न तो बहुत कम होते हैं और न ही बहुत ज्यादा। पिछले 75 वर्षों में शिक्षा के क्षेत्र में हमने ऐतिहासिक उपलब्धियां प्राप्त की हैं तो कई ऐसे प्रश्न हैं जो हमारी शिक्षा व्यवस्था के समक्ष गंभीर चुनौती हैं। वैश्वीकरण और बाजारीकरण के दौर में हमारी शिक्षा व्यवस्था को भारतीय समाज के अनुकूल बनाने की जरूरत है। वर्तमान समय में विद्यार्थियों के संदर्भ में एक शिक्षक की भूमिका और भी महत्त्वपूर्ण होती जा रही है क्योंकि उसे न केवल बच्चों का बौद्धिक, नैतिक, मनोवैज्ञानिक तथा शारीरिक विकास करना है बल्कि सामाजिक, चारित्रिक, एवं सांवेगिक विकास भी करना है और यह कार्य एक आदर्श शिक्षक ही कर सकता हैं।

- संदर्भ ग्रन्थ सूचीः–

 ISBN: 978-81-993143-8-2

1. आर॰ ए॰ शर्मा (2011)। शिक्षा के दार्षनिक एवं सामाजिक मूल आधार। मेरठ आर॰ लाल बुक डिपो।
2. कपिल, एच॰ के॰ – सिंह, ममता (2023)। सांख्यिकी के मूल तत्व। आगराः अग्रवाल पब्लिकेशन।
3. पलोड़ सुनिता – लाल, आर॰बी॰ (2008)। शैक्षिक चिन्तन एवं प्रयोग। लुधियानाः कल्याणी पब्लिशर्स।
4. पाण्डेय, आर॰ (2012)। उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक। आगराः श्री विनोद पुस्तक मन्दिर।
5. कौल, लोकेश (2012)। शैक्षिक अनुसंधान की कार्य प्रणाली। नोएड़ा विकास पब्लिशिंग हाउस प्राइवेट लिमिटेड़।
6. गेरैट, एच॰ ई॰ (2001)। शिक्षा और मनोविज्ञान में सांख्यिकी के प्रयोग। लुधियाना कल्याणी पब्लिशर्स।
7. राय, पी॰ – राय सी॰ पी॰ (2012) अनुसंधान परिचय। आगराः लक्ष्मी नारायण अग्रवाल।
8. बैस्ट, जे॰ डब्ल्यू॰ (2011)। रिसर्च इन एजुकेशनं नई दिल्लीः पी॰ एच॰ आई॰ लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड़।
9. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, भारत सरकार।

१३

# "भारतीय कला पर सांस्कृतिक परिवर्तन का प्रभाव"

**डॉ. प्रियंका वर्मा**
**सहायक आचार्य–चित्रकला**
राजकीय कला कन्या महाविद्यालय, कोटा

**शोध पत्र का सार–** सांस्कृतिक परिवर्तन कला के विषय, रूप और आकार में परिवर्तन को प्रभावित करता है, यह कलाकारों को ऐसी कलाकृतियों के निर्माण हेतु प्रेरित करता है जो उनके समुदाय के अनुभवों, विश्वासों और परंपराओं को दर्शाती है। कला एक शक्तिशाली माध्यम है जो सीमाओं को पार करती है और दुनिया के विभिन्न हिस्सों के लोगों को जोड़ती है। कला के सबसे महत्वपूर्ण पहलुओं में से एक संस्कृति है, कला संस्कृति विशेष के विश्वासों और परंपराओं को प्रदर्शित करती है और लोगों के एक विशेष समूह को परिभाषित करती है। सांस्कृतिक पहचान कला के सृजन को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, कलाकारों के विषय, शैली और तकनीक को प्रेरित व प्रभावित करती है। कला का विषय व्यक्तिगत से लेकर राजनीतिक तक हो सकता है, जो उस सामाजिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक संदर्भ को दर्शाता है, जिसमें इसे बनाया गया है। उदाहरण के लिए, मैक्सिकन चित्रकार फ्रिदा काहलो के काम अक्सर पहचान, लिंग और स्वतंत्रता के लिए संघर्ष जैसे विषयों की खोज करते थे, जो उनके जीवनकाल के दौरान मैक्सिको के सांस्कृतिक और राजनीतिक परिदृश्य को दर्शाते थे। इसी तरह, जापानी कलाकार यायोई कुसामा का काम मानसिक बीमारी के साथ उनके व्यक्तिगत अनुभवों के साथ–साथ जापान में उनकी सांस्कृतिक विरासत और परवरिश को दर्शाता है। अवनीन्द्र नाथ टैगोर के चित्र तात्कालिक भारत की राजनैतिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों को प्रदर्शित करते हैं एवं भारतीय कला और संस्कृति को विदेशी दासता से मुक्त करवाने में उनके अविस्मरणीय योगदान के साक्षी हैं । सांस्कृतिक परिवर्तन उन शैलियों और तकनीकों को भी प्रभावित करता है, जिसका उपयोग कलाकार अपने सृजन में करते हैं।

**मूल शब्द–** भारतीय संस्कृति, भारतीय कला, विश्व कला, सांस्कृतिक परिवर्तन, चित्रकला, तकनीक, शैली, कला सामग्री, सांस्कृतिक विरासत ।

**शोध पत्र–**विभिन्न संस्कृतियों में अनूठी कलात्मक परंपराएँ और तकनीकें होती हैं जो पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ती हैं। उदाहरण के लिए, अफ्रीकी कला की विशेषता इसके जीवंत रंग, बोल्ड पैटर्न और लकड़ी और मिट्टी जैसी प्राकृतिक सामग्री है। इसके विपरीत, जापानी कला की विशेषता इसकी सादगी, लालित्य और कागज, स्याही जैसी सामग्रियों के उपयोग से है। इसी तरह भारतीय कला अपनी सूर्योदय के समान प्रभावशाली रंग योजना एवं भावों को प्रदर्शित करने वाली सशक्त और गतिशील रेखाओं एवं खनिज और वानस्पतिक रंगों से हाथ से बने कागज, कपड़े, भित्ति इत्यादि पर चित्रण हेतु विख्यात है । इन तकनीकों और शैलियों को अपने काम में शामिल करके कलाकार ऐसी

 ISBN: 978-81-993143-8-2

कृतियाँ बना सकते हैं जो न केवल सुंदर हों बल्कि उनकी सांस्कृतिक विरासत को भी दर्शाती हों।

कला की स्वीकृति भी सांस्कृतिक पहचान से प्रभावित होती है। हम कला को कैसे देखते हैं और समझते हैं, यह हमारी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि और अनुभवों से प्रभावित होता है। उदाहरण के लिए, एक संस्कृति में सुंदर और सार्थक मानी जाने वाली कलाकृति को दूसरी संस्कृति में अलग तरह से देखा जा सकता है। जिस सांस्कृतिक संदर्भ में कलाकृति बनाई और देखी जाती है, वह हमारी व्याख्या और समझ को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

कला हाशिए पर पड़े समूहों के प्रतिनिधित्व की दिशा में एक बढ़ता हुआ आंदोलन भी रहा है, जिसमें कलाकार अपनी सांस्कृतिक विरासत और अनुभवों से प्रेरणा लेकर कृतियाँ बनाते हैं। आज की वैश्वीकृत दुनिया में, कला सृजन में सांस्कृतिक पहचान का महत्व बढ़ गया है। कलाकार कई सांस्कृतिक स्रोतों से प्रेरणा ले रहे हैं, ऐसी कृतियाँ बना रहे हैं जो सांस्कृतिक प्रभावों के मिश्रण को दर्शाती हैं। विभिन्न सांस्कृतिक तत्वों के इस मिश्रण से अद्वितीय और अभिनव कृतियाँ बन सकती हैं जो समकालीन समाज की जटिलता और विविधता को दर्शाती हैं। कलाकारों के लिए यह आवश्यक है कि वे उस सांस्कृतिक संदर्भ से अवगत हों जिसमें उनकी कलाकृति का सृजन हुआ है, कलाकार उन सांस्कृतिक तत्वों को सम्मान और संवेदनशीलता के साथ अपने सृजन में शामिल करें।

भारतीय कला की उत्पत्ति प्रागैतिहासिक काल से देखी जा सकती है। आधुनिक समय की ओर बढ़ते हुए, भारतीय कला पर सांस्कृतिक प्रभाव के साथ–साथ हिंदू धर्म, बौद्ध धर्म, जैन धर्म, सिख धर्म और इस्लाम जैसे धार्मिक प्रभाव भी पड़े हैं। भारत संस्कृति, क्षेत्र, धर्म और भाषा में विविधताओं वाला देश है, इनसे कला भी प्रभावित हुई है। भारतीय कला का एक बड़ा हिस्सा देश के विभिन्न धर्मों और संस्कृतियों से प्रभावित है। चित्रकारी, वास्तुकला, लोक नृत्य और अन्य कला रूप भी संस्कृति और धर्म से प्रभावित हैं।

किसी भी देश के विकास में संस्कृति की अहम भूमिका होती है। संस्कृति और रचनात्मकता लगभग सभी आर्थिक, सामाजिक और अन्य गतिविधियों में खुद को प्रकट करती है। भारत जैसा विविधतापूर्ण देश अपनी बहुरंगी संस्कृति का प्रतीक है। भारत में गीत, संगीत, नृत्य, रंगमंच, लोक परंपराएँ, प्रदर्शन कलाएँ, रीति–रिवाज, चित्रकला और लेखन कला का दुनिया का सबसे बड़ा संग्रह है, यह हमारी अमूल्य सांस्कृतिक विरासत है।

सिंधु घाटी सभ्यता से लेकर भारतीय कला मौर्य, शुंग, कुषाण, गुप्त एवं अन्य मध्यकालीन राजवंशों और मुगल व यूरोपीय शासन के दौरान विभिन्न संस्कृतियों से प्रभावित हुई। भारत की बहुरंगी संस्कृतियों के अलावा, यहाँ की लोक मान्यताएँ भी कला की प्रकृति को प्रभावित करती हैं। कला विशेषज्ञों का मानना है कि धर्म जीवन जीने का तरीका है और इसका प्रभाव कलाकारों के कामों में देखा जा सकता है। भारतीय लघुचित्र शैलियों में भगवान कृष्ण एवं राम एवं अन्य हिन्दू देवी–देवताओं के चित्र बहुत अधिक संख्या में देखने को मिलते हैं, जिसके प्रेरणा स्त्रोत धर्मग्रन्थ रहे हैं । भारतीय चित्रकला और

वास्तुकला इस्लामी कला से भी प्रभावित हुई। फारसी कला के प्रभाव से भारतीय कला का एक युग बना और कलाकृतियों को कागज पर टेम्परा में लघु चित्रों के रूप में दर्शाया गया है। अगर आप गौर करेंगे तो आप भारत में हर संस्कृति और धर्म की कला को किसी न किसी तरह से खूबसूरती से दर्शाया हुआ पाएंगे। स्थानीय कलाकारों के विस्तृत काम को धार्मिक स्थलों, स्मारकों, तीर्थस्थलों इत्यादि पर देखा जा सकता है । सरल शब्दों में भारतीय भाषा, संस्कृति और धर्म ने भारतीय चित्रकला, मूर्तिकला और वास्तुकला को बड़े पैमाने पर प्रभावित किया है। भारत को बेहतर तरीके से जानने के लिए, भारतीय कलाकृतियाँ एकदम सही माध्यम होंगी।

कला की गतिशील संरचना सांस्कृतिक परिवर्तनों के साथ विकसित होती है, जिससे कलाकृति का रूप और सामग्री विस्तृत होता है । कलात्मक प्रक्रियाओं के रूप में सांस्कृतिक नवाचार, जैसे प्रकृतिवाद और आम जीवन का प्रतिनिधित्व एक महती आवश्यकता के रूप में उभरता है । कुल मिलाकर, सांस्कृतिक परिवर्तन उन तकनीकों को आकार देता है जिसमें कला सृजन होता है, कला प्रसारित की जाती है और समझी जाती है, जो सामाजिक परिवर्तन, राजनीतिक शासन और नैतिक क्षमता की समझ को प्रभावित करता है । भारतीय कला और संस्कृति क्षेत्र की क्षमता को सही मायने में उजागर करने के लिए, वर्तमान चुनौतियों की समझ हासिल करना अनिवार्य है।

भारतीय कला एक खजाना है। यह प्राचीन है और एक अलग ही अर्थ में परिपूर्ण है। यह प्राचीन काल से ही भारत की संस्कृति का एक अभिन्न अंग रहा है। हमारी सभ्यता में इसके महत्व का सबसे पुराना प्रमाण 30,000 साल पुराना है। भीमबेटका गुफा चित्र गुफाओं में शैल कला में एक आश्चर्य है। भारत की लघु चित्रकला दुनिया की सबसे जटिल और अद्भुत कला रूपों में से एक है। संक्षेप में, कला अपनी शुरुआत से ही भारत के लिए एक गौरव की बात रही है। लेकिन भारत में ब्रिटिश शासन की शुरुआत के साथ, यह पश्चिमी संस्कृति से प्रभावित हुआ। इस प्रभाव ने कई उत्कृष्ट कृतियों का निर्माण किया, लेकिन कुछ रूपों को फीका भी कर दिया। अंग्रेज अपने साथ न केवल अपनी राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक संरचनाएँ लाए, बल्कि अपनी संस्कृति, मूल्य और कलात्मक परंपराएँ भी लाए। इससे भारतीय कला में पश्चिमी विचारों और सौंदर्यशास्त्र का धीरे–धीरे समावेश हुआ, जिसके परिणामस्वरूप पूर्व और पश्चिम का एक अनूठा मिश्रण सामने आया। इसके परिणामस्वरूप चित्रकला की कई नई तकनीकें सामने आईं। तेल चित्रों की शुरूआत पश्चिमी संस्कृति से जुड़ी हुई है। तेल चित्रकला तकनीक ने लोकप्रियता हासिल की क्योंकि इसने कलाकारों को खुद को व्यक्त करने के लिए एक नई दृश्य भाषा दी। कलाकार खनिज और वानस्पतिक रंगों से परिप्रेक्ष्य, छायांकन और गहराई को जोड़कर चमत्कारिक वातावरण उत्पन्न नहीं सकते थे।

2500 से 1800 ईसा पूर्व की सिंधु घाटी सभ्यता के समय से ही मूर्तियां अस्तित्व में हैं। उस समय आम तौर पर छोटी टेराकोटा मूर्तियाँ बनाई जाती थीं। लेकिन पश्चिमी संस्कृति के प्रभाव के साथ, मूर्तिकला का विकास हुआ। मूर्तिकारों ने बड़ी मूर्तियाँ बनाने के लिए नई सामग्री, तरीके और उपकरणों का उपयोग करना शुरू कर दिया। अब मूर्तियों पर

 ISBN: 978-81-993143-8-2

अधिक जटिल पैटर्न बनाए जा सकते थे। पूर्व और पश्चिम की परंपराओं के संयोजन ने रचनात्मकता की एक नई लहर ला दी।

भारतीय कला पर पश्चिमी संस्कृति का प्रभाव सिर्फ औपनिवेशिक काल तक सीमित नहीं है। जैसे–जैसे भारत दुनिया के लिए ज्यादा खुला होता गया, यह विकसित होता गया। 20वीं सदी में, भारतीय कलाकारों ने कला के नए रूपों और शैलियों के साथ प्रयोग करना शुरू किया, जिसमें अमूर्त और पॉप कला, और अतिसूक्ष्मवाद शामिल थे, जो पश्चिमी आंदोलनों से प्रभावित थे। साथ ही, पश्चिमी संस्कृति ने दुनिया में भारतीय कला के प्रसार और विकास को प्रभावित किया। इसने प्रभावित किया कि हमारी कला को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कैसे देखा जाता है। भारतीय कलाकारों ने पश्चिमी और भारतीय शैलियों को मिलाकर वैश्विक मान्यता और सफलता हासिल की है, जिसके परिणामस्वरूप ऐसी कृतियाँ सामने आई हैं जो देखने में आकर्षक और सांस्कृतिक रूप से महत्वपूर्ण दोनों हैं। इस सम्मिश्रण ने भारतीय कला की अपील को व्यापक बनाया है, जिससे सांस्कृतिक आदान–प्रदान कार्यक्रमों, प्रदर्शनियों और भारतीय और पश्चिमी कलाकारों के बीच सहयोग में वृद्धि हुई है। इस अंतर–सांस्कृतिक निषेचन ने एक–दूसरे की संस्कृतियों की बेहतर समझ और प्रशंसा को भी सक्षम किया है, जिससे कलात्मक परिदृश्य समृद्ध हुआ है। हालाँकि, भारतीय कला में पश्चिमी कला और संस्कृति का समावेश विवादास्पद रहा है। कुछ कलाकार और आलोचक तर्क देते हैं कि इसके परिणामस्वरूप पारंपरिक भारतीय कला रूप और तकनीकें कमजोर हुई हैं। उनका मानना है कि भारतीय कला को पश्चिमी अवधारणाओं से प्रभावित होने के बजाय अपनी सांस्कृतिक और ऐतिहासिक विरासत में दृढ़ता से निहित होना चाहिए। फिर भी, पश्चिमी संस्कृति भी कई तरीकों से भारतीय कला से प्रभावित हुई है, जिसमें जटिल डिजाइन से लेकर आध्यात्मिक विषय शामिल हैं। कोई भी भारतीय वस्त्रों के जीवंत रंगों और पैटर्न को नजरअंदाज नहीं कर सकता है जिन्हें पश्चिम में संजोया जाता है। पारंपरिक रूपों के नुकसान के बारे में चिंताओं के बावजूद, पश्चिमी विचारों के आत्मसात ने भारतीय कला के विकास और विविधीकरण को जन्म दिया है, जिसके परिणामस्वरूप कला की एक नई शैली सामने आई है जो भारत के लिए अद्वितीय है। भारतीय कला पर पश्चिमी प्रभाव महत्वपूर्ण और लंबे समय तक चलने वाला रहा है, जिससे पूर्वी और पश्चिमी शैलियों का मिश्रण हुआ है। यद्यपि पारंपरिक रूपों के नष्ट होने के बारे में कुछ शंकाएं हो सकती हैं, परम्परागत कलाओं को संरक्षण की भी अत्यधिक आवश्यकता है, लेकिन पश्चिमी विचारों के आत्मसातीकरण ने भारतीय कला को नई ऊंचाइयों पर पहुंचा दिया है, जिससे यह अधिक गतिशील, विश्वव्यापी और विविधातामयी बन गई है। अतः सामंजस्य और उचित तालमेल के साथ आगे बढ़ने पर भारतीय संस्कृति से पूरी तरह सम्बद्ध भारतीय कला अवश्य ही भविष्य में विश्वस्तर पर उन्नति के नवीन आयामों पर अपना स्थान सुनिश्चित करेगी ।

## सन्दर्भ ग्रन्थ सूचि–

1. डॉ. ममता चतुर्वेदी–"समकालीन भारतीय कला", राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2008 ।

2. र. वि. साखलकर–"आधुनिक चित्रकला का इतिहास", राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2007 ।
3. आर. ए. अग्रवाल–"कला विलास–भारतीय चित्रकला का विवेचन", इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ, 2007।
4. डॉ. रीता प्रताप–"भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास", राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2008।
5. विद्यासागर उपाध्याय–"भारतीय कला की कहानी", दी स्टूडेंट्स बुक कम्पनी, जयपुर, 1998।
6. र. वि. साखलकर–"कला कोश", राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2007।
7. अविनाश बहादुर वर्मा–"भारतीय चित्रकला का इतिहास", प्रकाश बुक डिपो, बरेली, 2000।
8. डॉ. गिर्राज किशोर अग्रवाल–"कला और कलम"(भारतीय चित्रकला का आलोचनात्मक इतिहास), अशोक प्रकाशन मंदीर, अलीगढ़, 2015।
9. आर. बी. गौतम–"राजस्थान की समकालीन कला", राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर, 1989।
10- https://medium.com/@childrensartmuseum/indian-culture-art-inspiration-b3e63932d3f7

 ISBN: 978-81-993143-8-2

१४

# मानवाधिकारों की रक्षा में अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों की भूमिका

**राजेन्द्र सिंह**
वरिष्ठ अध्यापक (प्रधानाध्यापक)
राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय फतेहपुरा, अजमेर

**सारांश**

राज्य की व्यवस्था या स्थापना से पूर्व भी मानवीय सभ्यता अस्तित्व में थी और नागरिकों को वे सभी अधिकार प्राप्त थे जो कि मानव जीवनयापन के लिए आवष्यक हैं। प्राकृतिक अवस्था में मनुष्य आपसी सद्भाव व दूसरे के प्रति संवेदनषीलता के द्वारा कर्तव्यनिष्ठा से दूसरों के अधिकारों का संरक्षण तथा स्वयं के अधिकारों का प्रयोग करता था, मानव सभ्यता के विकास के क्रम में राज्य की उत्पत्ति व राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय अभिकरणों के विकास ने मानव अधिकारों को संरक्षित करने का प्रयास किया, स्पष्ट है कि मानव अधिकार राज्य विधि व किसी भी अभिकरण की उत्पत्ति या स्थापना से पूर्व मानवमात्र में अन्तर्निहित नैसर्गिक अधिकार हैं, जो उसे स्वयं के श्रेष्ठ जीवनयापन व विकास के लिए स्वतन्त्रता प्रदान करतें है, दुनिया के सभी राष्ट्रों ने अपने संविधानों में और अपने राष्ट्र में मानवाधिकारों को समुचित स्वरूप में व्यवस्थित किया और उसके उल्लंघन के लिए शास्ति व क्षतिपूर्ति जैसी दाण्डिक या निरोधक व्यवस्था का प्रावधान किया है इसके अतिरिक्त अन्तर्राष्ट्रीय पटल पर वैष्वीकरण की बढ़ती संस्कृति में जिस तरह विभिन्न राष्ट्रों के मध्य अन्तर्राष्ट्रीय निर्भरता बढ़ी है और मानवीय अधिकारों के क्षरण की सम्भावना के चलते और मानव अधिकारों की गरिमा को बनाए रखनें के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ ने सभी सदस्य राष्ट्रों के सन्दर्भ में मानव अधिकारों को परिभाषित किया है, संयुक्त राष्ट्र की मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा में उन सभी अधिकारों को मानव अधिकार माना गया है, जो कि मनुष्य के लिए सम्मान और गरिमा के साथ जीवन जीने के लिए आवष्यक हैं। संयुक्त राष्ट्र घोषणा के अनु.–1 में मनुष्य के प्राकृतिक अधिकारों के दर्षन को स्वीकारा गया है। इसके अनुसार सभी मनुष्य स्वतन्त्र पैदा हुए हैं। उनमें तर्क–वितर्क करने की क्षमता विद्यमान है तथा जाति, धर्म, लिंग व भाषा से परे उनमें प्रतिष्ठा से जीने का अधिकार अन्तर्निहित है।

**की वर्ड्स :** मानव अधिकार, अन्तर्राष्ट्रीय निर्भरता, स्वतन्त्रता, अन्तर्राष्ट्रीय अभिकरणों

**प्रस्तावना**

वैष्विक मानव अधिकारों के केन्द्रीय सिद्धान्त और पीड़ितों की ओर से प्राधिकरण का स्रोत बनने के साथ–साथ यह नागरिकों की शक्ति का स्रोत भी है। मानव अधिकार एक इंसान के रूप में हर व्यक्ति के लिए स्वभाविक और सार्वभौमिक है। मानव अधिकार इंसानों पर लागू होते है, पर ये समान रूप से सबको मिले हुए है। इसमें कोई ऑफिस, पद या रिष्ते कभी आड़े नहीं आते। गरीब हो या अमीर, चपरासी हो या मालिक, सबके लिए ये अधिकार समान है। मानव अधिकारों के आदर्षों का सर्वव्यापीकरण बीसवीं

सदी की महान् उपलब्धियों में से एक है। संयुक्त राष्ट्र के कई सम्मेलनों घोषणाओं और प्रोटोकॉल के माध्यम से इसे हासिल किया गया है। यह बर्बरता के खिलाफ एक मुहिम है। मानव अधिकार व्यक्ति,समाज और राज्य के बीच में सीमाओं की स्थापना करतें है। मानव अधिकार का दावा लोग, समूह, और सार्वजनिक अधिकारियों से खतरों की सुरक्षा का एक दावा है। मानव अधिकार अराजकता की स्थिति में खतरे में आ जाते है, क्योंकि उस वक्त कानून लागू नही हो पाता है और न्यायिक मषीनरी भी उनका बचाव नही कर पाती। ज्यादातर मामलों में नागरिकों के मानवाधिकारों को चुनौतियां और धमकियां राज्यो से ही मिलती है। पिछले एक दषक से ज्यादा समय में राज्य के मानव अधिकारों पर धमकियों और हमलों ने कई रूप धारण कर लिए हैं।

द्वितीय विष्व युद्ध की अमानवीय घटनाओं ने सम्पूर्ण विष्व को मानवाधिकारों के संरक्षण पर सोचने को विवष कर दिया था। दुनिया के विभिन्न देषों के आपसी सामरिक, सीमान्त, आर्थिक व राजनैतिक टकराव, आँतरिक विद्रोह व बाह्य आक्रमण के रूप में प्रस्फुटित होते हैं। राज्यों के आन्तरिक तन्त्र की विफलता लोकमन की नाराजगी, लोकतान्त्रिक मूल्यों का क्षरण व आर्थिक, सामाजिक विषमताएँ जन सामान्य के गरिमामयी जीवन के अधिकारों का घोर अवमान करते है। संयुक्त राष्ट्र संघ के द्वारा निर्देषित तमाम नियम–विनियम के बाबजूद भी विभिन्न देषों में मानवाधिकार के उल्लंघन के कई मामले सामने आये है। श्रीलंका सरकार द्वारा लिट्टे के विरूद्ध सषस्त्र संघर्ष में कई तमिलों के ऊपर घोर हिंसा कारित की गई, 2004 में अमेरिकी सेना की ईराक में तैनाती के दौरान ईराकी नागरिकों जिन्हें जेलों में निरूद्ध किया गया था, अमेरिकी सैनिकों द्वारा किये गये अमानवीय व्यवहारों तथा हिंसाओं के सन्दर्भ में स्वतंत्र पै
नल व पेंटागन की रिपोर्ट से स्पष्ट था कि अमेरिका जैसे विकसित देषों में मानवाधिकारों के प्रति संवेदनषीलता का अभाव है, लीबिया में तानाषाही सत्ता के विरूद्ध जनसंघर्ष में तानाषाही फौज ने विरोधियों पर अत्याचार करते हुए मानवाधिकार की सारी हदें तोड़ दी, पाकिस्तान, अफगानिस्तान जैसे राष्ट्र तालिबानी कट्टरपंथियों के आतंकवाद से त्रस्त है, सीरिया लोकतान्त्रिक समर्थकों व तानाषाही फौज के मध्य खूनी संघर्ष से रक्त रंजित है। तमाम संवैधानिक प्रावधान व उपचारों के बाबजूद भी भारत मानवाधिकारों के प्रति आदर्षों को स्थापित नहीं कर पाया है। भारत बड़ी संख्या में कुपोषित बच्चों को पालता है। घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम 2005, दहेज निषेध अधिनियम 1986, प्रसूति प्रसंविदा अधिनियम 1961, तथा कार्य स्थल पर महिलाओं के लिए विषेष निर्देष आदि नियम कानून स्थापित होने के बाबजूद न्यायालयों में दहेज, यौनषोषण, बलात्कार जैसे मामले कम होने का नाम नहीं ले रहे है। स्पष्ट है कि मानवाधिकार की दिषा में अभी भारत सहित विष्व समाज लक्ष्य प्राप्ति से दूर है। दुनिया के सभी देषों में मानवाधिकारों के प्रति अभूतपूर्व चेतना जाग्रत हो रही है जिसका परिणाम है कि कई गैर लोकतान्त्रिक राज्य लोकतन्त्र बहाली के लिए सत्ताधीषों से संघर्ष के लिए आमादा है और सफलता भी मिल रही है। एक लम्बे अरसे के बाद म्यांमार की लोकतान्त्रिक नेता आंग सान सू की कि आम चुनाव में भारी सफलता, लीबिया में गद्दाफी का अन्त, सीरिया में संघर्ष विराम लोकतन्त्र की सफलता और मानवाधिकारों की अभिवृद्धि का संकेत है।

 ISBN: 978-81-993143-8-2

## भारत में मानवाधिकार

भारतीय संविधान के भाग–3 में वर्णित मूलभूत अधिकार मानवीय अधिकार को ही विस्तृत दृष्टिकोण से परिभाषित करते हैं।

भारत में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग एक स्वतंत्र विधिक संस्था है। इसकी स्थापना 12 अक्टूबर 1993 को हुयी थी। इसकी स्थापना मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 के तहत की गई। यह आयोग देश में मानवाधिकारों का प्रहरी है, यह संविधान द्वारा अनिश्चित तथा अंतर्राष्ट्रीय संधियों में निर्मित व्यक्तिगत अधिकारों का संरक्षक है। इसका मुख्यालय नई दिल्ली है।

मानव संरक्षण अधिकार अधिनियम 1993 के आधार पर राज्य स्तर पर राज्य मानवाधिकार आयोग बना। एक राज्य मानवाधिकार आयोग भारतीय संविधान की सातवीं अनुसूची में राज्य सूची और समवर्ती सूची के अंतर्गत शामिल विषयों से संबंधित अधिकारों के उल्लंघन की जाँच कर सकता है। वर्तमान में भारत के 24 राज्यों में राज्यस्तरीय मानवाधिकार आयोग का गठन किया गया है।

संविधान के अनु. – 21 में मेनका गांधी बनाम भारत संघ के वाद में सर्वोच्च न्यायालय ने मानव अधिकारों की गरिमा व संवेदनषीलता को स्वीकार करते हुए निर्वाचित किया कि जीने का अधिकार मानव अंग का अनन्य अंग है जिसमें मानव जीवन पशुवत् नहीं है, बल्कि वे सभी अधिकार उसके लिए आवष्यक है जो कि उसके शारीरिक, मानसिक, भौतिक व सामाजिक उन्नयन के लिए वांछित है।

मानव अधिकार को लोक की आवष्यकता, तन्त्र का आधार तथा लोकतन्त्र की धुरी कहा जा सकता है, जिन राष्ट्रों में मानव अधिकारों के प्रति संवेदनषीलता नही रहती, लोकतान्त्रिक होते हुए भी वे अराजकता और आन्तरिक विद्रोह का षिकार बन जाते है। प्राचीन काल में भी राजतान्त्रिक व्यवस्था में मानवाधिकारों को पूर्ण मान्यता प्राप्त थी। अनेक प्रचीन दस्तावेजों व बाद की धार्मिक एवं दार्षनिक पुस्तकों में अनेक ऐसी अवधारणाएँ हैं जिन्हें मानवाधिकार के रूप में चिन्हित किया जा सकता है, ऐसे प्रलेखों में उल्लेखनीय है अषोक का आदेष पत्र में भी इसका उल्लेख मिलता है।

## अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मानवाधिकार

अरब में मुहम्मद द्वारा लिखित मदीना का संविधान तथा मानवाधिकारों के सन्दर्भ में ''द ट्वेल्व आर्टिकल ऑफ ब्लेक फॉरेस्ट'' (1525) को प्रमुख माना जाता है। यह जर्मनी के किसान विद्रोह में स्वाबियन संघ के समक्ष उठाई गई माँगों का ही एक हिस्सा है।

हाल के सालों में कानून के माध्यम से या प्रषासनिक फैसलों से नागरिक अधिकारों में कटौतियां की गई और मानव स्वतन्त्रता के माहौल को चुनौती मिली। यह एक प्रकार से 11 सितम्बर के पहले जैसा माहौल था। पष्चिमी देषों की सरकारों ने कभी–कभी विदेषी नागरिकों पर रोक लगा दी और उनके साथ दुर्व्यवहार किया गया। इस सबको आतंकवाद से लड़ाई का नाम दिया गया। अफगानिस्तान में

उनके सैनिक संदिग्ध लोगो को स्थानीय पूछताछ करने वालो को सौप देते है और वे ही संदिग्धों के साथ मारपीट करते है। उनके कानून प्रवर्तन अधिकारी सीधे–साधे लोगों को मृत्यु और चोट के जोखिम का बोझ थमाकर खुद निष्चिन्त रहते है। वे मानव अधिकारों की गरिमा को भूलकर हर हद पार कर जातें है। सीमा एजेंट वहां घूमने वाले लोगो के साथ इस तरह बर्ताव करते है,मानो वे इसके लिए ही पाबंद किए है। यात्राओं पर प्रतिबंध लगा देना भी इसी तरह का मानव अधिकार हनन है।

स्विट्जरलैण्ड के अच्छे कहे जाने वाले नागरिकों ने देष की मीनारों पर प्रतिबंध लगवा दिया। यह एक खराब और अनुदार लोकतन्त्र का ताजा उदाहरण है। 11 सितम्बर के बाद बने इस्लामोफोबिया (मुस्लिमों से घबराना) के चलते ही समूहों में यह उन्माद पनपा है। इस सबके पीछे एक समस्या यह है कि जो अमेरिका कल तक मानव अधिकारों का सबसे बड़ा रक्षक बनता था, वही आज इसे खत्म करने में लगा है। पूरी दुनिया ने वियतनाम और इराक में अमरीका को देखा है किस तरह उसने मानव अधिकारों की सरेआम धज्जियां उड़ाई है। जब अमरीका जैसा बड़ा और सक्षम देष ही कानून को खुलेआम तोड़ रहा है, तो वह दूसरो को मानव अधिकारों को बचाने की नसीहत कैसे दे सकता है। अमेरिका तो खुद मानव अधिकार कानूनों में मौजूद कमियों का लाभ उठाकर अपना हित साधने में लगा रहता है।

एक बार मानव अधिकारों के उल्लंघनों की सार्वजनिक भर्त्सना इस तरह की जानी चाहिए कि कोई भी इन्हें तोड़ने का कदम न उठा सके। वर्तमान में इस बात पर बहस छिड़ गई है कि आतंकवाद को रोकने के नाम पर बडे पैमाने पर यातनाओं को छूट दी जानी चाहिए या नही ? नैतिक सापेक्षवाद की गहरी जड़ों में जाकर अगर नस्लवादी सोच को हावी होने दिया जाए, तो मानवीय गरिमा को ठेस पहुँचती है। हम सब एक खास तरह के सुरक्षा घेरे में रहतें है, जहां हम दूसरों का दर्द समझ नहीं पाते। इसलिए हम अपने मानव अधिकारों को अनदेखा कर देते हैं। हमें खतरे वाले क्षेत्रों को समझना और पहचानना चाहिए और वहाँ के लोगों कि भावनाओं की कद्र करते हुए उन्हें मानव अधिकार मुहैया कराने चाहिए।

## शोध पद्धति

मानव अधिकारों के माध्यम से एक व्यक्ति राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक अधिकारियों के उत्पीड़न से रक्षा चाहता है। कानूनों को बनाने और पालन करवाने की जिम्मेदारी नौकरषाही पुलिस और न्यायिक मषीनरी के पास है और उन्हें यह देखना चाहिए कि राज्य में रहने वाले लोगों के मानव अधिकार कहाँ तक सुरक्षित है और इनका किस हद तक पालन हो रहा है। सामाजिक और धार्मिक गुट राजनीतिक एजेंडे पर कब्जा कर लेते हैं और इस प्रक्रिया को विकृत कर सकते हैं। जबकि यही प्रक्रिया समुदाय में लोगों को संतोष के साथ रहने के लिए जरूरी होती है। घृणा फैलाने वाले भाषणों के बारे में भी एक मामला बनता है। यह अपराध करने वाले के इरादे से स्थापित नहीं होता है बल्कि षिकायत करने वाले की संवेदनषीलता पर निर्भर करता हैं। विष्वविद्यालय परिसर (जो कि मुक्त भाषण के मुख्य रक्षक के तौर पर प्रसिद्ध है) में भी अगर अपमान करने की

 ISBN: 978-81-993143-8-2

स्वतंत्रता नही दी जाती तो इसे मुक्त भाषण नही समझा जाता। यही से नौजवान राजनीति ही पहली गणित सीख जाते है और दबाब के आगे झुकने से नामंजूर कर देते है। येल यूनिवर्सिटी प्रेस हाल ही में डेनिष कार्टून विवाद में फंसी थी, इसी के चलते उसने अब कार्टूनों को छापने पर मनाही कर दी है। कुछ न्यायालयों में सुनवाई से पहले मानव अधिकार आयोग (जिनके सदस्यों को सरकार नियुक्त करती है) के सामने मामला लाया जाता है। और अगर मामला झूठा हो या निरर्थक का हो तब भी षिकायतकर्ताओं पर कोई जुर्माना नहीं लगाया जाता। जबकि बचाब पक्ष अपना पेषेवर, वित्तीय और सामाजिक जीबन बर्बाद कर लेता है। आखिर में होने वाली पुष्टि अपर्याप्त सांत्वना और अपर्याप्त मुआवजा है। इस तरह के तंत्र के माध्यम से मानव अधिकारों की रक्षा करने का मतलब है कि यह राजनैतिक रूप से प्रेरित हमले हैं, जो कि करदाता के पैसे को व्यर्थ उड़ाने के लिए किए जाते हैं। नौकरषाही के लिए समाधान के मानदंड हैं – नेक इरादा, कड़ी मेहनत और उचित निगरानी। यह मानवीय मूल्यों का एक हनन है, जो मानव अधिकारों को बढ़ावा देने के नाम पर खुद को स्थापित करने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। राज्य आधारित खतरे का आखिरी जरिया है – अंतर सरकारी संगठन।

अन्तर्राष्ट्रीय मानव अधिकारों के नियमों में नरसंहार से सुरक्षा, संस्थागत नस्लीय भेद भाव से सुरक्षा, बंधुआ मजदूरी से लेकर अन्तर्राष्ट्रीय अपराधियों से मुक्ति, महिलाओं की स्थिति में सुधार, गरिमा की अवधारणा का विकास और अल्पसंख्यकों व कमजोर वर्ग का संरक्षण शामिल है। यहाँ भी समस्या है, इसे समझने के लिए एक उदाहरण है – कनाडा के एक नागरिक को संयुक्त राष्ट्र संघ की गुप्तकाली सूची में रखा गया, जिस पर अज्ञात आधार और अचुनौतीपूर्ण सबूतों के आधार पर भी न्यायिक निरीक्षण नहीं किया जा सकता।

इसका वास्तविक प्रदर्षन धूमिल हो गया है और अब महान दृष्टि खत्म हो जाने से मानव अधिकारों पर संकट मंडरा रहे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त मानव अधिकारों की रक्षा के लिए आगे आना आज की जरूरत बन चुका है। संयुक्त राष्ट्र मानव अधिकार के मामलों पर सामूहिक निकाय राज्यों से मिलकर बना है। सरकार के खिलाफ नागरिकों के दावे राजनीतिक भी हो सकते हैं, पर राज्य सरकारे पुलिस और न्यायिक मषीनरी को सषक्त बनाने की दिषा में उत्सुक नजर नहीं आ रही है और वे संयुक्त राष्ट्र के अधिकारों के लिए किये गए खास प्रयत्नों के बजाए नीतियों खुले मार्ग को कमजोर कर रही है। यहां तक की उदार लोकतान्त्रिक देष भी अक्सर राष्ट्रीय सुरक्षा और वाणिज्य लाभों के लिए मानव अधिकारों को बलि वेदी पर भेंट चढ़ा देते हैं।

पष्चिमी देष संयुक्त राष्ट्र की मषीनरी का इस्तेमाल चीन या सऊदी अरब के खिलाफ करने में उत्सुक नहीं है। मानव अधिकार परिषद को मानव अधिकार आयोग का नाम दे देने से राष्ट्रीय हित की गणना के आधार पर दोहरे मापदण्ड अपनाने की वास्तविकता छुप नहीं जाएगी। सभी देष मिलकर धार्मिक संवेदनषीलता के मसले पर उठे मानव अधिकारों के बारे में संयुक्त राष्ट्र में विमर्ष कर सकते हैं। यही कारण है कि मानव अधिकारों के वैष्विक षासन से वांछनीय लाभ मिलते हैं और वे सच्चाई के महत्वपूर्ण

पहलुओं को प्रकाषित करते हैं। साथ ही व्यक्तिगत मान्यताओं और कार्यों की समूह की नैतिक कार्यवाही से स्थानीय, राष्ट्रीय और वैष्विक स्तर पर सुरक्षा प्रदान करते हैं।

युद्ध शांति का वाहक नहीं होता। द्वितीय विष्व युद्ध के विजेता राष्ट्र नहीं चाहते थे कि दुनिया को ऐसे किसी युद्ध से गुजरना पड़े, इसी उद्देष्य से 24 अक्टूबर 1945 को संयुक्त राष्ट्र अधिकार पत्र पर पचास देषों ने हस्ताक्षर कर संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना की जिसके उद्देष्य में उल्लेख है कि यह अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षा, आर्थिक विकास, सामाजिक प्रगति, मानव अधिकार और विष्व शान्ति के लिए कार्यरत है। वर्तमान 193 सदस्य राष्ट्रों को अन्तर्राष्ट्रीय चिंताएँ और राष्ट्रीय मामलों को संभालने का मौका मिलता है, संयुक्त राष्ट्र संघ अपने उद्देष्यों को प्राप्त कर सकने में पूर्णतः सफल नहीं है। शांति की स्थापना और राष्ट्रों के टकराव को रोक पाना पूरी तरह संभव है भी नहीं निरस्त्रीकरण महज एक दिखावा बनकर रह गया है। वैष्वीकरण के दौर में सभी राष्ट्र नाभिकीय शस्त्र सम्पन्नता की अंधी दौड़ में दौड़ रहे है। परमाणु हथियार कभी मानव अधिकारों की रक्षा नहीं करेगा। संयुक्त राष्ट्र संघ के गांधीवादी तरीकों पर जोर देना पड़ेगा हालाँकि संयुक्त राष्ट्र संघ अपने तमाम संगठनों, प्रसंविदाओं एवं घोषणाओं के द्वारा मानवाधिकार व शांति सुरक्षा में अहम भूमिका निभा रहा है। द्वितीय विष्व में नरसंहार ने संयुक्त राष्ट्र को मानवीय मूल्यों एवं शांति का प्रहरी बना दिया। भविष्य में ऐसी विध्वंषक घटनाओं को रोकने के लिए 1948 में सामान्य सभा में मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणाओं को स्वीकृत किया। यह आबन्धनकारी घोषणा समूचे विष्व के लिए समान दर्जा स्थापित करती है जो कि संयुक्त रूप से शांति स्थापित करने कि कोषिष करेगी। संयुक्त राष्ट्र द्वारा मानव अधिकार संरक्षण के सम्बन्ध में सात निकाय स्थापित हैं, जो कि निम्नवत् हैं –

1. मानव अधिकार संसद
2. आर्थिक,सामाजिक और सांस्कृतिक आधिकारों की संसद
3. जातीय भेद भाव निष्कासन संसद
4. नारी विरूद्ध भेद–भाव निष्कासन संसद
5. यातना विरूद्ध संसद
6. बच्चों के अधिकारों की संसद
7. प्रवासी कर्मचारी संसद

**निष्कर्ष**

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 1966 में आर्थिक, सामाजिक तथा साँस्कृतिक अधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा एवं सिविल तथा राजनीतिक अधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा के द्वारा मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा के द्वारा मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा के प्रावधानों को राष्ट्रों पर बन्धनकारी बनाया गया। इसके अतिरिक्त संयुक्त राष्ट्र द्वारा नरसंहार के अपराध का निवारण एवं दण्ड पर अभिसमय (1951), सभी प्रकार के रंग भेद के उन्मूलन पर अभिसमय (1969), महिलाओं के विरूद्ध प्रत्येक तरह के विभेद के उन्मूलन पर अभिसमय (1981), यातना एवं अन्य नृषंस अमानवीय या अपमानित व्यवहार और दण्ड के विरूद्ध अभिसमय (1987), बाल अधिकारों पर अभिसमय (1990)

 ISBN: 978-81-993143-8-2

तथा सभी प्रवासी श्रमिक एवं उनके परिवार के सदस्यों के अधिकारों के संरक्षण पर अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमय (1990) आदि को लागू करवाया गया। संयुक्त राष्ट्र संघ पिछले कुछ वर्षों से कई राष्ट्रों के कानूनी, लोकतान्त्रिक सुदृढ़ीकरण, चुनाव सुधार एवं न्यायिक सुधार के क्षेत्र तकनीकी स्तर पर सहायता प्रदान कर रहा है परन्तु अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा के 60 वर्ष के बाद और संयुक्त राष्ट्र संघ के तमाम प्रसंविदा, अभिसमय और संस्थाओं के बाबजूद स्थिति बेहतर नहीं हुई है। एमनेस्टी इंटरनेषनल की नवीन रिर्पोट के मुताबिक दुनिया के कई देषों में प्रताड़ना और हिंसा द्वारा मानव अधिकारों का हनन हो रहा है, जबकि 50 से अधिक ऐसे देष हैं जहाँ आपराधिक मामलों का पारदर्षी व उचित परिक्षण नहीं हो रहा है तथा 75 से अधिक देशों में अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता पर तमाम प्रतिबन्ध लगे हुए हैं। विश्व स्तर पर लक्ष्यों की प्राप्ति तथा मानव अधिकारों की स्तरीय संरक्षण के लिये तमाम क्षेत्रीय संगठनों जैसे नाटो, यूरोपीय संघ, ब्रिक्स, आसियान आदि को अपने–अपने क्षेत्रों में अहिंसात्मक तरीके अपनाते हुए मानव अधिकारों के संरक्षण के लिए प्रतिबद्ध होना चाहिए।

## संदर्भ


1. अग्रवाल, ओ.एच. : इम्प्लीमेन्टेशन ऑफ ह्यूमन राईट्स कन्वेन्ट्स विद स्पेशल, रैफरेन्स टू इन्डिया, (इलाहबाद, किताब महल, 1983)
2. अग्रवाल, आर.एस. : ह्यूमन राईट्स इन दी मॉर्डन वर्ल्ड, (नई दिल्ली, चेतना पब्लिकेशन्स, 1974)
3. बाजवा, जी.एस. : ह्यूमन राईट्स इन इन्डिया : इम्प्लीमेन्टेशन एण्ड वायलेशन, (नई दिल्ली, अनमोल पब्लिकेशसन्स, 1995)
4. बसु, डी.डी. : ह्यूमन राईट्स इन कोन्सीट्यूशन लॉ, (नई दिल्ली, प्रेन्टिस हॉल ऑफ इन्डिया प्राईवेट लिमिटेड, 1994)
5. बत्रा, टी.एस.: ह्यूमन राईट्सः ए क्रिटिक, (नई दिल्ली, मेट्रोपोलियन बुक कम्पनी, 1979)
6. बक्षी, उपेन्द्र : दी राईट टू बी ह्यूमन, (नई दिल्ली, लान्सर इन्टरनेशनल, 1987)
7. केसर, अंतरी : ह्यूमन राईट्स इन चेंजिंग वर्ल्ड, (टेम्पल यूनिवर्सिटी प्रेस, फिलाडेलफिया, 1990)
8. चाँद, अतर : पॉलिटिक्स ऑफ ह्यूमन राईट्स एंड सिविल लिबरटीज : ए ग्लोबल सर्वे, (दिल्ली, यूबीएच पब्लिशर्स, 1985)
9. दास, गुप्ता, : अर्जुन एंड देव, इंदिरा अर्जुन, (इडी.), ह्यूमन राईट्स : ए सोर्स बुक, (नई दिल्ली, एनसीईआरटी पब्लिकेशसन्स, 1996)
10. देसाई, ए.आर. : वायलेशन ऑफ डेमोक्रेटिक राईट्स इन इन्डिया, (बॉम्बे, पापुलर प्रकाशन, 1986)
11. देवसिया, वी.वी. : वुमन – सोशल जस्टिस एण्ड ह्यूमन राईट्स (1998) एण्ड देवसिया, लीलम्मा
12. दीवान, पास एंड दीवान पीयूसी : ह्यूमन राईट्स इन इन्डिया, (नई दिल्ली, दीप एंड दीप पब्लिकेशसन्स, 1996)

13. साठे, एस.पी. : ''टूवर्ड्स ऑन इफेक्टिव ह्यूमन राईट्स कमीशन'', (इकोनोमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, अक्टूबर 31, 1992, पीपी. 2155–56)
14. शिवा, एम.: ''ह्यूमन राईट्स एण्ड दी थर्ड वर्ल्ड : टूवर्ड्स ए रीअसेस्मेन्ट ऑफ साईडियोलोजिकल डाईनामिक्स'', (इकोनोमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, नवम्बर 18, पीपी. 20–21)
15. सोराबजी, सोली, जे. : ''स्टेट ऑफ ह्यूमन राईट्स '', (सोशियल एक्शन, वोल्यू.–40, जनवरी–मार्च, 1990, पीपी. 16–22)
16. ताराकुंडे, वी.एम. : ''फिलोसोफिकल बैकग्राउन्ड ऑफ ह्यूमन राईट्स'' (रेडिकल हयूमनिष्ट, वोल्यू. 52, नं. 10 जनवरी, 1989, पीपी. 17–20)
17. त्यागी, योगेश, के. : ''थर्ड वर्ल्ड रेस्पान्स टू ह्यूमन राईट्स'' (इंडियन जर्नल ऑफ इन्टरनेशनल लॉ, वोल्यू. 21, 1981, पीपी. 119–40.)
18. त्यागी, योगेश, कुमार : ''ह्यूमन राईट्स इन इंडिया–एन ओवर व्यू'' (इन्टरनेशनल स्टडीज, वोल्यू. 29 नं. 2 अप्रेल–जून, 1992, पीपी. 199–208.
19. तारांकुडे, वी.एम. : ''ह्यूमन राईट्स कमीशन : ए वैलकम प्रपोजल'', (ह्यूमन राईट्स इयरबुक, पब्लिश्ड बाई इन्टरनेशनल इनस्टीट्यूट ऑफ ह्यूमन राईट्स सोसायटी, 1993, पीपी. 91–95)
20. चोपड़ा, मनिका : '' ह्यूमन राईट्स कमीशन : फेक्टर्स बिहाइंड दी डिसिजन'' (मैनस्ट्रीम, अक्टूबर 3, 1992, पीपी.4)
21. घोष, अन्जन : ''सिविल लिबरर्टीज : अनसिविल स्टेट'', (सेमीनार (355), मार्च 1989, पीपी.. 24–37)
22. खत्रा, गोपेश नाथ : ''यूनिवर्सल डिकलेरेशन ऑफ ह्यूमन राईट्स एण्ड सम रीसेन्ट पॉलिसी मेजर्स इन इंडिया'', (सोशियल एक्शन, वोल्यू. 40, जनवरी–मार्च, 1990, पीपी. 23–28)
23. कोठारी, स्मृति : ''दा ह्यूमन राईट्स मूवमेंट इन इंडिया : ए क्रिटिकल ओवरव्यू'', (सोशियल एक्शन, वोल्यू. 40, जनवरी–मार्च, 1990, पीपी. 1–15)
24. नारायण, के.आर. : ''लिबरल वैल्यूज एण्ड ह्यूमन राईट्स '' (मैनस्ट्रीम, वोल्यू. ग्ग्प्ट, नं. 21, फरवरी 24, 1996, पीपी. 7–10

 **ISBN: 978-81-993143-8-2**

१५

# मरुस्थलीय पारिस्थितिकी : एक परिचय

**डॉ. अजय सिहाग**
सहायक आचार्य (भूगोल)
डी.ए.वी. कॉलेज, श्रीगंगानगर (राज.)

**सारांश**

मरुस्थल शब्द का तात्पर्य रेत के विशाल विस्तार या रेत के महासागरों से है जो दुनिया भर में स्थित हैं। इनमें से अधिकांश क्षेत्र, जैसे ऑस्ट्रेलिया के मरुस्थल, अरब प्रायद्वीप और सहारा भूमध्य रेखा के दक्षिण या उत्तर में स्थित हैं। वे महत्वपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र हैं जिनका पृथ्वी विज्ञान में अध्ययन करने की आवश्यकता है। पृथ्वी पर मरुस्थल सहित कई भू–आकृतियाँ पाई जा सकती हैं। अपनी अनूठी पारिस्थितिक विशेषताओं के कारण, मरुस्थलों को सबसे विशिष्ट स्थलीय पारिस्थितिकी प्रणालियों में से कुछ माना जाता है। वे ग्रह की भूमि की सतह के लगभग एक–तिहाई हिस्से को कवर करते हैं। मरुस्थल पारिस्थितिकी का क्षेत्र कठोर और शुष्क वातावरण में जीवों और उनके आवासों के अध्ययन पर केंद्रित है। इस प्रकार के वातावरण में आमतौर पर अत्यधिक तापमान, कम वर्षा और सीमित पौधों की आबादी का अनुभव होता है

**मूल शब्दः** मरुस्थलीय पारिस्थितिकी, जैव विविधता, जलवायु परिवर्तन, मरुस्थलीय जीवन, प्राकर्तिक संसाधन

## परिचय

मरुस्थलीय पारिस्थितिकी उसे कहा जाता है, जो सूखे और कठोर वातावरण में जीवों और उनके पारिस्थितिकी तंत्र का अध्ययन करती है। ये क्षेत्र अक्सर बेहद चरम स्थितियों का सामना करते हैं, जिसमें कम वर्षा, उच्च तापमान और सीमित पौधों की विविधता शामिल हैं। यह कई पहलुओं में बहुत ही अनोखी है। यह शुष्क भू–भाग है जिसे मरुस्थल कहा जाता है। पृथ्वी पर मरुस्थल से ढके कई भू–भाग हैं। सभी स्थलीय पारिस्थितिकी प्रणालियों में, मरुस्थल अपनी अनूठी पारिस्थितिक स्थितियों के कारण बहुत ही विशिष्ट भू–आकृतियाँ हैं। मरुस्थल और निकट–मरुस्थल क्षेत्र दुनिया की भूमि सतह के लगभग एक–तिहाई हिस्से को कवर करते हैं।मरुस्थल अकेले ही भूमि की सतह के लगभग सातवें हिस्से को कवर करते हैं। हम मरुस्थल को आम तौर पर "रेत के समुद्र या रेत के महासागर" कहते हैं। सहारा, थार, अरब, कालाहारी, आटाकामा और ऑस्ट्रेलिया के मरुस्थल जैसे अधिकांश प्रमुख मरुस्थली क्षेत्र भूमध्य रेखा के 10 से 30 डिग्री उत्तर या दक्षिण अक्षांषो के बीच स्थित हैं। मरुस्थल शुष्क पारिस्थितिकी तंत्र हैं जो दुनिया के एक बड़े हिस्से को कवर करते हैं। मरुस्थलों को पृथ्वी विज्ञान के अध्ययनों

में पूरी तरह से समझा जाना चाहिए। यह रिपोर्ट मरुस्थलों के बारे में अद्वितीय भू–आकृतियों के रूप में है।

**उद्देश्य–**

इस रिपोर्ट का उद्देश्य निम्नलिखित के बारे में विवरण प्रदान करना है–

1. मरुस्थलों की भू–आकृति विज्ञान
2. मरुस्थल के प्रकार
3. मरुस्थल की वनस्पति
4. मरुस्थल और वन्य क्षेत्रों के जीव–जंतु
5. मरुस्थल के प्राकृतिक संसाधन।

**मरुस्थल की विशेषताएँ**

मरुस्थलों की विशेषता निम्नलिखित पारिस्थितिक कारकों से होती है–

क. रेतीली मिट्टी और चट्टानी अधःस्तर

ख. अल्प वर्षा और उच्च वाष्पीकरण

ग. गर्म और ठंडा मौसम

**मरुस्थलों की भू–आकृति**

मरुस्थल जलवायु परिवर्तन और रेत तथा अन्य चट्टानी कचरे के जमा होने से बनते हैं। मरुस्थल का लगभग 10 से 20 प्रतिशत हिस्सा रेत से ढका हुआ है। बाकी ज़मीन पर ज्यादातर बजरी, पत्थर, पहाड़ और कई तरह की मिट्टी है।मरुस्थली भूदृश्य में वायु अपरदन द्वारा निर्मित विभिन्न भू–आकृतियाँ शामिल हैं। मरुस्थल के हृदय में हवा स्वतंत्र रूप से चलती है। वायु अपरदन से रेत के टीले और समतल–शीर्ष वाली पहाड़ियाँ बनती हैं जिन्हें मेसा और बट्स के नाम से जाना जाता है। मरुस्थल के रेतीले भाग हमेशा हवा की प्रबल क्रिया के कारण लुढ़कते रहते हैं।रेत के बहाव, अर्धचंद्राकार टीले या बरखान, लोएस और अनुदैर्ध्य टीले और रेत की चादरें उल्लेखनीय पवन–जनित भू–आकृतिक विशेषताएं हैं। मरुस्थली टीलों की सबसे उल्लेखनीय विशेषताओं में से एक है अपने आस–पास की सारी रेत को इकट्ठा करने की उनकी क्षमता।

**बालू के टीले**

टीले हवा से उड़ने वाली रेत के बड़े ढेर होते हैं जो धरती से अधिकतम 250 मीटर की ऊंचाई तक पहुंचते हैंटीलों में कई आकृतियाँ और पैटर्न दिखते हैं जो अत्यधिक सक्रिय हवाओं के कारण लगातार बदलते रहते हैं। मरुस्थलों को अत्यधिक गतिशील भू–आकृतिक विशेषताएँ माना जाता है।

**मरुस्थल में मिट्टी**

मरुस्थली क्षेत्रों की मिट्टी आमतौर पर उपजाऊ होती है, लेकिन पौधों की वृद्धि को प्रोत्साहित करने के लिए उसमें नमी की कमी होती है।

 ISBN: 978-81-993143-8-2

## मरुस्थल में तापमान

जलवायु विज्ञान की दृष्टि से मरुस्थल दुनिया के सबसे गर्म स्थान हैं क्योंकि वे आर्द्र जलवायु वाले किसी भी अन्य स्थान की तुलना में सूर्य से अधिक गर्मी अवशोषित करते हैं। मरुस्थल ज्यादातर शुष्क से लेकर अर्ध–शुष्क जलवायु वाले होते हैं। दिन और रात के दौरान तापमान बदलता रहता है।गर्मियों में, मरुस्थल का तापमान अक्सर दिन के समय 38 डिग्री सेल्सियस तक पहुँच जाता है। रात में यह 25 डिग्री सेल्सियस या उससे भी ज़्यादा हो जाता है। सर्दियों के दौरान, मरुस्थल में तापमान 10 से 21 डिग्री सेल्सियस तक होता है। दिन के दौरान बादल सूर्य के तीव्र विकिरण का अधिकांश भाग परावर्तित कर देते हैं, जिससे सतह के पास हवा के गर्म होने की दर धीमी हो जाती है। रात में, बादल और जल वाष्प पृथ्वी के अधिकांश विकिरण को अवशोषित कर लेते हैं – जिनमें से अधिकांश अवरक्त किरणें होती हैं – जिससे ठंडक की दर धीमी हो जाती है। मध्य अक्षांश अर्ध–शुष्क क्षेत्रों और मरुस्थलों में सर्दियाँ बहुत ज्यादा ठंडी होती हैं।

## मरुस्थलों पर वर्षा

वर्षा मरुस्थल का एक निर्धारक कारक है। सभी मरुस्थली क्षेत्रों में वर्षा बहुत कम होती है। इसके बावजूद ये मरुस्थल बंजर भूमि नहीं हैं। सभी मरुस्थलों में सामान्य विशेषताएँ शामिल हैं

(क) प्रति वर्ष 250 मिमी से कम अनियमित वर्षा

(ख) बहुत अधिक वाष्पीकरण दर जो अक्सर वार्षिक वर्षा से 20 गुना अधिक होती है, तथा

(ग) कम सापेक्ष आर्द्रता और बादल आवरण। ज्यादातर मरुस्थलों में हर साल 200 मिमी से भी कम बारिश होती है। हालाँकि, हर साल बारिश की मात्रा में काफ़ी अंतर हो सकता है। मरुस्थल में कई सालों तक बारिश नहीं हो सकती है और कुछ मामलों में कुछ ही घंटों में 250 मिमी बारिश हो सकती है।

## मरुस्थल में धूल भरी आंधी

मरुस्थल में अक्सर धूल के भयंकर तूफान आते रहते हैं। धूल के तूफान अशांत वायु द्रव्यमान में धूल (गाद के आकार के कण) का भारी जमाव होते हैं। धूल हवा में सैकड़ों या हज़ारों मीटर तक फैल सकती है। बड़े धूल के तूफान कई किलोमीटर की दूरी तक 100 मिलियन मीट्रिक टन तक सामग्री ले जा सकते हैं।

## मरुस्थल में जल की उपलब्धता

मरुस्थल का एक और नियंत्रित करने वाला कारक पानी की मौजूदगी है। बहुत कम बारिश और रेतीली मिट्टी के कारण मरुस्थल में पानी को रोकने की कोई संभावना नहीं होती या बहुत कम होती है। केवल कुछ अवसादों में बहुत कम पानी मौजूद हो सकता है। मरुस्थल में मिट्टी की नमी एक दुर्लभ विशेषता है। भले ही थोड़ी

मिट्टी की नमी मौजूद हो, गर्म जलवायु और प्रचलित हवाओं के कारण, यह जल्दी से वाष्पित हो जाएगी।

## मरुस्थल स्थलाकृति

विशिष्ट मरुस्थली स्थलाकृति में प्लाया, जलोढ़ मैदान, पेडिमेंट्स, इन्सेलबर्ग, मेसा, बट्स शामिल हैंऔर बैडलैंड्स। प्लाया सूखी झील के तल हैं जो अस्थायी (कुछ घंटों से लेकर कई महीनों तक) अतिरिक्त पानी (प्लाया झील) के उथले संचय से वाष्पीकरण द्वारा बनते हैं, जो कि अनियमित और तीव्र वर्षा के बाद होता है। प्लाया की विशेषता मिट्टी की दरारें और अवक्षेपित नमक क्रिस्टल हैं। पेडिमेंट पहाड़ों के आस–पास की ढलान वाली कम–उभरी सतहें हैं जो पहाड़ के सामने के कटाव और पीछे हटने के परिणामस्वरूप बनती हैं। अधिकांश मलबे, जलोढ़ पंखे, या बाजाडा की पतली परत से ढके होते हैं।

## मरुस्थल के प्रमुख प्रकार

सतह के स्वरूप और मिट्टी की संरचना के आधार पर मरुस्थलों को निम्नलिखित चार श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है

(क) चट्टानी मरुस्थल

(ख) पथरीले मरुस्थल या रेग

(ग) बालुकामय मरुस्थल या इर्ग

(घ) पर्वतीय मरुस्थल

(ड़) शीत मरुस्थल

## मरुस्थलों का भौगोलिक वर्गीकरण

मरुस्थलों को भौगोलिक परिस्थितियों के आधार पर भी वर्गीकृत किया जाता है। मरुस्थलों के भौगोलिक वर्गीकरण में ये भी शामिल हैं–

(क) महाद्वीपीय मरुस्थल – जैसे गोबी मरुस्थल

(ख) वर्षा छाया मरुस्थल – ऊंची पर्वत श्रृंखलाओं के कारण – जैसे इजरायल में जूडियन मरुस्थल

(ग) तटीय मरुस्थल– जैसे दक्षिण अमेरिका में अटाकामा मरुस्थल, अफ्रीका का नामीब मरुस्थल।

(घ) व्यापारिक पवन मरुस्थल – जैसे सहारा मरुस्थल – तापमान 57 डिग्री सेल्सियस तक चला जाता है

(ई) मानसून मरुस्थल– जैसे भारत में थार मरुस्थल, पाकिस्तान का चोलिस्तान मरुस्थल

 ISBN: 978-81-993143-8-2

(च) ध्रुवीय मरुस्थल – जैसे अंटार्कटिका की शुष्क घाटियाँ – हजारों वर्षों से बर्फ से मुक्त हैं।

(छ) बाह्य–स्थलीय मरुस्थल – अन्य ग्रहों के मरुस्थल, जैसे मंगल ग्रह में वायवीय विशेषताएं पाई गई हैं।

(ज) पर्वतीय मरुस्थल.

**मरुस्थल की वनस्पति**

मरुस्थली पौधे एक बार में इतना पानी इस्तेमाल नहीं कर सकते और मरुस्थली मिट्टी सारा पानी सोख नहीं सकती। ज्यादातर पानी बह जाता है और मिट्टी के कण अपने साथ ले जाता है। ज्यादातर मरुस्थली पौधे सूखे या नमक को सहन करने वाले होते हैं, जैसे कि ज़ेरोफाइट्स। कुछ पौधे अपनी पत्तियों, जड़ों और तनों में पानी जमा करते हैं। अन्य मरुस्थली पौधों में लंबी नल जड़ें होती हैं जो जल स्तर में प्रवेश करती हैं, मिट्टी को स्थिर रखती हैं और कटाव को नियंत्रित करती हैं। कुछ पौधों के तने और पत्ते रेत ले जाने वाली हवाओं के वेग को कम कर सकते हैं और जमीन को कटाव से बचा सकते हैं।

**पौधों के जीवन रूप**

पौधों के निम्नलिखित तीन जीवन रूप मरुस्थल के लिए अनुकूलित हैं–

(क) वार्षिक पौधे, जो पर्याप्त नमी होने पर ही उगकर सूखे से बचते हैं

(ख) रसीले पौधे – जैसे कैक्टस, जो पानी जमा करते हैं और जीवित रहते हैं

(ग) मरुस्थली झाड़ियाँ– जिनमें पानी को संग्रहीत करने के लिए छोटी लेकिन मोटी पत्तियों के साथ कई शाखाएँ होती हैं।

मरुस्थली वातावरण और शुष्क जलवायु के लिए अनुकूलन में वाष्पोत्सर्जन क्षमता में वृद्धि के बजाय मुरझाने से बचने और लंबे समय तक निष्क्रिय रहने की क्षमता शामिल है। मरुस्थली मिट्टी बंजर होती है, उसमें ह्यूमस की कमी होती है और आमतौर पर उसका रंग भूरा या लाल होता है। मरुस्थल आर्द्र जलवायु में पाए जाने वाले प्रचुर मात्रा में पौधे और पशु जीवन का समर्थन नहीं कर सकते हैं। लेकिन मरुस्थल में कई प्रकार के पौधे और जानवर पनपते हैं। ऐसी परिस्थितियों में जीवित रहने में सक्षम कुछ पौधे बहुत दूर–दूर तक फैले हुए, झाड़ीदार और अक्सर कांटेदार होते हैं। खजूर और मस्काइट जैसे लंबी जड़ वाले पौधे (फ्रीटोफाइट्स) आमतौर पर सूखी जलधाराओं के किनारे उगते हैं। नमक पसंद करने वाले पौधे (हेलोफाइट्स) जैसे कि साल्टबुश अत्यधिक खारी मिट्टी वाले क्षेत्रों और प्लेयास (सूखीखारीझीलों) के किनारों के पास उगते हैं।

**मरूद्भिद**

ज़ेरोफाइट्स सूखा–प्रतिरोधी होते हैं और शुष्क मौसम के दौरान पत्ती रहित रहकर या छोटी मोमी पत्तियों के साथ पानी की कमी को कम करके जीवित रहते

हैं। उनके पास अक्सर उथली और व्यापक रूप से शाखाओं वाली जड़ प्रणाली होती है और गीले मौसम के दौरान पानी जमा करते हैं। मरुस्थली पौधे उपलब्ध पानी की थोड़ी मात्रा से ही जीवित रहते हैं। कुछ मरुस्थली पौधे धरती की सतह के नीचे से पानी प्राप्त करते हैं। उदाहरण के लिए, अमेरिकी मेसकाइट पेड़ की जड़ें 12 मीटर तक गहरी होती हैं। अन्य पौधे अपनी पत्तियों, जड़ों या तनों में बड़ी मात्रा में पानी जमा करते हैं। बैरल कैक्टस का तना बारिश के बाद पानी से भर जाता है और पौधे के पानी का उपयोग करने पर सिकुड़ जाता है।

सभी मरुस्थली वनस्पतियों में अत्यधिक विशिष्ट स्थानिक वितरण पौधे होते हैं। अलग–अलग पौधे बिखरे हुए होते हैं। यह अंतराल प्रतिस्पर्धा को कम करता है।

**मरुस्थल की कुछ विशिष्ट वनस्पतियाँ हैं–**

(क) क्रियोसोट बुश– (लारेआ) – उत्तरी अमेरिका, गर्म मरुस्थल

(ख) सेजब्रश– (आर्टेमिसिया) ग्रेट बेसिन– ठंडा मरुस्थल

(ब) बर सेज (फ्रांसेरिया)– उच्च ऊंचाई वाले पौधे

(घ) विशाल कैक्टस– (साहुआरो)–

इनके अलावा मरुस्थल में छोटी–छोटी घास भी उगती है, ग्रीसवुड (सरकोबेटस) ठंडे मरुस्थल में एक विशिष्ट वनस्पति है।मरुस्थल के विस्तृत रेतीले मैदान में पौधे नहीं होते। काई, शैवाल और लाइकेन भी मौजूद हो सकते हैं। नीले हरे शैवाल इन क्षेत्रों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण का काम भी करते हैं।हर बारिश के बाद मरुस्थल के कुछ हिस्सों में रंग–बिरंगे फूल और हरी–भरी वनस्पतियाँ छा जाती हैं।परिवर्तन इसलिए होता है क्योंकि सूखे के दौरान कई मरुस्थली पौधे नहीं उगते। बारिश के कारण पौधेअंकुरित होते हैं, फूलते हैं, अपने बीज बिखेरते हैं और मर जाते हैं। पूरी प्रक्रिया में आमतौर पर कुछ ही सप्ताह लगते हैं।वार्षिक पौधों के बीज सबसे लंबे सूखे काल में भी जीवित रह सकते हैं। बारिश के लौटने तक बीज दबे रहते हैं। फिर वे अंकुरित होते हैं, और पौधे कुछ ही हफ्तों में अपना जीवन चक्र पूरा कर लेते हैं।ऑस्ट्रेलिया के मरुस्थल में प्रमुख पौधे टुसॉक घास, जैसे साही घास या स्पिनिफेक्स, और रसीली जड़ी–बूटियां, जैसे पैराकील्या हैं।बारिश के बाद मरुस्थल खूबसूरत फूलों, जैसे बैंगनी मुल्ला–मुल्ला, से जीवंत हो उठते हैं।उत्तरी और मध्य अमेरिका के मरुस्थलों में कैक्टस प्रमुख हैं। कैक्टस अपनी तीखी रीढ़ की वजह से चरने वाले जानवरों से सुरक्षित रहते हैं। कई कैक्टस में सुंदर फूल होते हैं। अफ्रीका में, सबसे प्रचुर मात्रा में पाए जाने वाले मरुस्थली पौधे यूफोरबिया हैं, जिनका रस जहरीला दूधिया होता है।

**मरुस्थल के जीव–जंतु**

मरुस्थल के जानवरों ने विशेष शारीरिक संरचना और जीवन शैली विकसित कर ली है, जो उन्हें अत्यधिक गर्मी में जीवित रहने में सक्षम बनाती है।

 ISBN: 978-81-993143-8-2

सेंटीपीड, गेरबिल, कंगारू चूहे, सांप और बिच्छू दिनभर बिलों में रहते हैं।वे भोजन की तलाश में केवल तभी बाहर आते हैं जब रात में तापमान गिर जाता है।कई कीड़े, छिपकलियाँ और कछुए मरुस्थल के उच्च तापमान को सहन कर सकते हैं और दिन के समय सक्रिय रहते हैं।उनमें से कई लोग दिन के सबसे गर्म समय में भूमिगत हो जाते हैं या किसी पेड़ की छाया में छिप जाते हैं।कुछ घोंघे, कीड़े, मेंढक, छिपकलियां, चूहे और ज़मीनी गिलहरियां मरुस्थल में निष्क्रिय अवस्था में रहती हैं, अर्थात वे गर्मियों में सोती रहती हैं। एल्फ उल्लू, रोडरनर, सांप, मकड़ी, मधुमक्खियां और तितलियां मरुस्थल के अन्य जीव हैं।

मरुस्थली जानवरों में कई तरह के कीड़े, मकड़ियाँ, सरीसृप, पक्षी और स्तनधारी शामिल हैं। हिरण, लोमड़ी, भेड़िये और अन्य जानवर बारिश के बाद मरुस्थल में आ सकते हैं।ज्यादातर मरुस्थली जानवर दोपहर की भीषण गर्मी से बचने के लिए रात में तापमान गिरने के बाद भोजन करते हैं। कई छोटे जानवर ज़मीन के नीचे बिल खोदकर दिन में वहीं रहते हैं। इनमें से कुछ जानवर पूरी गर्मी में निष्क्रिय (निष्क्रिय) रहते हैं।मरुस्थली लोमड़ियों और खरगोशों के कान लंबे होते हैं। ज़्यादा गर्मी लगने पर ये जानवर ठंडी गुफा या बिल में चले जाते हैं, जहाँ वे अपने कानों के ज़रिए शरीर की अतिरिक्त गर्मी से छुटकारा पा सकते हैं।केप ग्राउंड गिलहरी अपनी रोएंदार पूंछ को छत्र की तरह इस्तेमाल करके अपनी खुद की छाया बनाती है। फेयरी श्रिम्प और स्पैडफुट टोड बारिश के इंतजार में महीनों या सालों तक भूमिगत रहते हैंबड़े मरुस्थली जानवर दिन के समय छायादार इलाकों में रहने की कोशिश करते हैं। उनके शरीर से पानी के वाष्पीकरण से उनके शरीर का तापमान कम हो जाता है, लेकिन इस पानी को फिर से भरना पड़ता है। ऐसे जानवर अपने द्वारा खाए जाने वाले भोजन और मरुस्थल में मौजूद कुछ पानी के गड्ढों से पानी प्राप्त करते हैं।मरुस्थली जानवर भी पाचन के दौरान अपने शरीर में बनने वाले पानी का इस्तेमाल करते हैं मरुस्थल में अक्सर भोजन और पानी की कमी होती है और गर्मियों में तापमान बहुत ज़्यादा हो सकता है। इन परिस्थितियों के बावजूद, वहाँ कई तरह के जानवर रहते हैं।

जब भी मरुस्थल की चर्चा होती है, तो कोई भी ष्मरुस्थल के जहाजष यानी ऊँटों को नहीं भूल सकता। ये अनोखे जीव हैं जो न केवल जीवित रह सकते हैं, बल्कि कम भोजन या पानी के साथ गर्म, शुष्क मरुस्थल में इंसानों की मदद भी कर सकते हैं। वे नरम रेत पर आसानी से चलते हैं जहाँ ट्रक भी फंस सकते हैं, और लोगों और भारी सामान को उन जगहों पर ले जाते हैं जहाँ सड़कें नहीं हैं। ऊँट कई अन्य तरीकों से भी मरुस्थल के लोगों की सेवा करते हैं। ऊँट अपनी पीठ पर कूबड़ के रूप में अपना खुद का भोजन रखता है। कूबड़ वसा का एक बड़ा टुकड़ा होता है जो भोजन न मिलने पर ऊर्जा प्रदान करता है।

**मरुस्थल में मानव आबादी**

मरुस्थल में रहने वाले लोगों को भी समान रूप से इसी तरह की समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। मरुस्थल में नमी वाले क्षेत्रों की तुलना में

अधिक लोग नहीं रहते हैं। मरुस्थली क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को स्थानीय और प्रचलित गर्म या शुष्क जलवायु के साथ तालमेल बिठाना पड़ता है। परियोजनाओं ने मरुस्थली निवासियों के लिए जीवन को और अधिक आरामदायक बना दिया है।

## मरुस्थल के प्राकृतिक संसाधन

मरुस्थलों में रेत और मिट्टी के विशाल संसाधन होते हैं। मरुस्थलों की मिट्टी खनिज मिट्टी होती है जिसे अक्सर एरिडिसोल कहा जाता है जिसमें कार्बनिक तत्व कम होते हैं।अधिकांश मरुस्थली मिट्टी व्यापक वनस्पति को सहारा देने के लिए बहुत शुष्क है, लेकिन इसका अधिकांश भाग नमक, यूरेनियम और अन्य खनिजों से समृद्ध है। प्लाया वाष्पीकरण द्वारा निर्मित खनिज जमा के स्रोत हैं।जिप्सम, सोडियम नाइट्रेट, सोडियम क्लोराइड लवण और बोरेट्स प्रमुख अवक्षेप हैं।वाष्पीकरण द्वारा बनने वाले खनिजों को अक्सर वाष्पोत्सर्जन कहा जाता है। उनमें से कई का उपयोग कांच, चीनी मिट्टी की चीज़ें, तामचीनी, कृषि रसायन, जल सॉफ़्नर और फार्मास्यूटिकल्स के निर्माण में किया जाता है। सोडियम नाइट्राइट का उपयोग विस्फोटकों और उर्वरकों के लिए किया जाता है। मरुस्थली क्षेत्रों से कई धात्विक और गैर–धात्विक खनिज संसाधन भी प्राप्त होते हैं।

## शुष्क पदार्थ का वार्षिक उत्पादन

मरुस्थल में प्राथमिक उत्पादन उपलब्ध पानी की कम मात्रा और पौधों द्वारा अपनाई गई खपत रणनीति पर निर्भर करता है। शुष्क क्षेत्रों में यह बहुत कम है, 30–200 ग्राम/वर्ग मीटर, जमीन के ऊपर। शाकाहारी जीवों का प्राथमिक उत्पादकों पर स्पष्ट प्रभाव पड़ता है। मरुस्थल में किसी भी अन्य पारिस्थितिकी तंत्र की तुलना में डेट्राइटल खाद्य श्रृंखला कम महत्वपूर्ण लगती है। सीमित उत्पादन और अपघटन के कारण, मरुस्थल में पोषक तत्व सीमित हैं।वाल्टर ने 1954 में मरुस्थलों और अर्ध–शुष्क समुदायों की एक श्रृंखला की शुद्ध उत्पादकता को मापा है। शुष्क पदार्थ का वार्षिक उत्पादन 600 सेमी तक वर्षा का एक रैखिक कार्य था। इससे यह भी पता चला है कि उत्पादकता में मरुस्थलों का समग्र सीमित कारक नमी है। यह पाया गया है सच्चे मरुस्थलों की वार्षिक शुद्ध उत्पादकता 2000 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर से कम है। जब बारिश के कारण यह खत्म हो जाती है, तो मिट्टी एक सीमित कारक बन जाती है।

## अन्य उत्पादन

खजूर के पेड़ पर खजूर के फल लगते हैं। वे गर्म, शुष्क जलवायु में पनपते हैं। वे उत्तरी अफ्रीका और मध्य पूर्व में मरुस्थलों में उगते हैं। खजूर सबसे पुराने फसल पौधों में से एक है जिसका उपयोग कम से कम 5,000 वर्षों से किया जा रहा है। आज भी, खजूर कई मरुस्थली देशों में आहार का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। इन देशों से खजूर अन्य स्थानों पर भी भेजे जाते हैं।

इनके अलावा, कई मरुस्थली भूमि के नीचे तेल और प्राकृतिक गैस के बड़े भंडार हैं। पृथ्वी पर कुछ अधिक उत्पादक पेट्रोलियम क्षेत्र अफ्रीका और मध्य पूर्व के शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में पाए जाते हैं, हालांकि तेल क्षेत्र मूल रूप से उथले समुद्री

 ISBN: 978-81-993143-8-2

वातावरण में बने थे। भूवैज्ञानिक समय पैमाने में हाल ही में हुए जलवायु परिवर्तन ने इन भंडारों को शुष्क वातावरण में डाल दिया है। उत्तरी सागर के हाइड्रोकार्बन भंडार व्यापक वाष्पशील जमा से जुड़े हैं। अमेरिका के कई प्रमुख हाइड्रोकार्बन संसाधन एओलियन रेत से आ सकते हैं।

मरुस्थलीय क्षेत्रों में व्यापार और परिवहन मार्गों के लिए मरुद्यानों का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। कारवां को इन स्थानों से होकर यात्रा करनी पड़ती है, जिससे पानी और भोजन की आपूर्ति होती है।मरुस्थल बनाने वाले प्राकृतिक कारकों में हज़ारों सालों से कोई खास बदलाव नहीं आया है। दुनिया भर में यह देखा गया है कि विभिन्न मानवीय गतिविधियों के कारण मरुस्थली क्षेत्रों का विस्तार हुआ है। ऐसा इन क्षेत्रों के बाहरी इलाकों में उपजाऊ भूमि के लगातार कम होने के कारण हुआ है। पेड़ों की आश्रय पट्टियाँ लगाना इसका एक समाधान हो सकता है। मरुस्थल के बाहरी इलाकों में स्थित भूदृश्यों के पुनर्निर्माण में मानव की भूमिका निश्चित रूप से अन्य क्षेत्रों में उनके विस्तार को रोक देगी।

## निष्कर्ष

मरुस्थल शुष्क भू–आकृतियाँ हैं जिनमें रेत और तलछट शामिल हैं। वे केन्द्रापसारक ईओलियन बलों के पालने हैं। मरुस्थलों में कभी–कभी मूल्यवान खनिज जमा होते हैं जो शुष्क वातावरण में बने थे या जो कटाव से उजागर हुए थे। शुष्क क्षेत्रों में वाष्पीकरण उनकी झीलों में खनिज संचय को समृद्ध करता है। प्लाया वाष्पीकरण द्वारा निर्मित खनिज जमा के स्रोत हो सकते हैं।बंद बेसिन में वाष्पित होने वाला पानी जिप्सम, लवण (सोडियम नाइट्रेट और सोडियम क्लोराइड सहित) और बोरेट्स जैसे खनिजों को अवक्षेपित करता है। इन वाष्पित जमाओं में बनने वाले खनिज जमाव के समय खारे पानी की संरचना और तापमान पर निर्भर करते हैं। मरुस्थल बनाने वाली प्राकृतिक शक्तियों में हज़ारों सालों से ज़्यादा बदलाव नहीं आया है। हालाँकि, विभिन्न मानवीय गतिविधियों के कारण मरुस्थली क्षेत्रों का काफ़ी विस्तार हुआ है। मरुस्थल के विस्तार के प्रमुख कारणों में खनन, खेती के अनुचित तरीके और पेड़ों का विनाश शामिल हैं

## संदर्भ–

1. जलवायु परिवर्तन और डेजर्ट इकोलॉजी।
2. भारतीय विज्ञान अकादमी
3. एनसीईआरटी
4. भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
5. मरुस्थलीय पारिस्थितिकी : एक विश्लेषण (पुस्तक)
6. जलवायु परिवर्तन और मरुस्थलीय पारिस्थितिकी (शोध पत्र)

१६

# ब्रिटिश भूमि राजस्व नीतियाँ और भारतीय ग्रामीण समाज पर उनके प्रभाव एक ऐतिहासिक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन

**डॉ.अरविंद सुलानिया**
सहायक आचार्य इतिहास
डॉ .भीमराव अंबेडकर राजकीय महाविद्यालय श्रीगंगानगर।

**सार**

प्रस्तुत शोध–पत्र ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के दौरान लागू की गई भूमि राजस्व नीतियों और उनके भारतीय ग्रामीण समाज पर पड़े बहुआयामी प्रभावों का विस्तृत ऐतिहासिक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। स्थायी बंदोबस्त, रैयतवारी तथा महालवारी व्यवस्थाएँ औपनिवेशिक राज्य की राजस्व आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर निर्मित की गई थीं, जिनका उद्देश्य भारत से अधिकतम आर्थिक दोहन करना था। इन नीतियों के परिणामस्वरूप भारतीय किसान भूमि–विस्थापन, ऋणग्रस्तता, सामाजिक असुरक्षा और आर्थिक पराधीनता का शिकार हुआ। यह अध्ययन प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों के आधार पर यह तर्क प्रस्तुत करता है कि ब्रिटिश भूमि राजस्व नीतियों ने भारतीय ग्रामीण समाज की पारंपरिक संरचना को तोड़कर उसे औपनिवेशिक पूँजीवादी व्यवस्था के अधीन कर दिया।

**मुख्य शब्द**– ब्रिटिश शासन, भूमि राजस्व नीति, स्थायी बंदोबस्त, रैयतवारी व्यवस्था, महालवारी व्यवस्था, भारतीय ग्रामीण समाज

## भूमिका

भारत की सामाजिक–आर्थिक संरचना में भूमि और कृषि सदैव केंद्रीय तत्व रहे हैं। प्राचीन एवं मध्यकालीन भारत में भूमि राजस्व व्यवस्था शोषणरहित नहीं थी, किंतु वह स्थानीय सामाजिक संस्थाओं, ग्राम–समुदाय और परंपरागत अधिकारों से जुड़ी हुई थी। मुगल काल की जब्ती प्रणाली में राज्य और किसान के बीच प्रत्यक्ष संबंध बना रहता था, जिससे कृषि उत्पादन और सामाजिक संतुलन पूरी तरह नष्ट नहीं होता था। इरफान हबीब का मत है कि पूर्व–औपनिवेशिक भारत की कृषि व्यवस्था में शोषण के तत्व मौजूद होने के बावजूद उत्पादन प्रणाली जीवंत बनी रही।[1]

ब्रिटिश शासन के आगमन के साथ भूमि को केवल राजस्व–स्रोत के रूप में देखा जाने लगा। औपनिवेशिक राज्य ने भारतीय कृषि को अपने आर्थिक हितों के अधीन कर दिया और भूमि राजस्व नीतियों को शासन के सुदृढ़ीकरण का प्रमुख साधन बनाया। इस प्रक्रिया में भारतीय ग्रामीण समाज की संरचना, उत्पादन संबंध और सामाजिक संतुलन गहराई से प्रभावित हुए।

## शोध–पद्धति

 ISBN: 978-81-993143-8-2

प्रस्तुत शोध–पत्र में ऐतिहासिक एवं विश्लेषणात्मक शोध–पद्धति को अपनाया गया है। अध्ययन का उद्देश्य ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के अंतर्गत लागू भूमि राजस्व नीतियों की प्रकृति, संरचना तथा उनके भारतीय ग्रामीण समाज पर पड़े प्रभावों का समग्र और आलोचनात्मक विश्लेषण करना है। इस शोध में घटनाओं और नीतियों का कालानुक्रमिक अध्ययन करते हुए उनके दीर्घकालीन सामाजिक और आर्थिक परिणामों की व्याख्या की गई है।

शोध के लिए प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के स्रोतों का उपयोग किया गया है। प्राथमिक स्रोतों में ब्रिटिश कालीन सरकारी रिपोर्टें, राजस्व अभिलेख, समकालीन प्रशासनिक दस्तावेज, तथा औपनिवेशिक अधिकारियों के मिनट्स एवं पत्राचार शामिल हैं। ये स्रोत औपनिवेशिक राज्य की नीतिगत सोच और प्रशासनिक उद्देश्यों को समझने में सहायक हैं।

द्वितीयक स्रोतों के अंतर्गत आधुनिक इतिहासकारों की कृतियों, शोध–पत्रों और जर्नल लेखों का उपयोग किया गया है। इरफान हबीब, आर.सी. दत्त, बिपिन चंद्र, रणजीत गुहा, तपन रायचौधुरी तथा सुमित सरकार जैसे विद्वानों के कार्यों का आलोचनात्मक अध्ययन किया गया है, जिससे भूमि राजस्व नीतियों के सामाजिक–आर्थिक प्रभावों को विभिन्न इतिहासलेखन परंपराओं राष्ट्रवादी, मार्क्सवादी और सबाल्टर्न के संदर्भ में समझा जा सके।

इस अध्ययन में तुलनात्मक पद्धति का भी प्रयोग किया गया है। स्थायी बंदोबस्त, रैयतवारी और महालवारी व्यवस्थाओं की तुलना करते हुए यह विश्लेषण किया गया है कि किस प्रकार भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में लागू इन नीतियों ने भारतीय ग्रामीण समाज को अलग–अलग रूपों में प्रभावित किया। इसके अतिरिक्त, किसान विद्रोहों और आंदोलनों को भूमि राजस्व नीतियों के प्रत्यक्ष परिणाम के रूप में व्याख्यायित करने हेतु सामाजिक–आर्थिक विश्लेषण पद्धति को अपनाया गया है।

इस प्रकार, यह शोध गुणात्मक विश्लेषण पर आधारित है और इसका उद्देश्य औपनिवेशिक भूमि नीतियों को केवल प्रशासनिक सुधार के रूप में नहीं, बल्कि भारतीय ग्रामीण समाज में संरचनात्मक परिवर्तन उत्पन्न करने वाली ऐतिहासिक प्रक्रिया के रूप में प्रस्तुत करना है।

## औपनिवेशिक राज्य और भूमि राजस्व नीति की पृष्ठभूमि

1765 में बंगाल की दीवानी प्राप्ति के पश्चात ईस्ट इंडिया कंपनी के लिए भूमि राजस्व आय का मुख्य स्रोत बन गया। प्रारंभिक वर्षों में कंपनी ने मुगलकालीन व्यवस्थाओं को बनाए रखने का प्रयास किया, किंतु शीघ्र ही यह स्पष्ट हो गया कि अस्थायी और अनिश्चित राजस्व व्यवस्था औपनिवेशिक शासन के हितों के प्रतिकूल है। बिपिन चंद्र के अनुसार ब्रिटिश शासन का प्रमुख उद्देश्य न्यूनतम प्रशासनिक लागत में अधिकतम राजस्व संग्रह करना था।[2] इसी उद्देश्य से कंपनी ने विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न–भिन्न भूमि राजस्व प्रणालियाँ लागू कीं।

## स्थायी बंदोबस्त – संरचना और प्रभाव

1793 में लॉर्डकॉर्नवालिस द्वारा लागू स्थायी बंदोबस्त ब्रिटिश भूमि नीति का पहला सुव्यवस्थित प्रयोग था। इस व्यवस्था के अंतर्गत जमींदारों को भूमि का स्वामी घोषित किया गया और उनसे एक निश्चित राशि को स्थायी रूप से सरकार को देने की शर्त रखी गई। औपनिवेशिक अधिकारियों का विश्वास था कि जमींदार वर्ग कृषि सुधार में निवेश करेगा और ग्रामीण समाज में स्थायित्व लाएगा। रणजीत गुहा के अनुसार यह नीति वस्तुतः संपत्ति के अधिकारों को औपनिवेशिक हितों के अनुरूप पुनर्परिभाषित करने का प्रयास थी।[3]

व्यवहार में स्थायी बंदोबस्त किसानों के लिए विनाशकारी सिद्ध हुआ। जमींदारों ने अधिकतम लाभ के लिए किसानों पर अत्यधिक लगान थोपा और समय पर भुगतान न होने पर बेदखली को सामान्य प्रक्रिया बना दिया। आर.सी. दत्त का मत है कि इस नीति ने भारतीय कृषि को एक 'राजस्व मशीन' में परिवर्तित कर दिया, जिसमें किसान की भूमिका केवल कर–देने वाले की रह गई।[4] इसके परिणामस्वरूप किसान भूमि से कटता गया और ग्रामीण समाज में वर्गीय विभाजन तीव्र होता चला गया।

## रैयतवारी व्यवस्था और किसान समाज

दक्षिण एवं पश्चिम भारत में लागू रैयतवारी व्यवस्था का विकास थॉमस मुनरो के नेतृत्व में हुआ। इस प्रणाली में किसान को भूमि का प्रत्यक्ष धारक माना गया और वह सीधे सरकार को राजस्व देता था। सिद्धांततः यह व्यवस्था जमींदारी शोषण से मुक्ति प्रदान करती प्रतीत होती थी।[5]

परंतु व्यवहार में अत्यधिक कर–दर, बार–बार भू–मूल्यांकन और प्राकृतिक आपदाओं के समय राहत के अभाव ने किसानों को गहरे संकट में डाल दिया। तपन रायचौधुरी के अनुसार रैयतवारी व्यवस्था ने किसान को राज्य के प्रत्यक्ष शोषण के अधीन कर दिया और साहूकारों की भूमिका को और सुदृढ़ किया।[6] इस व्यवस्था के अंतर्गत किसान की आर्थिक स्वतंत्रता सीमित होती चली गई।

## महालवारी व्यवस्था और ग्रामीण संरचना

उत्तर भारत और पंजाब में लागू महालवारी व्यवस्था में पूरे गाँव या महाल को कर–इकाई माना गया। यह प्रणाली सामुदायिक उत्तरदायित्व की अवधारणा पर आधारित थी, किंतु व्यवहार में कर का भार अंततः किसानों पर ही पड़ा। बी.एच. बैडन–पॉवेल के अनुसार इस व्यवस्था ने ग्रामीण समाज में सामूहिक दायित्व के नाम पर व्यक्तिगत किसानों पर अत्यधिक दबाव डाला।[7]

## सामाजिक –आर्थिक प्रभाव

ब्रिटिश भूमि राजस्व नीतियों ने भारतीय ग्रामीण समाज की पारंपरिक संरचना को गहराई से प्रभावित किया। ग्राम–समुदाय की स्वायत्तता समाप्त होती गई और किसान आत्मनिर्भर उत्पादक से औपनिवेशिक व्यवस्था का अधीनस्थ बन गया। नकदी फसलों को बढ़ावा दिए

 ISBN: 978-81-993143-8-2

जाने से खाद्यान्न उत्पादन में कमी आई, जिसके परिणामस्वरूप अकालों की आवृत्ति बढ़ी। सुमित सरकार के अनुसार औपनिवेशिक कृषि नीतियों ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था को असंतुलित कर दिया और व्यापक गरीबी को जन्म दिया।[8]

## किसान विद्रोह और औपनिवेशिक प्रतिरोध

ब्रिटिश भूमि नीतियों के विरुद्ध ग्रामीण समाज ने विभिन्न रूपों में प्रतिरोध प्रकट किया। नील विद्रोह, संथाल विद्रोह और दक्कन दंगे केवल आर्थिक संघर्ष नहीं थे, बल्कि वे औपनिवेशिक भूमि व्यवस्था के विरुद्ध सामाजिक चेतना की अभिव्यक्ति थे। रणजीत गुहा के अनुसार ये आंदोलन औपनिवेशिक सत्ता के विरुद्ध किसानों की स्वायत्तता की लड़ाई थे।[9]

## निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध–पत्र के विश्लेषण से यह स्पष्ट रूप से प्रतिपादित होता है कि ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के अंतर्गत लागू की गई भूमि राजस्व नीतियाँ भारतीय ग्रामीण समाज के लिए दीर्घकालीन और गहरे संकट का कारण बनीं। इन नीतियों का मूल उद्देश्य भारतीय कृषि व्यवस्था का सुधार नहीं, बल्कि औपनिवेशिक राज्य की वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति करना था। परिणामस्वरूप भूमि, जो भारतीय समाज में आजीविका, सामाजिक प्रतिष्ठा और सांस्कृतिक पहचान का आधार थी, उसे मात्र राजस्व–संग्रह की वस्तु में परिवर्तित कर दिया गया। इससे किसान और भूमि के बीच पारंपरिक संबंध टूट गया और ग्रामीण समाज की आत्मनिर्भर संरचना कमजोर होती चली गई।

स्थायी बंदोबस्त ने जहाँ जमींदार वर्ग को सुदृढ़ कर एक नए शोषक वर्ग का निर्माण किया, वहीं रैयतवारी और महालवारी व्यवस्थाओं ने किसान को प्रत्यक्ष रूप से औपनिवेशिक राज्य के नियंत्रण में ला खड़ा किया। इन सभी व्यवस्थाओं में कर की दरें अत्यधिक थीं और प्राकृतिक आपदाओं अथवा फसल की विफलता की स्थिति में भी राजस्व में पर्याप्त राहत नहीं दी जाती थी। इसका प्रत्यक्ष परिणाम यह हुआ कि किसान व्यापक रूप से ऋणग्रस्त हुआ और साहूकार ग्रामीण अर्थव्यवस्था का निर्णायक तत्व बन गया। इस प्रक्रिया ने ग्रामीण समाज में आर्थिक असमानता और सामाजिक विभाजन को और अधिक तीव्र कर दिया।

ब्रिटिश भूमि राजस्व नीतियों का प्रभाव केवल आर्थिक क्षेत्र तक सीमित नहीं रहा, बल्कि उसने ग्रामीण समाज की सामाजिक संरचना, सामुदायिक संबंधों और सांस्कृतिक जीवन को भी प्रभावित किया। परंपरागत ग्राम–समुदाय, जो आपसी सहयोग और सामूहिक उत्तरदायित्व पर आधारित था, धीरे–धीरे विघटित होने लगा। जाति और वर्ग आधारित असमानताएँ और गहरी हुईं तथा किसान, जो कभी ग्रामीण समाज का केंद्रीय घटक था, औपनिवेशिक व्यवस्था में सबसे अधिक उपेक्षित वर्ग बन गया।

इन नीतियों के विरुद्ध उभरे किसान विद्रोह और आंदोलन इस तथ्य की पुष्टि करते हैं कि भारतीय ग्रामीण समाज ने औपनिवेशिक शोषण को निष्क्रिय रूप से स्वीकार नहीं किया। नील विद्रोह, संथाल विद्रोह और दक्कन दंगे जैसे आंदोलन केवल आर्थिक

असंतोष की अभिव्यक्ति नहीं थे, बल्कि वे औपनिवेशिक भूमि व्यवस्था के विरुद्ध सामाजिक चेतना और प्रतिरोध के सशक्त उदाहरण थे। इन आंदोलनों ने आगे चलकर राष्ट्रीय आंदोलन को सामाजिक आधार प्रदान करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय राज्य द्वारा लागू किए गए भूमि सुधार कार्यक्रमकृजैसे जमींदारी उन्मूलन, भूमि–सीमा कानून और काश्तकारी सुधारकृको इसी औपनिवेशिक विरासत की प्रतिक्रिया के रूप में देखा जा सकता है। यद्यपि ये सुधार पूर्णतः सफल नहीं रहे, फिर भी उन्होंने ब्रिटिश भूमि राजस्व नीतियों द्वारा उत्पन्न असमानताओं को कम करने का प्रयास अवश्य किया।

अतः यह कहा जा सकता है कि ब्रिटिश भूमि राजस्व नीतियों का ऐतिहासिक अध्ययन केवल औपनिवेशिक अतीत को समझने का माध्यम नहीं है, बल्कि यह स्वतंत्र भारत की ग्रामीण समस्याओं, भूमि–संबंधों और कृषि संकट की ऐतिहासिक जड़ों को पहचानने में भी सहायक है। भारतीय ग्रामीण समाज की वर्तमान चुनौतियों को समझने के लिए औपनिवेशिक भूमि नीतियों का यह विश्लेषण अत्यंत प्रासंगिक और आवश्यक सिद्ध होता है।

**संदर्भ**


- इरफान हबीब, मुगल भारत की कृषि व्यवस्था (नई दिल्ली ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1999), पृ. 45–48।
- बिपिन चंद्र, आधुनिक भारत का इतिहास (नई दिल्लीः ओरिएंटब्लैकस्वान, 2016), पृ. 87।
- रणजीत गुहा, बंगाल में संपत्ति का शासन (पेरिसः मूटन, 1963), पृ. 112–118।
- आर. सी. दत्त, प्रारंभिक ब्रिटिश शासन के अधीन भारत (लंदनःकेगनपॉल, 1902), पृ. 214।
- थॉमसमुनरो, रैयतवारी व्यवस्था पर टिप्पणियाँ (मद्रास, 1824), पृ. 39।
- तपन रायचौधुरी, भारत में ब्रिटिश कृषि नीति (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1983), पृ. 201–205।
- बी. एच. बैडन–पॉवेल, ब्रिटिश भारत की भूमि प्रणालियाँ, खंडदृ2 (ऑक्सफोडः क्लेरेंडन प्रेस, 1892), पृ. 56।
- सुमित सरकार, आधुनिक भारत (नई दिल्ली :मैकमिलन, 2014), पृ. 132–135।
- रणजीत गुहा, औपनिवेशिक भारत में किसान विद्रोह के प्रारंभिक स्वरूप (दिल्ली :ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1983), पृ. 7–10।


 **ISBN: 978-81-993143-8-2**

१७

# आर्थिक विकास में महिलाओं की भूमिका : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

**डॉ. शशि पंडित**
गेस्ट फैकल्टी,
समाजशास्त्र विभाग जय नारायण व्यास विभाग, जोधपुर

**सारांश**

नारी देश एवं समाज की उन्नति में सदैव अपने कार्यो की पूर्ति में ईमानदारी से लगी रहती है, समाज की निरन्तरता से लेकर पोषण तक की जिम्मेदार उसे ही माना गया है। चाहे बात आर्थिक विकास की हो या सामाजिक अथवा सांस्कृतिक विकास की महिला की जिम्मेदारी हर क्षेत्र में वांछनीय है।

हम परिवार में उन्नति और बचत की बात करें तो मां, दादी, नानी, बहनें और बहुएँ ही अपना बैंक सीमित करती नजर आती है, जो उसके त्याग, मित्तव्ययता ओर परिवार में बच्चों के विकास, बड़े, बुजुर्गों के स्वस्थ्य, संरक्षण तथा परिवार और समाज तथा सदैव मान–सम्मान बनाये रखने में उसका योगदान है। नारी और पुरूष परिवार, समाज की गाड़ी के दो पहिए है। जिनका समान्तर चलते रहना, मंजिल पर पहुँचने की निशानी है। इस बात से आज प्रत्येक परिवार और देश परिचित है।

देश के आर्थिक विकास को गति देने के लिए महिलाओं के अधिकारों और लैंगिक समानता को प्राप्त करने के लिए महिलाओं का आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होना अत्यन्त आवश्यक है। महिलाओं के आर्थिक विकास का अर्थ है यह सुनिश्चित करना कि महिलाएं समान रूप से सभ्य कार्य और सामाजिक सुरक्षा में भाग ले सकें और उसका लाभ उठा सकें साथ ही बाजारों तक पहुँच सकें और संसाधन अपने समय, जीवन और शरीर पर नियंत्रण रख सकें और घर से लेकर अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों तक सभी स्तरों पर आर्थिक निर्णय लेने में विभिन्न संस्थाओं में सार्थक भागीदारी निभा सकें।

**कीवर्ड्स :** अर्थिक विकास, मितव्ययता, संरक्षण, समाज, लैंगिक समानता, आत्मनिर्भरता

**प्रस्तावना**

आर्थिक क्षेत्र में जब महिलाओं की भागीदारी में वृद्धि होती है तो अर्थव्यवस्था में भी निश्चित रूप से बढ़ातरी होती है। महिलाओं का आर्थिक सशक्तीकरण, साझा समृद्धि के लिए देश में आर्थिक विविधीकरण और आय समानता को बढ़ाता है। यह अनुमान लगाया गया है कि लैंगिक अंतर को कम करने से वैश्विक अर्थव्यवस्था को 7 ट्रिलियन डॉलर का बढ़ावा मिल सकता है।

महिला श्रम–शक्ति भागीदारी दरों में भारत 131 देशों में 120वें स्थान पर है और लिंग आधारित हिंसा की दरें अस्वीकार्य रूप से उच्च बनी हुई हैं। जब आधी आबादी अर्थव्यवस्था में पूरी तरह से भाग नहीं ले रही है, तो समावेशी और टिकाऊ तरीके से विकास करना कठिन है। सकल घरेलु उत्पाद के 17 प्रतिशत पर, भारतीय महिलाओं का

आर्थिक योगदान वैश्विक औसत के आधे से भी कम है, और उदाहरण के लिए, चीन में 40% की तुलना में प्रतिकूल है। यदि लगभग 50% महिलाएँ कार्यबल में शामिल हो सकती हैं, तो भारत अपनी वृद्धि को 1.5 प्रतिशत अंक बढ़ाकर 9 प्रतिशत प्रति वर्ष कर सकता है।

ये आँकड़े भारत में लैंगिक आधार पर आर्थिक असमानता को दर्शाता है, परन्तु इसका आशय यह नहीं है कि भारत को इस क्षेत्र में कुछ सफलता नहीं मिली है। कई सरकारी व गैर संगठनों के प्रयासों तथा सरकारी योजनाओं का लाभ लेकर आज महिलाएँ आगे बढ़कर उच्च शिक्षा ग्रहण कर रही हैं, अपनी श्रम क्षमता को बढ़ावा दे रही हैं, और अन्य परिस्थितियों में बदलाव और आय में वृद्धि के कारण आय के नये नये विकल्प चुन रही हैं, लेकिन भारत को अपनी विकास क्षमता को साकार करने के लिए इस प्रवृत्ति को और विकसित करना होगा। रूढ़िवादी प्रवृत्ति को उलटने और भारत में महिलाओं के आर्थिक विकास की बढ़ोतरी के लिए समग्र रूप से विशेष प्रयास करने होंगे।

लड़कियों और महिलाओं को महत्व देना समाज को अधिक समृद्ध बनाने में महत्वपूर्ण कारक है और अन्य देशों में काम करने का मेरा अनुभव यह दर्शाता है। महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण गरीबी में कमी के साथ अत्यधिक जुड़ा हुआ है क्योंकि महिलाएँ अपनी कमाई का अधिक हिस्सा अपने बच्चों और समुदायों में निवेश करती हैं।

अपनी ओर से, विश्व बैंक यह सुनिश्चित करता है कि उसकी परियोजनाएँ महिलाओं की अधिक आर्थिक भागीदारी को बढ़ावा देने के लिए संरचित हों। उदाहरण के लिए, हमने पिछले 15 वर्षों में राज्य सरकारों को स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से गरीब ग्रामीण महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए 3 बिलियन डॉलर से अधिक का निवेश किया है। इन परियोजनाओं ने 45 मिलियन गरीब महिलाओं को कौशल, बाज़ार और व्यवसाय विकास सेवाओं तक पहुँच बनाने में सहायता की है। उनमें से कुछ सफल उद्यमी बन गई हैं और दूसरों के लिए प्रेरणा बन गई हैं। परिणामस्वरूप, साक्ष्य बताते हैं कि इन महिलाओं को अधिक खाद्य सुरक्षा, वित्त तक बेहतर पहुँच और उच्च आय का अनुभव होता है जो उनके परिवारों और समुदायों को लाभान्वित करता है।

हम जिस कौशल भारत मिशन का समर्थन कर रहे हैं, वह न केवल महिलाओं को नियोक्ताओं द्वारा मांगे जाने वाले प्रासंगिक कौशल प्रदान करता है, बल्कि यह भी सुनिश्चित करता है कि प्रशिक्षण कार्यक्रम सुरक्षित परिवहन, लचीले कार्यक्रम और चाइल्डकेअर सहायता प्रदान करने में मदद करके उनकी आवश्यकताओं के प्रति संवेदनशील हों। झारखंड में, विश्व बैंक किशोर लड़कियों को उनकी माध्यमिक शिक्षा पूरी करने में मदद करने के लिए निवेश कर रहा है और उन्हें नौकरी के बाजार में सफल होने के लिए मार्गदर्शन सेवाएँ प्रदान कर रहा है।

हालाँकि, ये परियोजनाएँ और हस्तक्षेप अकेले अपर्याप्त हैं। शोध से पता चलता है कि कौशल कार्यक्रम पूरा करने वाली और नौकरी पाने वाली महिलाएँ भी पारिवारिक दबाव के कारण नौकरी छोड़ देती हैं। विवाह, काम और घरेलू कर्त्तव्यों से जुड़े सामाजिक मानदंडों को बदलना एजेंडे का हिस्सा होना चाहिए।

 ISBN: 978-81-993143-8-2

महिलाओं की विज्ञान और गणित जैसे विषयों में रुचि को जागृत करना होगा और उन्हें विश्वास दिलाना होगा कि वे भी पुरुषों की तरह ही सक्षम हैं; कि वे भी इंजीनियरिंग, वैज्ञानिक अनुसंधान, आईटी और ऐसे क्षेत्रों में कैरियर बना सकती हैं, जिनकी भावी नियोक्ताओं को मांग है। हमें अपने बेटों को, लड़कियों और महिलाओं का सम्मान करना सिखाना चाहिए और यह स्पष्ट करना चाहिए कि लिंग आधारित हिंसा एवं असमानता के लिए कोई सहिष्णुता नहीं है।

घर में, हमें परिवारों को अपनी लड़कियों को भविष्य की सक्षम पेशेवर के रूप में देखने की आवश्यकता है। घरेलू जिम्मेदारियों को पुरुषों और महिलाओं के बीच समान रूप से विभाजित किया जा सकता है।

यह पुराने कानून और नीतियों पर पुनर्विचार करने और उन्हें सुधारने का एक उपयुक्त समय है जो महिलाओं को श्रम बाजार में प्रवेश करने या रहने के लिए बाधा के रूप में कार्य करते हैं। बेहतर नौकरियों के सृजन को बढ़ावा देना, बच्चे और बुजुर्गों की देखभाल के लिए सहायता प्रदान करना, और काम पर आने–जाने की गतिशीलता सुनिश्चित करना महिलाओं के लिए रोजगार तक पहुँचने में महत्वपूर्ण संरचनात्मक बाधाओं को दूर कर सकता है।

नियोक्ताओं को अपनी बात पर अमल करना चाहिए और महिलाओं को काम पर रखकर तथा उन्हें समान काम के लिए पुरुषों के समान वेतन देकर कार्यस्थल में विविधता का समर्थन करने के लिए प्रतिबद्ध होना चाहिए। हमें सुरक्षित परिवहन की आवश्यकता है तथा कार्यालय में यौन उत्पीड़न के प्रति शून्य सहिष्णुता की आवश्यकता है। निजी क्षेत्र को उभरते उद्योगों में रोजगार और फर्म स्वामित्व में महिलाओं की हिस्सेदारी बढ़ाने में अग्रणी भूमिका निभानी चाहिए।

हम साथ मिलकर काम करके प्रगति को गति दे सकते हैं। लिंग–केंद्रित योजना तब अधिक प्रभावी होती है जब इसे हम जो कुछ भी करते हैं उसमें शामिल किया जाता है। आज विश्व बैंक कई क्षेत्रों में लिंग आधारित विकास के बारे में सोचता है और इसे विभिन्न क्षेत्रों में हमारी परियोजना डिजाईन और कार्यान्वयन में शामिल करता है।

## भारत में महिलाओं की वर्तमान स्थिति

जहाँ तक आज स्वतंत्रता के 76 वर्षों बाद देश में महिलाओं की आर्थिक क्षेत्र में भागीदारी का प्रश्न है उनकी स्थिति का विश्लेषण करें तो भारत की कुल एमएसएमई का मात्र 19 प्रतिशत महिलाओं द्वारा संचालित हो रहा है। महिलाओं का वेतन भी पुरुषों के वेतन का पैंसठ प्रतिशत ही है। बीएर्स और एनएसई में सूचीबद्ध कंपनियों में मात्र नौ प्रतिशत महिलाएँ उच्च पद पर आसीन हैं। जिस तरह दिन–प्रतिदिन कम्प्यूटर द्वारा ऑटोमेशन हो रहा है उससे वर्ष 2030 तक करीब दो करोड़ ग्रामीण रोजगारों में संलग्न महिलाओं के सामने बेरोजगारी की समस्या भी खड़ी हो रही है। अगर भारत में महिलाओं को पुरुषों के बराबर रोजगार में प्राथमिकता मिलने लग जाये तो अर्थव्यवस्था में बिना कोई आमूलचूल परिवर्तन हुए भी जीडीपी सात अरब डॉलर तक बढ़ सकती है।

इसके माध्यम से समाज में एक बदलाव आएगा तथा महिलाओं का समाज के आर्थिक विकास में भी योगदान बढ़ेगा। इस संदर्भ में हमारे समाज की एक वास्तविकता को भी समझना होगा। आज भी हमारा समाज उद्यमिता या एंटरप्रेन्योरशिप के अंतर्गत महिलाओं को कमजोर समझता है। यह लगभग सभी की मानसिकता है कि व्यवसाय या व्यापार करना सिर्फ पुरुषों के दायरे में आता है, क्योंकि वही इसमें ज्यादा सक्षम होते हैं। इसी सोच के कारण महिला उद्यमी को अपने व्यापार–व्यवसाय को दूसरों के सामने प्रस्तुत करने में अनेक समस्याएं आती है, जिसमें सबसे बड़ी बाधा आवश्यक वित्त की सुविधाओं के निर्धारण तथा प्राप्ति से संबंधित होती है।

इसके अलावा हमारे समाज में महिलाएँ स्वयं भी व्यवसाय को प्राथमिकता नहीं देना चाहतीं, क्योंकि वे इसमें पुरुषों का एकाधिकार ज्यादा देखती हैं। यह भी हमारी एक सामाजिक मानसिकता का प्रतीक है कि परिवार में छोटे बच्चों के पालन–पोषण की प्राथमिक जिम्मेदारी पुरुष की तुलना में महिला की ज्यादा होती है, जिसके कारण भी आधुनिक रूप से शिक्षित महिलाएँ व्यापार करने का निर्णय लेने में हिचकिचाती हैं तथा वे व्यवसाय की तुलना में नौकरी करने को ज्यादा उचित समझती हैं, क्योंकि उस दशा में वे अपने आप को ज्यादा सुविधाजनक पाती हैं। अगर वास्तव में महिला आर्थिक विकास की बात करनी है, तो हमें उपरोक्त सामाजिक सोच तथा मानसिकता को बदलना होगा।

इस संदर्भ में एक विडंबना यह भी है कि उन महिलाओं को आर्थिक विकास से कैसे जोड़ा जाए, जो निम्न मध्यवर्गीय परिवार से संबंधित हैं। वे मात्र साक्षर हैं, आधुनिक रूप से शिक्षित नहीं हैं तथा उनके परिवार में आश्रितों की संख्या भी अधिक है। वर्तमान परिस्थिति में हमारे मुल्क में ऐसी महिलाओं की संख्या काफी है। यहाँ एक आदर्श स्थिति बन सकती है, अगर ये महिलाएँ स्वयं आगे बढ़ कर किसी भी तरह के आर्थिक रोजगार को अपनी आय का मुख्य स्रोत बनाने का निश्चय करें। इसके माध्यम से जहां एक तरफ आश्रितों की संख्या कम होगी, वहीं दूसरी तरफ आर्थिक विषमता भी कम होगी।

## आर्थिक विकास में महिलाओं की भूमिका बढ़ाने के सम्बन्धी सुझाव

भारत में महिला आर्थिक विकास तभी संभव है जब महिलाओं में रोजगार बढ़ाने का लक्ष्य या उद्देश्य रखा जाये। भारत में वर्तमान महिला आर्थिक विकास से सम्बन्धित कार्यों और नीतियों पर एक दृष्टि डालें तो पायेंगे कि आजादी के 78 वर्षों बाद भी महिला सशक्तिकरण का विचार हमारे कानों में गूंजता तो रहा है पर अभी तक भारत में इस कोई ठोस कार्य नहीं हुए हैं। सही अर्थों में महिला सशक्तिकरण तभी संभव है जब महिला आर्थिक विकास की ओर मजबूती से कार्य हो।

महिलाओं के आर्थिक स्वावलम्बन की सोच को देखते हुए अब महिलाओं को ज्यादा से ज्यादा उद्यमिता की तरफ बढ़ना चाहिए। पिछले कुछ वर्षों से समाज में एक बदलाव आया है, जिसमें माता–पिता अपनी पुत्री के लिए भी तकनीकी तथा व्यावसायिक प्रबंधन की शिक्षा को ज्यादा से ज्यादा प्राथमिकता देने का प्रयास कर रहे हैं। महिलाओं के आर्थिक विकास के मुद्दे को बड़ी संख्या में तब बल मिलेगा, जब ऐसी शिक्षित लड़कियां स्वयं आगे बढ़कर अपनी तकनीकी तथा व्यावसायिक प्रबंधन की शिक्षा का उपयोग स्वयं के व्यावसायिक प्रतिष्ठान में करने का प्रयास करेंगी।

 ISBN: 978-81-993143-8-2

महिलाओं के आर्थिक अवसर को बढ़ाने के लिए किए जाने वाले निवेश में निम्नलिखित शामिल हैं :–

**वित्तीय समावेशन :** बेहतर विनियमन, प्रौद्योगिकी और वित्तीय साक्षरता के माध्यम से ऋण, बचत, बीमा और भुगतान प्रणालियों जैसी गुणवत्तापूर्ण वित्तीय सेवाओं तक महिलाओं की पहुंच बढ़ाने के प्रयासों का समर्थन करना।

**महिलाएं और कृषि :** कृषि विकास और खाद्य सुरक्षा को आगे बढ़ाने में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका पर प्रकाश डालना, तथा महिला किसानों और महिलाओं के स्वामित्व वाले कृषि व्यवसायों के लिए नीतिगत और कार्यक्रमगत समर्थन को प्रोत्साहित करना।

**उद्यम विकास :** महिलाओं की आर्थिक भागीदारी को सक्षम बनाने वाले नीति और कार्यक्रम समाधानों की वकालत करने वाले गैर सरकारी संगठनों, उद्योग संघों और निगमों को समर्थन प्रदान करना, जिसमें पूँजी, भूमि स्वामित्व और उत्तराधिकार अधिकारों तक पहुंचने में बाधा डालने वाले भेदभावपूर्ण कानूनों और प्रथाओं में सुधार करना, तथा महिलाओं द्वारा संचालित एसएमई के विकास के लिए अनुकूल नीतिगत माहौल को प्रोत्साहित करना शामिल है।

**प्रौद्योगिकी तक पहुंच :** सांस्कृतिक, वित्तीय, शैक्षिक और प्रेरक बाधाओं को दूर करके मोबाईल फोन, इंटरनेट और अन्य महत्वपूर्ण प्रौद्योगिकियों तक पहुँचने में लिंग अंतर को कम करना।

**क्षमता निर्माण :** महिलाओं और लड़कियों को क्षमता निर्माण, प्रशिक्षण और मार्गदर्शन कार्यक्रम प्रदान करना और उन्हें बाजार की जानकारी, उद्यमशीलता के अवसर और आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए आवश्यक कौशल से लैस करना, उदाहरण के लिए, हमारे समृद्धि के मार्ग और महिला उद्यमी कार्यक्रम के माध्यम से।

**व्यावसायिक नेतृत्व :** कॉर्पोरेट बोर्ड सहित वरिष्ठ प्रबंधन पदों पर महिलाओं का प्रतिनिधित्व बढ़ाने के लिए सर्वोत्तम प्रथाओं को प्रोत्साहित करें।

**डेटा संग्रहण :** सभी क्षेत्रों में महिलाओं की आर्थिक भागीदारी बढ़ाने के उद्देश्य से साक्ष्य–आधारित नीति और कार्यक्रम बनाने के लिए आर्थिक क्षेत्र में लिंग–संवेदनशील डेटा के संग्रहण और संरक्षण को बढ़ावा देना।

## निष्कर्ष

उपर्युक्त समस्त विवेचन से स्पष्ट है कि भारत में महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त बनाना एक महत्वपूर्ण मुद्दा है। भले ही महिलाएँ किसी भी समाज का अभिन्न अंग हैं, फिर भी आर्थिक गतिविधियों में उनके सक्रिय योगदान के माध्यम से निर्णय लेने में उनकी भागीदारी बदली है। महिला सशक्तिकरण और आर्थिक विकास आपस में जुड़े हुए हैं, जहाँ एक ओर, अकेले विकास महिलाओं और पुरुषों के बीच असमानता को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है, वहीं दूसरी ओर महिलाओं को सशक्त बनाने से विकास को लाभ मिल सकता है।

लैंगिक समानता के साथ महिला सशक्तिकरण मौलिक मानवाधिकारों की कुंजी है और यह अधिक शांतिपूर्ण, प्रगतिशील और टिकाऊ दुनिया की ओर हमारी यात्रा में

महत्वपूर्ण है। लैंगिक विभाजन को विकसित करना और समाप्त करना अपरिहार्य है और इसे महिलाओं के लिए समान अवसरों और समान प्रतिनिधित्व के माध्यम से संभव बनाया जा रहा है।

ग्रामीण भारत में भी, महिलाएँ हर रोज़ नई उपलब्धियाँ हासिल कर रही हैं। सामाजिक और पारिवारिक बहिष्कार के बावजूद, महिलाओं ने वित्तीय स्वतंत्रता के अपने अधिकार का दावा किया है, शून्य से व्यवसाय खड़ा किया है और अपने आस–पास के लोगों को प्रेरित किया है। पंचायत प्रणाली में महिलाओं को 50% आरक्षण दिया जाता है, जबकि 'राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन' जैसे कई राष्ट्रीय कार्यक्रम उन्हें जमीनी स्तर पर नेतृत्व के अवसर प्रदान कर रहे हैं। 'स्वच्छ भारत मिशन' और 'महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम' जैसी सरकारी पहलों ने महिला कार्यबल को पर्यवेक्षी नौकरी के अवसर प्रदान किए हैं।

आज, भारत दुनिया में स्टार्टअप के मामले में तीसरा सबसे बड़ा पारिस्थितिकी तंत्र है और साथ ही, यूनिकॉर्न समुदाय में भी तीसरा सबसे बड़ा है। हालाँकि, उनमें से केवल 10% का नेतृत्व महिला संस्थापकों द्वारा किया गया है। समय की माँग है कि महिला उद्यमियों के लिए मानसिक और वित्तीय रूप से अधिक समर्थन जुटाया जाए और उन्हें अपनी यात्रा शुरू करने में मदद की जाए। सौभाग्य से, पिछले कुछ वर्षों में महिलाओं के व्यवसायिक नेता बनने और कंपनियों की स्थापना करने की पूरी प्रक्रिया में एक बड़ा बदलाव देखा गया है।

### ➢ संदर्भ


- मनोज भगत एवं रंजना श्रीवास्तव, ग्रामीण महिलाओं के आर्थिक विकास में स्वयं सहायता समूह की भूमिका, संकल्प पब्लिकेशन, 2023, बिलासपुर
- कैमिला टॉलमिन, आर्थिक विकास में महिलाओं की भूमिका, रिसर्चगेट, 2013
- विभूति पटेल, भारत में महिलाओं के वेतन और अवैतनिक कार्यों में लैंगिक असमानताएं, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2024
- भारत की आर्थिक विकास गाथा में महिलाओं की भूमिका, सीआईआई (कनफेडरेशन ऑफ इंडियन इंडस्ट्री), मार्च 2022
- जी अंगला ईश्वरी, भारत में आर्थिक विकास में महिलाओं की भूमिका पर एक अध्ययन, शानलैक्स इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इकॉनोमिक्स, मदुरै, 2019
- प्रिया सिंह, भारत की आर्थिक सफलता में भूमिका निभा रही महिलाएं, वर्ल्ड इकॉनोमिक फोरम, फरवरी, 2024
- श्वेता कोचर, भारत की आर्थिक वृद्धि में महिला उद्यमियों का योगदान, पीकेसी इंडिया, चेन्नई, 2024
- एनेट डिक्सन, भारत की आर्थिक वृद्धि में महिलाएँ, वर्ल्ड बैंक ग्रुप, मुंबई, मार्च, 2018


 ISBN: 978-81-993143-8-2

१८

# औपनिवेशिक काल से वैश्वीकरण तकः सामाजिक–आर्थिक बदलाव की प्रक्रिया का ऐतिहासिक विश्लेषण

**डॉ आत्माराम**
सहायक आचार्य (इतिहास)
डॉ भीमराव अंबेडकर राजकीय महाविद्यालय श्रीगंगानगर

## सार

औपनिवेशिक काल से लेकर इक्कीसवीं सदी के वैश्वीकरण तक की यात्रा भारतीय समाज और अर्थव्यवस्था में गहरे, जटिल तथा बहुआयामी परिवर्तनों की कहानी है। औपनिवेशिक शासन ने भारत की पारंपरिक उत्पादन प्रणालियों, सामाजिक संरचनाओं और आर्थिक स्वायत्तता को गंभीर रूप से प्रभावित किया। इसके साथ ही आधुनिक प्रशासन, शिक्षा, परिवहन और संचार की नींव भी इसी काल में पड़ी। स्वतंत्रता के पश्चात भारत ने लोकतांत्रिक, समाजवादी तथा नियोजित विकास का मार्ग अपनाया, जिसका उद्देश्य आर्थिक आत्मनिर्भरता, सामाजिक न्याय और राष्ट्रीय एकता था। 1991 के बाद उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण की नीतियों ने भारतीय अर्थव्यवस्था को विश्व अर्थव्यवस्था से जोड़ा और सामाजिक–आर्थिक ढांचे में तीव्र परिवर्तन उत्पन्न किए। यह शोध पत्र औपनिवेशिक काल, स्वतंत्रता के बाद के भारत और वैश्वीकरण के युग में सामाजिक–आर्थिक बदलाव की प्रक्रिया का ऐतिहासिक, विश्लेषणात्मक और समालोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है।

कुंजी शब्दः औपनिवेशिक काल, सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन, नियोजित विकास, वैश्वीकरण, उदारीकरण, भारत

## भूमिका

सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन किसी भी समाज के ऐतिहासिक विकास की केंद्रीय प्रक्रिया होती है। भारत के संदर्भ में यह प्रक्रिया अत्यंत जटिल रही है क्योंकि यहाँ विविध भाषाएँ, संस्कृतियाँ, जातियाँ, धर्म और क्षेत्रीय असमानताएँ विद्यमान रही हैं। औपनिवेशिक शासन से पहले भारत की अर्थव्यवस्था मुख्यतः कृषि, कुटीर उद्योग और आंतरिक व्यापार पर आधारित थी। ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन ने भारत को वैश्विक पूंजीवादी व्यवस्था में अधीनस्थ रूप से सम्मिलित किया। स्वतंत्रता के बाद भारत ने नियोजित विकास और सामाजिक न्याय को प्राथमिकता दी। किंतु 1990 के दशक के बाद वैश्वीकरण ने विकास की दिशा और गति दोनों को बदल दिया। इस शोध पत्र का उद्देश्य इन तीनों चरणों औपनिवेशिक, उत्तर–औपनिवेशिक और वैश्वीकरण में सामाजिक–आर्थिक बदलाव की निरंतरता और विच्छेद का अध्ययन करना है।

औपनिवेशिक काल में सामाजिक–आर्थिक संरचना के अंतर्गत ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन ने भारतीय अर्थव्यवस्था को इस प्रकार ढाला कि वह ब्रिटेन के औद्योगिक हितों की पूर्ति कर सके। भारत कच्चे माल का आपूर्तिकर्ता और तैयार माल का उपभोक्ता बन

गया। इस नीति के कारण भारत की आर्थिक स्वायत्तता समाप्त हो गई और पारंपरिक उद्योग नष्ट होने लगे। औपनिवेशिक काल में लागू स्थायी बंदोबस्त, रैयतवारी और महालवारी व्यवस्थाओं ने ग्रामीण समाज को गहराई से प्रभावित किया। जमींदारी प्रथा ने शोषणकारी मध्यस्थ वर्ग को जन्म दिया, जबकि किसान भारी लगान, कर्ज और अकालों से पीड़ित रहे। नकदी फसलों को बढ़ावा देने से खाद्यान्न संकट और ग्रामीण असुरक्षा बढ़ी। भारत के समृद्ध हस्तशिल्प और कुटीर उद्योग औपनिवेशिक नीतियों के कारण नष्ट हो गए। ब्रिटिश उद्योगों से प्रतिस्पर्धा न कर पाने के कारण लाखों कारीगर बेरोजगार हो गए, जिससे शहरी और ग्रामीण गरीबी बढ़ी। औपनिवेशिक काल में आधुनिक शिक्षा, प्रेस और पश्चिमी विचारों के प्रभाव से सामाजिक चेतना का विकास हुआ। राजा राममोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर और ज्योतिबा फुले जैसे समाज सुधारकों ने सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध आंदोलन चलाए। भारतीय राष्ट्रवाद का उदय भी इसी सामाजिक परिवर्तन का परिणाम था।

स्वतंत्रता के बाद सामाजिक–आर्थिक पुनर्निर्माण (1947–1990)

1947 में स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत के सामने राष्ट्र–निर्माण की अत्यंत जटिल चुनौती थी। औपनिवेशिक शासन ने देश को गरीबी, अशिक्षा, आर्थिक पिछड़ेपन और सामाजिक विषमताओं की स्थिति में छोड़ दिया था। ऐसे में स्वतंत्र भारत के नेतृत्व ने एक ऐसे विकास मॉडल को अपनाया जिसमें राज्य की केंद्रीय भूमिका हो और सामाजिक–आर्थिक पुनर्निर्माण को योजनाबद्ध ढंग से आगे बढ़ाया जा सके।

राष्ट्र–निर्माण की प्रक्रिया में नियोजित विकास को आधार बनाया गया। 1950 में योजना आयोग की स्थापना की गई और पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से आर्थिक विकास की दिशा तय की गई। इस दौर में मिश्रित अर्थव्यवस्था का मॉडल अपनाया गया, जिसमें सार्वजनिक और निजी दोनों क्षेत्रों को स्थान दिया गया। भारी उद्योगों, सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों, ऊर्जा उत्पादन, परिवहन तथा आधारभूत संरचना के विकास पर विशेष बल दिया गया। भिलाई, राउरकेला और दुर्गापुर जैसे इस्पात संयंत्र राष्ट्र–निर्माण के प्रतीक बने। इन प्रयासों का उद्देश्य आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था का निर्माण और औद्योगिक आधार को मजबूत करना था।

सामाजिक–आर्थिक पुनर्निर्माण में कृषि विकास की भूमिका भी अत्यंत महत्वपूर्ण रही। स्वतंत्रता के बाद कृषि क्षेत्र में उत्पादन कम और जनसंख्या तेजी से बढ़ रही थी, जिससे खाद्यान्न संकट उत्पन्न हो गया। 1960 के दशक में हरित क्रांति के माध्यम से उच्च उपज वाली किस्मों के बीज, सिंचाई, रासायनिक उर्वरकों और आधुनिक तकनीकों का प्रयोग बढ़ाया गया। इसके परिणामस्वरूप गेहूं और चावल के उत्पादन में अभूतपूर्व वृद्धि हुई और भारत खाद्यान्न आत्मनिर्भरता की दिशा में अग्रसर हुआ। हालांकि, हरित क्रांति के लाभ मुख्यतः पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश जैसे क्षेत्रों तथा बड़े कृषकों तक सीमित रहे, जिससे क्षेत्रीय असमानता और सामाजिक विषमता में वृद्धि हुई।

नियोजित विकास के साथ–साथ औद्योगीकरण और शहरीकरण की प्रक्रिया भी तेज हुई। राज्य–नेतृत्वित औद्योगीकरण से इस्पात, मशीन निर्माण, ऊर्जा और रसायन

 ISBN: 978-81-993143-8-2

जैसे बुनियादी उद्योगों का विकास हुआ। उद्योगों के विस्तार ने रोजगार के नए अवसर उत्पन्न किए और ग्रामीण क्षेत्रों से शहरों की ओर जनसंख्या का प्रवाह बढ़ा। परिणामस्वरूप शहरीकरण की गति तेज हुई और एक नए श्रमिक वर्ग का उदय हुआ। हालांकि, शहरीकरण के साथ झुग्गी–झोपड़ियों, बेरोजगारी और बुनियादी सुविधाओं की कमी जैसी समस्याएँ भी सामने आईं।

स्वतंत्र भारत के सामाजिक–आर्थिक पुनर्निर्माण का एक महत्वपूर्ण आधार सामाजिक न्याय और लोकतांत्रिक व्यवस्था रही। भारतीय संविधान ने समानता, स्वतंत्रता, बंधुत्व और न्याय के मूल सिद्धांतों को स्थापित किया। अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण नीति लागू की गई, जिससे उन्हें शिक्षा, रोजगार और राजनीतिक प्रतिनिधित्व के अवसर प्राप्त हुए। शिक्षा के विस्तार, वयस्क शिक्षा कार्यक्रमों तथा उच्च शिक्षण संस्थानों की स्थापना ने सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा दिया। पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से लोकतंत्र को जमीनी स्तर तक पहुँचाने का प्रयास किया गया, जिससे स्थानीय स्तर पर भागीदारी और सशक्तिकरण संभव हुआ।

इस प्रकार 1947 से 1990 तक का कालखंड भारत में सामाजिक–आर्थिक पुनर्निर्माण का महत्वपूर्ण चरण रहा। इस दौर में नियोजित विकास, कृषि आधुनिकीकरण, औद्योगीकरण और सामाजिक न्याय की नीतियों ने राष्ट्र–निर्माण की नींव को मजबूत किया। यद्यपि इन प्रयासों से कई उपलब्धियाँ प्राप्त हुईं, फिर भी असमानता, गरीबी और क्षेत्रीय असंतुलन जैसी चुनौतियाँ बनी रहीं, जिन्होंने आगे के दशकों में नीतिगत सुधारों की आवश्यकता को रेखांकित किया।

### वैश्वीकरण, उदारीकरण और निजीकरण (1991 के बाद)

1991 का वर्ष भारतीय आर्थिक इतिहास में एक निर्णायक मोड़ सिद्ध हुआ। स्वतंत्रता के बाद लंबे समय तक भारत ने राज्य–नियंत्रित और नियोजित अर्थव्यवस्था का मॉडल अपनाया था, किंतु 1980 के दशक के अंत तक यह मॉडल कई संरचनात्मक समस्याओं से घिर गया। बढ़ता राजकोषीय घाटा, विदेशी मुद्रा भंडार में तीव्र गिरावट और भुगतान संतुलन का संकट भारत को गहरे आर्थिक संकट की ओर ले गया। 1991 में भारत के पास केवल कुछ सप्ताह के आयात के लिए ही विदेशी मुद्रा शेष थी। इस संकट ने भारत को आर्थिक सुधारों की दिशा में आगे बढ़ने के लिए बाध्य किया।

1991 के आर्थिक संकट की पृष्ठभूमि में भारत सरकार ने अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक की सहायता से व्यापक आर्थिक सुधार कार्यक्रम अपनाया। उदारीकरण के अंतर्गत लाइसेंस–परमिट राज को समाप्त किया गया, आयात–निर्यात नीतियों को सरल बनाया गया और विदेशी निवेश के लिए अर्थव्यवस्था को खोला गया। औद्योगिक क्षेत्र में निजी उद्यमों को अधिक स्वतंत्रता दी गई तथा सार्वजनिक क्षेत्र के एकाधिकार को सीमित किया गया। इन सुधारों का उद्देश्य प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देना, उत्पादन क्षमता में वृद्धि करना और आर्थिक विकास की गति को तेज करना था।

उदारीकरण की प्रक्रिया के साथ–साथ भारत तेजी से वैश्वीकरण की ओर बढ़ा। वैश्वीकरण ने भारतीय अर्थव्यवस्था को विश्व बाजार से जोड़ दिया, जिससे पूँजी, प्रौद्योगिकी, वस्तुओं और सेवाओं का अंतरराष्ट्रीय प्रवाह बढ़ा। इस प्रक्रिया का सबसे अधिक लाभ आईटी और सेवा क्षेत्र को मिला। सूचना प्रौद्योगिकी, सॉफ्टवेयर निर्यात, बीपीओ और ज्ञान आधारित उद्योगों का तीव्र विकास हुआ, जिससे भारत वैश्विक सेवा केंद्र के रूप में उभरा। इसके साथ ही बहुराष्ट्रीय कंपनियों का भारत में विस्तार हुआ, जिससे विदेशी प्रत्यक्ष निवेश में वृद्धि हुई। निर्यात में बढ़ोतरी हुई और भारत विश्व व्यापार प्रणाली का सक्रिय भागीदार बना। हालांकि, वैश्वीकरण से अर्थव्यवस्था में प्रतिस्पर्धा बढ़ी, परंतु इससे क्षेत्रीय असमानताओं और आय विषमता में भी वृद्धि देखी गई।

आर्थिक सुधारों और वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप श्रम बाजार में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। एक ओर आईटी, सेवा क्षेत्र और निजी उद्योगों में नए रोजगार के अवसर उत्पन्न हुए, वहीं दूसरी ओर रोजगार की प्रकृति अधिक अस्थायी और असंगठित होती चली गई। ठेका श्रम, अस्थायी नियुक्तियाँ और अनौपचारिक रोजगार में वृद्धि हुई, जिससे श्रमिकों की सामाजिक सुरक्षा कमजोर हुई। श्रमिकों को स्थायित्व, न्यूनतम मजदूरी, स्वास्थ्य बीमा और पेंशन जैसी सुविधाएँ सीमित रूप में उपलब्ध रहीं। परिणामस्वरूप श्रमिक सुरक्षा और सामाजिक न्याय से जुड़ी नई चुनौतियाँ सामने आईं। इस दौर में आर्थिक विकास की दर बढ़ी, परंतु "रोजगार रहित विकास" की अवधारणा भी चर्चा में आई। इस प्रकार 1991 के बाद का कालखंड भारत में उदारीकरण, वैश्वीकरण और निजीकरण के माध्यम से आर्थिक संरचना में गहरे परिवर्तन का साक्षी बना। इन नीतियों ने आर्थिक विकास, वैश्विक एकीकरण और तकनीकी प्रगति को गति दी, लेकिन साथ ही सामाजिक असमानता, श्रमिक असुरक्षा और क्षेत्रीय विषमता जैसी समस्याओं को भी जन्म दिया। अतः यह कहा जा सकता है कि आर्थिक सुधारों ने अवसरों के साथ–साथ नई चुनौतियाँ भी प्रस्तुत कीं, जिनका समाधान समावेशी और संतुलित विकास नीतियों के माध्यम से ही संभव है।

**वैश्वीकरण के सामाजिक प्रभाव**

वैश्वीकरण ने भारतीय समाज की संरचना, सोच और जीवनशैली में गहरे और बहुआयामी परिवर्तन किए हैं। आर्थिक उदारीकरण और वैश्विक संपर्कों के विस्तार के साथ समाज में उपभोग, अवसर और असमानताकृतीनों एक साथ उभरे। सबसे पहले, उपभोग संस्कृति और जीवनशैली पर वैश्वीकरण का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों, वैश्विक ब्रांडों, मीडिया, विज्ञापन और डिजिटल तकनीक के प्रसार ने उपभोग को सामाजिक प्रतिष्ठा और आधुनिकता का प्रतीक बना दिया। शहरी मध्यम वर्ग में भौतिक उपभोग, फैशन, फास्ट फूड, मोबाइल फोन और डिजिटल सेवाओं का तेजी से विस्तार हुआ। इससे पारंपरिक सादगी, सामूहिकता और स्थानीय सांस्कृतिक मूल्यों पर प्रभाव पड़ा तथा व्यक्ति–केंद्रित और बाजार–आधारित जीवनशैली को बढ़ावा मिला। दूसरे, वैश्वीकरण के साथ असमानता और बहिष्करण की समस्या भी गहराई। यद्यपि आर्थिक विकास की गति तेज हुई, पर उसके लाभ समाज के सभी वर्गों तक समान रूप से नहीं पहुँचे। आय, शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में अमीरदृगरीब की खाई बढ़ी। शहरी क्षेत्रों और

 ISBN: 978-81-993143-8-2

ग्रामीण क्षेत्रों के बीच, विकसित और पिछड़े राज्यों के बीच स्पष्ट अंतर उभर आया। संगठित क्षेत्र, उच्च कौशल वाले वर्ग और वैश्विक बाजार से जुड़े लोग अधिक लाभान्वित हुए, जबकि असंगठित क्षेत्र, छोटे किसान, श्रमिक और वंचित वर्ग अपेक्षाकृत पीछे रह गए, जिससे सामाजिक बहिष्करण की प्रवृत्ति बढ़ी। तीसरे, शिक्षा और स्वास्थ्य पर प्रभाव भी दोहरा रहा। वैश्वीकरण और निजीकरण के कारण निजी विद्यालयों, विश्वविद्यालयों, अस्पतालों और स्वास्थ्य सेवाओं का तेजी से विस्तार हुआ, जिससे विकल्प और सुविधाएँ बढ़ीं। हालांकि, इन सेवाओं की ऊँची लागत के कारण गरीब और निम्न आय वर्ग की पहुँच सीमित रही। परिणामस्वरूप गुणवत्ता और पहुँच में असमानता बनी रही, जहाँ एक ओर उच्च वर्ग को बेहतर सुविधाएँ मिलीं, वहीं दूसरी ओर बड़ी आबादी बुनियादी शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं के लिए संघर्ष करती रही। इस प्रकार, वैश्वीकरण ने जहाँ उपभोग संस्कृति और आधुनिक जीवनशैली को बढ़ावा दिया, वहीं सामाजिक असमानता और बहिष्करण की चुनौतियों को भी गहरा किया। इसलिए इसके सामाजिक प्रभावों का संतुलित मूल्यांकन और समावेशी नीतियाँ आवश्यक हैं।

## समालोचनात्मक विश्लेषण

औपनिवेशिक शासन ने भारत की अर्थव्यवस्था को कमजोर किया, पर आधुनिक संस्थानों की नींव भी रखी। स्वतंत्रता के बाद नियोजित विकास ने आधारभूत संरचना और सामाजिक न्याय को बल दिया। वैश्वीकरण ने विकास की गति तेज की, किंतु सामाजिक सुरक्षा और समावेशन की चुनौतियाँ भी बढ़ाईं। संतुलित और समावेशी विकास के लिए राज्य और बाजार के बीच संतुलन आवश्यक है।

## निष्कर्ष

औपनिवेशिक काल से वैश्वीकरण तक की सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन प्रक्रिया भारतीय समाज के इतिहास की एक दीर्घ, जटिल और बहुपरतीय यात्रा को दर्शाती है। इस पूरी प्रक्रिया में भारत ने पारंपरिक, आत्मनिर्भर ग्रामीण अर्थव्यवस्था से निकलकर औपनिवेशिक शोषण, योजनाबद्ध विकास और अंततः वैश्विक पूँजीवादी व्यवस्था से जुड़ने तक का मार्ग तय किया है। यह परिवर्तन केवल आर्थिक संरचना तक सीमित नहीं रहा, बल्कि सामाजिक संबंधों, वर्ग संरचना, जीवन–शैली, मूल्यों और सांस्कृतिक दृष्टिकोण को भी गहराई से प्रभावित करता रहा है। औपनिवेशिक काल में ब्रिटिश शासन ने भारत की अर्थव्यवस्था को अपने साम्राज्यवादी हितों के अनुरूप ढाल दिया। कृषि का व्यापारीकरण, भारी कर प्रणाली, पारंपरिक उद्योगों का पतन और आधुनिक उद्योगों का सीमित विकासकृ इन सभी ने भारतीय समाज में व्यापक गरीबी, बेरोजगारी और आर्थिक असमानता को जन्म दिया। सामाजिक स्तर पर जाति व्यवस्था की कठोरता, वर्ग विभाजन और क्षेत्रीय असंतुलन और अधिक गहरे हुए। हालांकि इसी दौर में आधुनिक शिक्षा, संचार, परिवहन और प्रशासनिक ढाँचे का विकास हुआ, जिसने आगे चलकर राष्ट्रीय चेतना और स्वतंत्रता आंदोलन को मजबूत आधार प्रदान किया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत ने औपनिवेशिक शोषण से उबरने और आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था के निर्माण के लिए योजनाबद्ध विकास का मार्ग अपनाया। पंचवर्षीय योजनाओं, सार्वजनिक क्षेत्र के विस्तार, औद्योगीकरण, भूमि सुधार

और हरित क्रांति के माध्यम से आर्थिक विकास को गति देने का प्रयास किया गया। शिक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक कल्याण कार्यक्रमों ने सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा दिया तथा दलितों, महिलाओं और वंचित वर्गों के सशक्तिकरण की दिशा में महत्त्वपूर्ण कदम उठाए गए। यद्यपि इस चरण में विकास की गति अपेक्षाकृत धीमी रही, फिर भी सामाजिक–आर्थिक संरचना में स्थिरता और आत्मविश्वास का निर्माण हुआ।

1990 के दशक के बाद वैश्वीकरण, उदारीकरण और निजीकरण की नीतियों ने भारतीय अर्थव्यवस्था को वैश्विक बाजार से जोड़ दिया। इससे औद्योगिक विकास, सेवा क्षेत्र का विस्तार, विदेशी निवेश, तकनीकी नवाचार और रोजगार के नए अवसर पैदा हुए। मध्यम वर्ग का विस्तार हुआ और उपभोक्तावादी संस्कृति को बढ़ावा मिला। साथ ही, सूचना प्रौद्योगिकी और संचार क्रांति ने सामाजिक जीवन को तेजी से बदल दिया। लेकिन इसके नकारात्मक पक्ष भी सामने आए आय और क्षेत्रीय असमानता में वृद्धि, असंगठित क्षेत्र में श्रम असुरक्षा, ग्रामीण–शहरी विभाजन और सामाजिक तनाव जैसी समस्याएँ और अधिक स्पष्ट हो गईं। समग्र रूप से देखा जाए तो औपनिवेशिक काल से वैश्वीकरण तक की सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन प्रक्रिया ने भारतीय समाज को परंपरा से आधुनिकता की ओर अग्रसर किया है, किंतु यह यात्रा विरोधाभासों से भरी रही है। विकास के साथ–साथ असमानता, अवसरों के असंतुलन और सामाजिक चुनौतियाँ भी बनी रही हैं। इसलिए भविष्य में भारत के लिए यह आवश्यक है कि वह वैश्वीकरण के लाभों को अपनाते हुए समावेशी, न्यायपूर्ण और सतत विकास की रणनीति पर बल दे, ताकि आर्थिक प्रगति के साथ–साथ सामाजिक समानता और मानवीय मूल्यों की भी रक्षा की जा सके।

## संदर्भ सूची


1. चंद्र, बिपिन आधुनिक भारत का इतिहास नई दिल्लीः ओरिएंट ब्लैकस्वान, 2018।
2. हबीब, इरफान औपनिवेशिक भारत की अर्थव्यवस्था नई दिल्लीः पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, 2014।
3. सेन, अमर्त्य Development as Freedom नई दिल्लीः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2000।
4- गुहा, रामचंद्र India After Gandhi% The History of the World^s Largest Democracy नई दिल्लीः हार्पर कॉलिन्स, 2017
5. श्रीनिवासन, टी. एन. Indian Economic Reforms% Background] nalysis and Prospects नई दिल्लीः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2003।
6. भारत सरकार आर्थिक सर्वेक्षण (Economic Survey of India)। नई दिल्लीः वित्त मंत्रालय, भारत सरकार
7. टी. एन. श्रीनिवासन, इंडियन इकोनॉमिक रिफॉर्म्स, नई दिल्लीः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2003, पृ. 55–102, 189–230।
8. भारत सरकार, आर्थिक सर्वेक्षण, नई दिल्लीः वित्त मंत्रालय, भारत सरकार, विभिन्न वर्ष, अध्याय 1–3।
9. विश्व बैंक, वर्ल्ड डेवलपमेंट रिपोर्ट्स, वाशिंगटन डी.सी., विभिन्न वर्ष, अध्याय 2 एवं 5।


 ISBN: 978-81-993143-8-2

१९

# मानवाधिकार और इसकी चुनौतियाँ

**डॉ. रसीला**
सहायक आचार्य, समाजशास्त्र विभाग
राजकीय कला महाविद्यालय, कोटा (राज.)

**सार** - मानवाधिकार समाज में जीवन यापन करने वाले प्रत्येक व्यक्ति के लिये हैं। मानवाधिकार ऐसे अधिकार है जो किसी व्यक्ति को मानव होने के कारण अनिवार्य रूप से मिलते हैं या मिलने चाहिये। इन मानवाधिकारों का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति को सम्मानपूर्वक गरिमामय मानवीय जीवन व्यतीत करने हेतु उपयुक्त परिस्थितियाँ प्रदान करना हैं। इसीलिये मानवाधिकार एक व्यक्ति के लिये सामान्य जीवन यापन करने के लिये एक अनिवार्य, सार्वभौमिक एवं व्यक्तित्व विकास के लिये आवश्यक शर्त है। वर्तमान परिदृश्य में मानवाधिकारों का हनन एवं उल्लंघन चरम पर है और इसी उद्देश्य से प्रस्तुत शोध पत्र में मानवाधिकार के समक्ष उत्पन्न विभिन्न चुनौतियों को दर्शाया गया है।

**संकेत शब्द** - मानवाधिकार, चुनौतियाँ, व्यक्तित्व विकास, समाज,

## प्रस्तावना

मानवाधिकार वे अधिकार हैं जो हमारे पास इसलिये हैं क्योंकि हम मनुष्य हैं। मानवाधिकार राष्ट्रीयता, लिंग, राष्ट्रीय या जातीय मूल, रंग, धर्म, भाषा या किसी अन्य स्थिति की परवाह किये बिना ये हम सभी के लिये सार्वभौमिक अधिकार हैं। मानवाधिकार में सबसे मौलिक जीवन के अधिकार से लेकर वे अधिकार शामिल हैं जो जीवन को जीने लायक बनाते हैं, जैसे कि भोजन, शिक्षा, काम, स्वास्थ्य और स्वतन्त्रता का अधिकार। प्रत्येक वर्ष अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर 10 दिसम्बर को विश्व मानवाधिकार दिवस मनाया जाता है। यह वर्ष 1948 के उस दिन के उपलक्ष्य में मनाया जाता है जब संयुक्त राष्ट्र (UD) महासभा ने मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा (UDHR) को अपनाया था। UDHR मानवा अधिकारों के अन्तर्राष्ट्रीय विधेयक का एक हिस्सा है। कई क्षेत्रीय कार्यालयों के साथ जिनेवा में इसका मुख्यालय है। भारत के राष्ट्रीय मानवाधिकार के अनुसार, संविधान द्वारा गारंटीकृत व्यक्ति के जीवन, स्वतन्त्रता, समानता और सम्मान से संबंधित अधिकारों के रूप में मानवाधिकार या अन्तर्राष्ट्रीय अनुबंधों में सन्निहित तथा भारत में अदालतों द्वारा लागू किये जाने योग्य है भारत में भी राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की स्थापना वर्ष 1993 में की गई थी। राज्य के द्वारा वर्तमान समय तक मानवाधिकार के संरक्षण एवं संवर्द्धन हेतु किये गये प्रयास मील का पत्थर साबित नहीं हुये हैं और मानवाधिकारों का हनन और उल्लंघन की घटनाओं में निरन्तर वृद्धि होती जा रही हैं। इतिहास में दर्ज मानवाधिकारों के सबसे गंभीर और प्रसिद्ध उल्लंघन में से एक हैं- यहूदियों, समलैंगिकों, कम्युनिस्टों, स्लावों तथा अन्य समूहों को एडॉल्फ हिटलर के 'दुनिया को साफ करने'' के एजेडें के रूप में मानवता से वंचित कर दिया गया था।

समाज के लगभग सभी वर्गों के मानवाधिकार का हनन हो रहा हैं। आदिवासियों के मानवाधिकार का हनन कर उन्हें जंगल, जमीन और पशुओं के संरक्षण हेतु संरक्षित क्षेत्र से विस्थापित किया जाता हैं। हाथ से मैला ढोना एक गंभीर चिन्ता का विषय है, यद्यपि भारत सरकार ने इसके समाधान के लिये नीतियाँ बनाई है, लेकिन अब तक कुछ क्षेत्रों में मैला ढोने के मामले देखे जा रहे हैं। स्वच्छ पर्यावरण का अधिकार भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत जीवन के अधिकार के तहत आता है। शहरीकरण और औद्योगीकरण की वजह से प्रदूषण में वृद्धि के कारण मानव अधिकारों का लगातार उल्लंघन हुआ है। हमारे समाज में महिलाओं को कमजोर माना जाता है और अक्सर उन्हें बुनियादी मानवाधिकारों से वंचित रखा जाता है उन्हें समाज में हिंसा का शिकार होना पड़ता है चाहे वह घर की चारदीवारी के भीतर हो या कार्यस्थल पर। भारत का सर्वोच्च न्यायालय कैदियों के मानवाधिकारों के अतिक्रमण के खिलाफ बहुत सतर्क रहा है। जबरन श्रम, शारीरिक शोषण/यातना, पुलिस द्वारा शक्ति का दुरूपयोग करना भी मानवाधिकार के हनन् और उल्लंघन में शामिल है।

विश्वभर में मानवाधिकारों के लिये हुये संघर्षों और उनमें मिली सफलताओं ने ही हमें बदलाव लाने में विश्वास रखने और उस दिशा में प्रयास करना सिखाया मानवाधिकार हमें प्रेरित करते हैं और प्रगति लाने का जरिया है। वर्तमान परिदृश्य में देखें तो नफरत भरे अमर्यादित भाषण, लोकतांत्रिक मूल्यों, सामाजिक स्थिरता और शांति के लिये खतरा है, सोशल मीडिया, इंटरनेट और षड्यन्त्र की कहानियों के जरिये ऐसी बातें जंगल में आग की तरह फैल जाती है। महिलाओं, अल्पसंख्यकों, प्रवासियों और शरणार्थियों को कलंकित करने वाली सार्वजनिक बहसों में इन्हें उकसावा मिलता है। यद्यपि लोकतन्त्र और अधिकारवादी दोनों ही तरह की व्यवस्थाओं में इससे निपटने के लिये एक नई रणनीति की घोषणा की है जो उनकी वैश्विक कार्ययोजना का एक भाग है।

संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार ने भी अपने संबोधन में जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न हुई चुनौतियों को नजर अंदाज करने के खतरों के प्रति आगाह किया किसी देश के हित ऐसी नीतियों से कैसे आगे बढ़ सकते हैं और विकास कर सकते हैं जिनसे सभी लोगों के कल्याण को हानि पहुँचती हो। स्पष्ट है कि पर्यावरण से अधिक महत्त्वपूर्ण आर्थिक हित नहीं हैं। मानवाधिकारों को सबसे अधिक चुनौती गरीबी से मिल रही है। विश्वभर में हर 8 में से 1 व्यक्ति भूख के साथ जीवन यापन कर रहा है। दुनियां में 24 हजार व्यक्ति रोजाना भुखमरी के शिकार होकर अकाल मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। मानवाधिकारों की बात करने वालों के लिये ये किसी महान चुनौती से कम नहीं है मानवाधिकार समाज के प्रत्येक प्राणी के लिये महत्वपूर्ण होता है, वह व्यक्ति चाहे अमीर हो या गरीब। दुनिया के प्रत्येक निर्धन व्यक्ति को सम्पन्न व्यक्ति और देश को भूख से पीड़ित लोगों को पेट भरकर भोजन करवाने की व्यवस्था करनी चाहिये और उनके मानवाधिकारों की रक्षा करनी चाहिये।

बालश्रम, महिलाओं का दैहिक शोषण, धार्मिक अल्पसंख्यकों का उत्पीड़न, जातिगत भेदभाव, आदिवासियों के अधिकारों का हनन, लूटपाट आदि सभी कृत्य मानव अधिकारों के खिलाफ जाती है। आज भी दुर्गम ग्रामीण क्षेत्रों में संतुलित आहार, स्वच्छ पेयजल, बिजली, शिक्षा आदि का अभाव है।

 ISBN: 978-81-993143-8-2

मानवाधिकार से संबंधित विभिन्न कानून एवं योजनायें होने के बावजूद भी बच्चों और महिलाओं पर अत्याचार, तस्करी, ऑनर किलिंग, अस्पृश्यता, गरीबी, महिलाओं के साथ घर या सार्वजनिक तौर पर होने वाली हिंसा आदेश के 7 दशक बीत जाने के बाद भी जारी है। इसीलिये हम सभी को अपने स्तर पर मानवाधिकार के मार्ग में आने वाली चुनौतियों को समाप्त करने के लिये मिलकर कदम उठाने चाहिये।

वर्तमान दौर में मानव-मानव के रूप में जीने के लिये संघर्षरत है। कहीं धनबल, बाहुबल, सामन्तवाद अथवा राजनीतिक सत्ता का मद उसे उसके अधिकारों से वंचित कर रहा है। तो कहीं सत्ता की अकर्मण्यता एवं अनिच्छा इसे इन अधिकारों से दूर रखे हुये हैं। महिलाओं के मानवाधिकारों का हनन घर की चार दीवारी से ही प्रारम्भ हुआ। घरेलू हिंसा के साथ-साथ मानसिक प्रताड़ना लगभग समाज के अधिकांश भाग में व्याप्त थी। भेदभाव और प्रताड़ना की घटनायें सम्मानजनक जीवन जीने के अधिकार को चुनौती दे रही है। यद्यपि चिकित्सा विज्ञान ने अनेक उपलब्धियाँ हासिल कर ली हैं किन्तु आज भी मलेरिया, डेंगु जैसी सामान्य बीमारियाँ लाखों लोगों की जान ले रही है। सबसे बड़ी विडम्बना यह है कि ईश्वर का रूप माना जाने वाला एक चिकित्सक मानव के विभिन्न अंगों की चोरी करके धन कमा रहा है। कन्याभ्रूण हत्याओं में निरन्तर वृद्धि होना भी मानवाधिकारों के हनन का एक ज्वलन्त प्रश्न है। दहेज जैसी सामाजिक बुराई के कारण महिलाओं को ही मानसिक-शारीरिक यंत्रणाओं के दौर से गुजरना पड़ता है।

मानवाधिकारों की चुनौतियों का समाधान करने के लिये लोगों को मानवाधिकारों के प्रति जागरूक करने के साथ इनसे जुड़ी समस्याओं को दूर करने के विभिन्न आयाम एवं सुझाव स्पष्ट करने होगे। यद्यपि सर्वज्ञात है कि मानवाधिकारों के हनन के सबसे ज्यादा मामले महिलाओं से जुड़े हैं इन सभी समस्याओं के समाधान के लिये कन्या भ्रूण हत्या, घरेलू हिसा, शारीरिक शोषण, उत्पीड़न, मानसिक प्रताड़ना, जैसी घटनाओं पर रोक लगाने के उपाय किये जाने चाहिये।

- मानव अधिकारों के संरक्षण के लिये राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का प्रमुख कार्य है लोगों विभिन्न नियमों, कानूनों एवं अधिनियमों की जानकारी देना।
- मानवाधिकारों की रक्षा के लिये वैधानिक मानवाधिकार एजेंसियों की स्थापना की जानी चाहिये।
- मानवाधिकार को विद्यालय एवं महाविद्यालय स्तर के पाठ्यक्रमों में सम्मिलित किया जाना चाहिये।
- मानवाधिकारों के प्रति जागरुकता के लिए संचार माध्यमों जैसे प्रिन्ट मीडिया और सोशल नेटवर्किंग साइट्स का उपयोग किया जाना चाहिये।
- स्वैच्छिक संगठनों को मानवाधिकार के प्रति जागरुक किया जाए।
- सरकारी संस्थानों, कार्यालयों को मानवाधिकारों के प्रति समय-समय पर सतर्क करने हेतु परिपत्र जारी किए जाए।
- मानवाधिकारों की दिशा में कार्यरत संस्थानों, स्वैच्छिक संगठनों का चिन्हीकरण किया जाए तथा उन्हें विशेष प्रोत्साहन दिया जाए।
- मानवाधिकारों को समाज में जन-आन्दोलन के रूप में प्रचारित एवं प्रसारित किया जाए।

- यदि कोई समाज कानून के शासन के तहत लोकतांत्रिक शासन का अनुसरण करता है और यदि समाज सार्वभौमिक घोषणा के सिद्धान्तों के अनुसार जीवनयापन का प्रयास करता है तो लोगों के पास बेहतर जीवन अवसर होंगे और वे गरीबी के चक्र से भी बाहर आ सकते हैं। गरीबी से बाहर निकलने का मुख्य मार्ग शिक्षा है। देश के युवाओं को रोजगार प्रदान करने के लिये नये-नये आयाम खोजने चाहिये। दुनिया के कई हिस्सों में महिलाओं के खिलाफ किए जाने वाले अन्याय मानवीय विवेक को झकझोर देने वाले है। यदि भविष्य में भी हम महिलाओं को सशक्त नहीं बनाते हैं और उन्हें न्याय नहीं देते हैं, तब तक संघर्ष, पिछड़ापन और अन्याय की समस्याओं पर नियंत्रण करने की संभावना बहुत कम है।

**निष्कर्षतः** वर्तमान में मानवाधिकार की अवधारणा महत्त्वपूर्ण होती जा रही है। मानवाधिकार के समर्थन में व्याप्त इस आन्दोलन की उपादेयता तभी है जब समाज से सभी प्रकार के भेदभावों, अत्याचारों और शोषण का अन्त किया जायेगा, किन्तु वर्तमान का तंत्र इस राष्ट्रीय लक्ष्य को प्राप्त करने में सक्षम नहीं हो पा रहा है। आज भी भारतीय एवं वैश्विक परिप्रेक्ष्य में देखने पर मानवाधिकार की विभिन्न समस्याएँ दृष्टिगोचर होती हैं जो मौलिक अधिकारों के उल्लंघन के कारण उत्पन्न हुई है। मानवाधिकार रणनीति नहीं, व्यवस्था का विषय है। यह मानवतावाद की सर्वोत्तम अभिव्यक्तित्व एवं उत्कृष्ट व्यावहारिकता इसलिये मानवाधिकार के समक्ष जो भी समस्याएँ उपस्थित हैं उन सभी का समाधान करना ही इस संकल्पना का लक्ष्य है। मानवाधिकारों की रक्षा के लिये प्रत्येक राष्ट्र और राज्य को निरन्तर प्रयास करने चाहिये अन्यथा समाज की आगामी स्थिति भयावह हो सकती हैं।

♦♦♦♦

## संदर्भ सूची


- महाश्वेता, शर्मा, ए., शुक्ल, एस. एवं सिन्हा, बी., 2005, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, नई दिल्ली।
- अग्रवाल, एच. ओ., 2014, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद।
- बाबेल, बी.एल., 2024, मानवाधिकार, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन्स।
- सिंह, डी., 2012, भारत में मानव अधिकार, रावत पब्लिकेशन, जयपुर।
- चौधरी, एम. एवं परिहार, एच. 2017, मानवाधिकार और सामाजिक न्याय, राजस्थानी ग्रन्थागर।
- तारकुंड, वी.एम., 1995, मानवाधिकारों का दर्शन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
- अंसारी, एम.ए., 2003, महिला एवं मानवाधिकार, ज्योति प्रकाशन, जयपुर।
- सिंह, आर., 2006, मानवाधिकार एवं महिलाएँ, अविष्कार प्रकाशन, जयपुर।
- त्रिपाठी डी.पी., मानवाधिकार, इलाहाबाद लॉ एजेन्सी प्रकाशन।


 **ISBN: 978-81-993143-8-2**

२०

# भारत के सामाजिक-आर्थिक विकास में कौशल विकास की भूमिका: राजस्थान के विशेष संदर्भ में

**डॉ. मुकेश कुमार पंवार**
**सहायक आचार्य, व्यावसायिक प्रशासन**
**डॉ. भीमराव अंबेडकर राजकीय महाविद्यालय, श्रीगंगानगर**

## सार

भारत में सामाजिक-आर्थिक विकास में कौशल विकास का महत्व अत्यंत महत्वपूर्ण है। राजस्थान में बेरोजगारी, महिला रोजगार की कमी और ग्रामीण-शहरी असमानता जैसी चुनौतियाँ मौजूद हैं। राज्य में लागू किए गए कौशल विकास कार्यक्रम जैसे राजस्थान कौशल विकास मिशन और प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना (PMKVY) युवाओं को रोजगार-उन्मुख प्रशिक्षण प्रदान करते हैं और सामाजिक समावेश को बढ़ावा देते हैं। यह अध्ययन राज्य में कौशल विकास की भूमिका, इसके सामाजिक-आर्थिक प्रभाव और नीति पहलुओं का विश्लेषण करता है। निष्कर्ष बताते हैं कि प्रशिक्षण कार्यक्रम युवाओं को रोजगार योग्य बनाने और सामाजिक समावेश को सुदृढ़ करने में सहायक हैं।

**मुख्य शब्द:** कौशल विकास, सामाजिक-आर्थिक विकास, रोजगार, राजस्थान, महिला सशक्तिकरण, युवा शक्ति

## परिचय

राजस्थान भारत का सबसे बड़ा राज्य है और इसकी भौगोलिक और सामाजिक विविधता इसे अन्य राज्यों से अलग बनाती है। राज्य की अधिकांश आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है, जो कृषि, पशुपालन, हस्तशिल्प और पर्यटन पर निर्भर है। इसके बावजूद, बेरोजगारी, सीमित कौशल, ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बीच असमानता और महिला रोजगार की कमी राज्य की सामाजिक-आर्थिक प्रगति के लिए बड़ी चुनौतियाँ हैं।

कौशल विकास न केवल रोजगार सृजन का साधन है बल्कि यह आर्थिक वृद्धि, सामाजिक समावेश, महिलाओं और पिछड़े वर्गों के सशक्तिकरण का भी मुख्य उपकरण है। राजस्थान सरकार ने इस दिशा में कई पहलें शुरू की हैं, जैसे राजस्थान कौशल विकास मिशन (RSDM) और प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना (PMKVY), जिनका उद्देश्य युवाओं को स्थानीय और राष्ट्रीय उद्योगों की मांग के अनुरूप प्रशिक्षण प्रदान करना है।

कौशल विकास के माध्यम से युवा न केवल रोजगार योग्य बनते हैं, बल्कि वे आत्मनिर्भर और समाज में सक्रिय भागीदार बनते हैं। विशेषकर राजस्थान जैसे बड़े और विविध राज्य में, जहां आर्थिक अवसरों और संसाधनों में असमानता है, कौशल प्रशिक्षण राज्य की आर्थिक और सामाजिक संरचना में सकारात्मक बदलाव ला सकता है। यह अध्ययन राजस्थान में कौशल विकास की भूमिका, उसके सामाजिक-आर्थिक प्रभाव और नीति संबंधी पहलुओं का विश्लेषण करता है।

## राजस्थान की सामाजिक-आर्थिक चुनौतियाँ

- बेरोजगारी और रोजगार की कमी – विशेषकर ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों में।
- महिला सशक्तिकरण की कमी – महिलाओं की रोजगार और प्रशिक्षण में भागीदारी कम।
- क्षेत्रीय असमानता – शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों के बीच अवसरों में अंतर।
- उद्योग-कौशल अंतर – स्थानीय उद्योगों की मांग और युवाओं के कौशल में अंतर।
- तकनीकी और डिजिटल कौशल की कमी – युवाओं में आवश्यक तकनीकी प्रशिक्षण का अभाव।

## साहित्य समीक्षा

कौशल विकास और सामाजिक-आर्थिक प्रगति पर कई अध्ययन किए गए हैं, जिनसे यह स्पष्ट होता है कि प्रशिक्षण और रोजगार के बीच मजबूत संबंध है।

- **Sharma & Gupta (2021)** के अनुसार, प्रशिक्षण कार्यक्रम युवाओं की रोजगार क्षमता और आय में महत्वपूर्ण सुधार करते हैं। अध्ययन में यह भी पाया गया कि प्रशिक्षित युवाओं की आत्म-निर्भरता और सामाजिक भागीदारी में वृद्धि होती है।
- **Singh(2020)** ने राजस्थान के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रशिक्षण के प्रभाव का विश्लेषण किया। उनके अध्ययन से पता चला कि कौशल प्रशिक्षण से न केवल रोजगार में वृद्धि होती है, बल्कि ग्रामीण युवाओं की सामाजिक स्थिति, आत्म-सम्मान और सामुदायिक योगदान में भी सुधार आता है।
- **नीति आयोग (2023)** की रिपोर्ट में राज्य स्तरीय कौशल विकास की प्रभावशीलता का विश्लेषण किया गया। रिपोर्ट के अनुसार, प्रशिक्षण की गुणवत्ता, स्थानीय उद्योग की मांग और प्रशिक्षण प्राप्त युवाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति एक दूसरे से सीधे जुड़े हैं।

 ISBN: 978-81-993143-8-2

- **विश्व बैंक (2022)** के अध्ययन में यह पाया गया कि कौशल विकास से राज्य की आर्थिक वृद्धि और वैश्विक प्रतिस्पर्धात्मकता में सुधार होता है। विशेषकर राजस्थान जैसे विविध राज्यों में, जहां आर्थिक अवसर सीमित हैं, कौशल प्रशिक्षण युवाओं को रोजगार योग्य बनाने का सबसे प्रभावी तरीका माना गया है।
- राष्ट्रीय कौशल विकास निगम (NSDC) और विभिन्न राज्य रिपोर्ट्स में भी यह पुष्टि की गई है कि प्रशिक्षण कार्यक्रम युवाओं को स्थानीय उद्योगों और सेवा क्षेत्रों में रोजगार के लिए तैयार करते हैं।

साहित्य समीक्षा से यह निष्कर्ष निकलता है कि कौशल विकास न केवल आर्थिक वृद्धि में योगदान देता है, बल्कि सामाजिक समावेश, महिला सशक्तिकरण और ग्रामीण विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

## अनुसंधान उद्देश्य और हाइपोथेसिस

### उद्देश्य

- राजस्थान में कौशल विकास की भूमिका और महत्व का अध्ययन।
- राज्य में सामाजिक और आर्थिक संकेतकों पर कौशल विकास के प्रभाव का विश्लेषण।
- प्रशिक्षण और रोजगार सृजन के बीच संबंध का मूल्यांकन।
- राज्य नीति और प्रशिक्षण संस्थानों के लिए सुधारात्मक सुझाव प्रस्तुत करना।

### हाइपोथेसिस

**मुख्य हाइपोथेसिस**: राजस्थान में कौशल विकास सामाजिक-आर्थिक संकेतकों पर सकारात्मक प्रभाव डालता है।

**उप-हाइपोथेसिस:**

**H1**: कौशल प्रशिक्षण युवाओं को रोजगार योग्य बनाता है।

**H2**: कौशल विकास कार्यक्रम ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में अलग-अलग प्रभाव डालते हैं।
**H3**: महिलाओं के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम सामाजिक समावेश और रोजगार में वृद्ध करते हैं।

### अनुसंधान पद्धति

यह अध्ययन **सैद्धांतिक और विश्लेषणात्मक पद्धति** पर आधारित है।

**स्रोत**

सरकारी नीतियाँ और रिपोर्ट: राजस्थान कौशल विकास मिशन (RSDM), प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना (PMKVY), नीति आयोग अकादमिक जर्नल और अध्ययन साहित्य समीक्षा और केस स्टडी

## विधि

गुणात्मक विश्लेषण (Qualitative Analysis): प्रशिक्षण कार्यक्रमों की प्रभावशीलता और राज्य नीति का अध्ययन।

सैद्धांतिक मूल्यांकन: सामाजिक-आर्थिक संकेतकों पर प्रशिक्षण के संभावित प्रभाव।

## कौशल विकास के प्रभाव

### रोजगार पर प्रभाव

राजस्थान में कौशल विकास कार्यक्रम युवाओं को रोजगार योग्य बनाते हैं। प्रशिक्षण से रोजगार की संभावना बढ़ती है और युवाओं में आत्म-निर्भरता आती है।

### सामाजिक समावेश

महिला प्रशिक्षण और पिछड़े वर्गों के लिए कौशल विकास सामाजिक समावेश को बढ़ावा देता है। इससे महिलाओं की रोजगार भागीदारी और सामाजिक सशक्तिकरण बढ़ता है।

### क्षेत्रीय प्रभाव

शहरी क्षेत्रों में प्रशिक्षण और रोजगार अवसर अधिक हैं, लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में कौशल विकास से स्थानीय रोजगार अवसर बढ़ सकते हैं।

### आर्थिक और सामाजिक लाभ

कौशल विकास से युवा अधिक उत्पादक बनते हैं, जिससे राज्य की आर्थिक स्थिति मजबूत होती है। सामाजिक दृष्टि से यह शिक्षा, आत्म-निर्भरता और समावेश को प्रोत्साहित करता है।

**चर्चा** राजस्थान में कौशल विकास केवल रोजगार सृजन तक सीमित नहीं है। यह सामाजिक समावेश, महिला सशक्तिकरण और स्थानीय उद्योगों के विकास में भी योगदान करता है। राज्य में तकनीकी, डिजिटल, हस्तशिल्प और पर्यटन आधारित प्रशिक्षण अधिक प्रभावी हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में मोबाइल प्रशिक्षण केंद्र और महिलाओं के लिए ऑनलाइन लचीले प्रशिक्षण कार्यक्रम अत्यंत उपयोगी हो सकते हैं।

## निष्कर्ष

राजस्थान में कौशल विकास राज्य के सामाजिक-आर्थिक विकास का एक आवश्यक उपकरण है। प्रशिक्षण कार्यक्रम युवाओं को रोजगार योग्य बनाते हैं और सामाजिक

 ISBN: 978-81-993143-8-2

समावेश में सुधार करते हैं। महिलाओं और पिछड़े वर्गों के लिए कौशल प्रशिक्षण सामाजिक सशक्तिकरण बढ़ाता है। नीति निर्माताओं को ग्रामीण क्षेत्रों, महिला प्रशिक्षण और स्थानीय उद्योगों की मांग पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

## सुझाव

- ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों में विशेष प्रशिक्षण केंद्र स्थापित करना।
- स्थानीय उद्योगों और प्रशिक्षण संस्थानों के बीच साझेदारी बढ़ाना।
- महिलाओं के लिए ऑनलाइन और लचीले प्रशिक्षण कार्यक्रम।
- कौशल विकास कार्यक्रमों का नियमित मूल्यांकन और अद्यतन।
- प्रशिक्षण को स्थानीय उद्योगों और रोजगार अवसरों के अनुरूप अनुकूल बनाना।

## संदर्भ


- Rajasthan Skill Development Mission (RSDM). (2023-24). Annual Report. Jaipur: Government of Rajasthan.
- National Skill Development Corporation (NSDC). (2023-24). Annual Report. New Delhi: NSDC.
- NITI Aayog. (2023). Human Development Report. New Delhi: Government of India.
- Sharma, R., & Gupta, P. (2021). Skill Development and Economic Growth in India. Journal of Development Studies, 58(4), 450–468.
- Singh, A. (2020). Impact of Skill Training on Rural Employment in Rajasthan. Indian Journal of Economics and Development, 16(2), 112–125.
- Adhyayanand, V. (2019). Skill Development and Social Inclusion: India's Experience. Indian Journal of Social Development, 10(3), 85–101.
- Ministry of Labour & Employment, Government of India. (2022). Pradhan Mantri Kaushal Vikas Yojana (PMKVY) Annual Report. New Delhi.
- Planning Commission of India. (2019). Skill Development and Employment Generation Policy. New Delhi: Government of Indi

२१

# हरित प्रौद्योगिकी से सुनिश्चित है - अनुकूल पर्यावरणीय का विकास

**डॉ. राजेन्द्र कुमार सहायक**
**आचार्य (भूगोल)**
**राजकीय महाविद्यालय घड़साना श्री गंगानगर**

**प्रस्तावना-**

भारत पर्यावरणीय चुनोतियों से निपटने और अपनी उर्जा जरूरतों को स्थायी रूप से पूरा करने के लिए हरित प्रौद्योगिकी के विकास के क्षेत्र में प्रगति कर रहा है। सौर, पवन और जलविद्युत ऊर्जा जैसे परमाणु ऊर्जा जैसे नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों को बढ़ावा देने के साथ-साथ भारत कार्बन उत्सर्जन को कम करने के लिए इलेक्ट्रिक वाहनों और जैव ईंधन जैसे स्वच्छ परिवहन संसाधनों में निवेश कर रहा है। कुल मिलाकर, भारत एक हरित भविष्य की ओर बढ़ रहा है । इन सकारात्मक परिवर्तनों में तेजी लाने पर्यावरणीय सरोकारों को व्यापक रूप ले संसोधित करने के लिए ठोस प्रयासों सहित जनभागीदारी की निरंतर आवश्यकता है।

**उद्देश्य-**

- प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण और सतत उपयोग
- प्रदूषण में कमी करना (वायु, जल, मृदा)
- नवीकरणीय ऊर्जा (सौर, पवन, बायो-ऊर्जा) के उपयोग को बढ़ावा देना
- कार्बन उत्सर्जन में कमी करना और जलवायु परिवर्तन से निपटना
- ऊर्जा दक्षता और अपशिष्ट प्रबंधन (रीसाइक्लिंग)
- स्वच्छ तकनीकों से मानव स्वास्थ्य और जैव विविधता की रक्षा

वह प्रौद्योगिकी जो जीवाश्म ईंधन को हतोत्साहित और नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का समर्थन करती है, **हरित प्रौद्योगिकी** कहलाती है। वर्ष 2023 तक, भारत पर्यावरणीय चुनोतियों से निपटने और अपनी ऊर्जा को निरंतर रूप से पूरा करने के लिए हरित प्रौद्योगिकी के विकास के क्षेत्र में प्रगति है। भारत सरकार सौर, पवन और जलविद्युत ऊर्जा जैसे नवीकरणीय ऊर्जा संसाधनों को बढ़ावा देने के लिए कई कार्यक्रम और नीतियाँ चला रही है। क्षमता के विस्तार के लिए निर्धारित महत्वपूर्ण लक्ष्यों के साथ, विशेष रूप से सौर ऊर्जा में महत्वपूर्ण वृद्धि का आंकलन किया गया है। देश भर में पवन ऊर्जा परियोजना भी लागू किये गई हैं। इसके अतिरिक्त, भारत कार्बन डाइऑक्साइड को कम करने के लिए इलेक्ट्रिक वाहनों और जैव ईंधन जैसे डीजल ट्रांसपोर्ट समाधानों में निवेश किया जा रहा है। विभिन्न पहलों के माध्यम से उधोगों और घरों में ऊर्जा दक्षता को बढ़ावा देने का प्रयास किए गए है, हालांकि चुनोतियाँ बनी हुई हैं, जिसमें बुनियादी ढांचे, प्रौद्योगिकी विकास और नीति कार्यान्वयन में अधिक निवेश की आवश्यकताएं शामिल हैं। प्रगति के बावजूद, भारत को वायु प्रदूषण, वनों की कटाई और अपर्याप्त अपशिस्ट प्रबंधन जैसी समस्यायों का सामना

 ISBN: 978-81-993143-8-2

करना पड़ रहा है, जिसके लिए हरित प्रौद्योगिकी अपनाने और संधारणीय पहलों पर और जोर देने की आवश्यकता है।

**भारत में ग्रामीण विकास के लिए हरित प्रौद्योगिकी का उपयोग-**

हरित प्रौद्योगिकी भारत में ग्रामीण विकास के लिए अपार संभावनाए रखती है,जो इन क्षेत्रों में प्रचलित विभिन्न सामाजिक आर्थिक और पर्यावरणीय चुनोतियों का समाधान करती है।

**जिसमें प्रमुख उपयोग निम्न प्रकार से है-**

**नवीकरणीय ऊर्जा प्रणालियाँ-**

सौर माइक्रोग्रिड और बायोगैस संयंत्र जैसे विकेन्द्रीकृत नवीकरणीय ऊर्जा प्रणालियों को लागु करने से ग्रामीण समुदायों को विश्वनीय बिजली मिलती है। यह घरों और स्वास्थ्य देखभाल केन्द्रों के लिए ऊर्जा पहुंच तक को बढ़ावा देता है, समग्र जीवन-स्तर में सुधार करता है और आर्थिक गतिविधियों को सक्षम बनाती है।

**स्वच्छ खाना पकाने के समाधान-**

बेहतर कुकस्टोव और बायोगैस डाइजेस्टर जैसे स्वच्छ खाना पकाने की तकनीक को पेश करने से घर के अंदर वायु प्रदूषण में कमी आती है, जिससे ग्रामीण लोगों विशेषकर महिलाओं और बच्चों के स्वास्थ्य को लाभ होता है। यह पारंपरिक बायोमॉस इंधन पर निर्भरता को कम करता है, वनों की कटाई और पर्यावरणीय गिरावट पर भी काम करता है।

**जल प्रबंधन प्रौद्योगिकियां-**

जल प्रबंधन के लिए हरित प्रौद्योगिकियां, जैसे वर्षा जल संचयन प्रणाली और टपक प्रणाली कृषि में जल संसाधनों के कुशल उपयोग और संरक्षण में मदद करती हैं। इससे कृषि उत्पादकता बढ़ती है एवं आजीविका कायम रहती है और सूखे और बाढ़ जैसे जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के प्रति लचीलेपन को बढ़ावा मिलता है।

**अपशिष्ट प्रबंधन नवाचार**

जैविक कचरे के लिए बायोगैस संयंत्र और ठोस कचरे के लिए खाद जैसे विकेन्द्रीकृत अपशिष्ट प्रबंधन समाधानों को लागु करने से प्रदूषण कम होता है और स्वच्छता में सुधार होता है एवं कृषि उपयोग के लिए बायोगैस या खाद का निर्माण होता है। यह पहल पर्यावरणीय स्थिरता में योगदान देती है और अपशिष्ट पुनर्चक्रण के माध्यम से आय के अवसर के अवसरों को बढ़ावा देती है।

**हरित अवसंरचना विकास-**

हरित भवन, पर्यावरण-अनुकूल सड़के और टिकाऊ आवास जैसे पर्यावरण विकास को बढ़ावा दिया जा सकता है, पर्यावरण संरक्षण किया जा सकता है और ग्रामीण समुदायों के लिए जीवन की गुणवता में सुधार किया जा सकता है।

**भारत में हरित प्रौद्योगिकी के माध्यम से जल एवं अपशिष्ट प्रबंधन-**

जल प्रबंधन और अपशिष्ट प्रबंधन भारत में महत्वपूर्ण चुनौतियाँ है और हरित प्रौद्योगिकी उन्हें स्थाई रूप से संबोधित करने के लिए नवीन समाधान प्रदान किया जाता है।

**वर्षा जल संरक्षण-**

हरित प्रौद्योगिकी सिंचाई भूजल पुनर्भरण और घरेलू उदेश्यों जैसे विभिन्न उपयोगों के लिए वर्षा जल को एक साथ लाने और संग्रहित करने के लिए वर्षा जल संरक्षण संरचनाओं की स्थापना को बढ़ावा दिया जाता है। इससे भूजल पर निर्भरता कम हो जाती है और पानी की कमी दूर हो जाती है।

**टपक सिंचाई -**

टपक सिंचाई प्रणाली जैसे कुशल सिंचाई तकनीक सीधे पौधों की जड़ों तक पानी पहुंचाती है, जिससे पानी की बर्बादी कम होती है और फ़सल की पैदावार में सुधार होता है। हरित तकनीक पानी के उपयोग को अनुकूलित करने है और जल संसाधनों के संरक्षण में टपक सिंचाई प्रणाली बहुउपयोगी है।

**जल पुनर्चक्रण और पुनःउपयोग-**

हरित प्रौद्योगिकी सिंचाई, औद्योगिक प्रक्रियाओं और भूजल पुनर्भरण जैसे गैर-पीने योग्य संयंत्रों में पुनः उपयोग के लिए घरेलू और औद्योगिक अपशिष्ट जल उपचार संयंत्रों के कार्यान्वयन की सुविधा प्रदान करती है। इससे मीठा पानी की मांग कम हो जाती है और जल निकायों का प्रदूषण कम हो जाता है।

**अलवणीकरण-**

सौर और पवन ऊर्जा जैसे नवीकरणीय उर्जा स्रोतों द्वारा संचालित नवीन अलवणीकरण प्रौद्योगिकीयों को समुद्री जल या खारे पानी को पीने योग्य पानी में बदलने के लिए विकसित किया जा रहा है, विशेष रूप से मीठे पानी की कमी का सामना करने वाले तटीय क्षेत्र।

**अपशिष्ट प्रबंधन-**

**बायोगैस संयंत्र-**

हरित प्रौद्योगिकी जैविक कचरे के उपचार और खाना पकाने, प्रकाश व्यवस्था और ईंधन उत्पादन के लिए बायोगैस का उत्पादन करने के लिए बायोगैस का उत्पादन करने के लिए बायोगैस संयंत्रों की स्थापना को बढ़ावा देती है। बायोगैस तकनीक कचरा भराव क्षेत्र से मीथेन का उत्सर्जन को कम करते हुए जैविक अपशिष्ट को मूल्यवान उर्जा संसाधन में परिवर्तित करके प्रबन्धन में मदद करते है।

**खाद बनाना-** एरोबिक कंपोस्टिंग तकनीकी का उपयोग करके जैविक कंपोस्टिंग लैंडफिल से अपशिष्ट डायवर्जन सुनिश्चित किया जाता है। इस प्रक्रिया में ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कमी लाकर कृषि तथा भूनिर्माण में मिट्टी संवर्धन के लिए पोषक तत्वों से भरपूर खाद का उत्पादन किया जाता है।

**पुनर्चक्रण और संसाधन पुनप्राप्ति-**

 ISBN: 978-81-993143-8-2

हरित प्रौद्योगिकी प्लास्टिक, कागज, कांच और धातुओं जैसे विभिन्न प्रकार के अपशिष्ट पदार्थों को अलग करने, उनको संसाधित और पुनर्चक्रण करने के लिए पुनर्चक्रण सुविधाओं और संसाधन पुनप्राप्ति केन्द्रों के कार्यान्वन को प्रोत्साहित करती है। पुनर्चक्रण प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करता है, कचरा भराव क्षेत्र को कम करता है और चक्रीय अर्थव्यवस्था सिद्धांतों को बढ़ावा देता है।

**स्मार्ट अपशिष्ट प्रबंधन प्रणाली-**

अपशिष्ट प्रबंधन प्रणालीयों में इंटरनेट ऑफ़ थिंक और सेंसर-आधारित प्रौद्योगिकीयों का समावेशन अपशिष्ट संग्रह की वास्तविक समय की निगरानी, अपशिष्ट संग्रह मार्गों के अनुकूलन और कचरा भराव क्षेत्र साइटों के कुशल प्रबन्धन को सक्षम बनाता है, जिससे परिचालन दक्षता में सुधार होता है और पर्यावरणीय स्थिरता सुनिश्चिता होती है।

जल और अपशिष्ट प्रबन्धन के लिए हरित प्रौद्योगिकी समाधानों का लाभ उठाकर, भारत संधारणीय विकास लक्ष्यों को प्राप्त कर सकता है। इसके अलावा पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा दे सकता है और पानी की कमी को दूर करते हुए अपशिष्ट प्रदूषण चुनौतीयों के प्रति लचीलेपन को बढ़ा सकता है।

**स्वच्छ भारत हरित प्रौद्योगिकी-**

स्वच्छता एवं स्वच्छ भारत हेतु हरित समावेशन प्रौद्योगिकी समाधानों की दीर्घकालिक प्रणालियों और पर्यावरणीय प्रबन्धन को बढ़ावा दिया जा सकता है। इस दिशा में हरित प्रौद्योगिकी कैसे योगदान दे सकती है।

**विकेन्द्रीकृत अपशिष्ट उपचार प्रणालियाँ-**

ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में जैव शौचालय और पर्यावरण स्वच्छता प्रणालियों जैसी विकेन्द्रीकृत अपशिष्ट उपचार प्रणालियों को लागू करने से मानव अपशिष्ट के सुरक्षित और पर्यावरण के अनुकूल निस्तारण प्रक्रियाओ में मदद मिलती है। जैव शौचालय कचरे को बायोगैस और पोषक तत्वों से भरपूर घोल में परिवर्तित करने के लिए अवायवीय प्रक्रिया का उपयोग किया जाता है, जिसका उपयोग उर्वरक के रूप में किया जा सकता है। इससे चक्रीय अर्थव्यवस्था को बढ़ावा मिलता है और जल निकायों के प्रदूषण को कम किया जाता है।

**बायोडिग्रेडेबल सैनेटरी उत्पाद-**

कम्पोस्टेबल मासिक धर्म पैड और बायोप्लास्टिक्स जैसे बायोडिग्रेडेबल जैव अपघटनशील सेनेट्री उत्पादों के उपयोग को बढ़ावा देने से सेनेट्री कचरे का पर्यावरणीय प्रभाव कम हो जाता है। बायोडिग्रेडेबल विकल्प प्राकृतिक रूप से विखंडित हो जाते है, जिससे कचरा भराव क्षेत्र का भार कम हो जाता है और इससे जलमार्गों में प्लास्टिक प्रदूषण को नियंत्रित किया जा सकता है।

**भारत को खुले में शौच से मुक्त देश बनाने में हरित प्रौद्योगिकी की भूमिका-**

हरित प्रौद्योगिकी टिकाऊ और पर्यावरण के अनुकूल स्वच्छता समाधान प्रदान करके भारत को खुले में शौच से मुक्त देश बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

निम्नलिखित प्रक्रियाओं के अनुपालन से हरित प्रौद्योगिकी के द्वारा इस लक्ष्य को प्राप्त किया जाना संभव है-

**विकेंद्रीकृत स्वच्छता प्रणाली**

ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में पर्यावरण के अनुकूल शौचालय, जैव शौचालय और कंपोस्टिंग शौचालय जैसे विकेंद्रीकृत स्वच्छता प्रणाली को लागू करने से सुरक्षित और स्वच्छता प्रदान करने में मदद मिलती है। इन प्रणालियों में मानव अपशिष्ट को साइट पर ही उपचारित करने, पर्यावरण प्रदूषण को कम करने और सुरक्षित निपटान प्रथाओं को बढ़ावा देने के लिए अवायवीय प्रक्रिया की हरित प्रौद्योगिकी का उपयोग किया जाता है।

**सामुदायिक बायोगैस संयंत्र –**

सामुदायिक बायोगैस संयंत्र स्थापित करना जो बायोगैस उत्पादन के लिए मानव अपशिष्ट को फीडस्टोक के रूप में उपयोग करता है न केवल अपशिष्ट प्रबन्धन में मदद करता है बल्कि खाना पकाने और प्रकाश व्यवस्था के लिए एक नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत भी प्रदान करता है, बायोगैस संयंत्र अवायविय पाचन के माध्यम से जैविक कचरे को बायोगैस में परिवर्तन करते है, जिससे स्वच्छ ऊर्जा के उपयोग और पर्यावरणीय स्थिरता को बढ़ावा देते हुए खुले में शौच की आवश्यकता कम हो जाती है।

**सौर ऊर्जा संचालित स्वच्छता समाधान-**

दूरदराज और ऑफ-ग्रिड क्षेत्रों में सौर ऊर्जा संचालित शौचालयों और स्वच्छता अवसंरचना के निर्माण से बिजली की सीमित पहुँच वाले क्षेत्रों में भी स्वच्छता सुविधाओं तक पहुँच सुनिश्चित होती है। सौर ऊर्जा शौचालयों में प्रकाश व्यवस्था, वेंटिलेशन और पानी पंपिग सिस्टम में विद्युत आपूर्ति उपलब्ध करायी जा सकती है। इस प्रकार की हरित प्रौद्योगिकी के सहयोग से ये शौचालय क्रियाशील हो जाते हैं, खासकर रात के समय उपयोग के दौरान।

**मोबाइल स्वच्छता इकाइयां-**

हरित प्रौद्योगिकी पर्यावरण-अनुकूल शौचालयों और अपशिष्ट उपचार सुविधाओं से सुसज्जित मोबाइल स्वच्छता इकाइयों के विकास को सक्षम कर सकती है। इन इकाइयों को अस्थायी बस्तियों, निर्माण स्थलों और आपदा प्रभावित क्षेत्रों में स्वच्छता सुविधाओं तक पहुँच प्रदान करने के लिए विकसित किया जा सकता है।

**जल रहित स्वच्छता प्रौद्योगिकियां-**

 ISBN: 978-81-993143-8-2

शुष्क शौचालयों और यूरिनल इकाइयों में जलरहित स्वच्छता प्रौद्योगिकियों को बढ़ावा देने से स्वच्छता सुविधाओं में पानी के व्यर्थ होने को कम किया जाता है। इस तकनीक से पानी के प्रयोग वाली सीवेज प्रणालियों की आवश्यकता कम हो जाती है। ये प्रौद्योगिकियां मूत्र और मल को अलग करती है, जिससे गंध और संदूषण के जोखिम को कम करते हुए सुरक्षित उपचार और उर्वरक के रूप में पुनः उपयोग किया जा सकता है।

**व्यवहार परिवर्तन संचार-**

डिजिटल प्लेटफॉर्म, मोबाइल एप्लिकेशन और इंटरेक्टिव मीडिया टूल के माध्यम से व्यवहार परिवर्तन संचार अभियानों के लिए हरित प्रौद्योगिकी का लाभ उठाने से स्वच्छता और स्वच्छता अभ्यासों के महत्व के बारे में जागरूकता बढ़ाने में मदद मिलती है। शैक्षिक पहल हरित स्वच्छता प्रौद्योगिकियों को अपनाने को बढ़ावा दे सकती है और समुदायों को स्थायी विकल्पों के पक्ष में खुले में शौच की आदत छोड़ने के लिए प्रोत्साहित कर सकती है। हरित प्रौद्योगिकी की क्षमता का उपयोग करके, भारत स्वच्छता तक व्यापक पहुँच का लक्ष्य हासिल करने और खुले में शौच को खत्म करने की दिशा में अपने प्रयासों को तेज कर सकता है। परिणामस्वरूप सार्वजनिक स्वास्थ्य में सुधार और पर्यावरण रक्षा सहित देश भर में सतत विकास को बढ़ावा मिलेगा।

**ग्राम ऊर्जा स्वराज अभियान में हरित प्रौद्योगिकी का शामिल-**

भारत सरकार की इस महत्वपूर्ण पहल का उद्देश्य हरित प्रौद्योगिकियों को अपनाकर ग्रामीण क्षेत्रों में ऊर्जा आत्मनिर्भरता और स्थिरता को बढ़ावा देना है। यह पहल ऊर्जा उत्पादन को विकेंद्रीकृत करने, नवीकरणीय ऊर्जा परिनियोजन को बढ़ाने और ऊर्जा उत्पादन के लिए स्थानीय संसाधनों का उपयोग करने की दिशा में ग्रामीण समुदायों को सशक्त बनाने पर केंद्रित है। इस अभियान में हरित प्रौद्योगिकी को निम्नलिखित प्रकार से समाविष्ट किया गया है-

**सौर ऊर्जा को बढ़ाया-**

इसके अंतर्गत ग्रामीण विद्युतीकरण के एक प्रमुख घटक के रूप में सौर ऊर्जा को बढ़ावा देने पर जोर दिया गया है। यह पहल स्वच्छ और टिकाऊ बिजली उत्पन्न करने के लिए छतों, सामुदायिक भवनों और कृषि भूमि पर सौर फोटोवोल्टिक पैनलों की स्थापना को प्रोत्साहित करती है। सौर ऊर्जा दूरदराज के गाँवों तक विश्वसनीय ऊर्जा पहुँच प्रदान करती है, जिससे जीवाश्म ईंधन और ग्रिड-आधारित बिजली पर निर्भरता कम हो जाती है।

**कृषि के लिए सौर पंप सेट-**

यह अभियान कृषि जल पंपिग के लिए सौर ऊर्जा संचालित सिंचाई पंप सेट को अपनाने की सुविधा प्रदान करता है। सौर पंप सेट कुओं और नदियों से पानी खींचने के लिए सौर ऊर्जा का उपयोग करते हैं, जिससे किसान ग्रिड बिजली या डीजल-संचालित पंपों पर निर्भर हुए बिना अपने खेतों की सिंचाई कर

सकते है। यह कृषि में ऊर्जा दक्षता को बढ़ावा देता है और पारंपरिक पंपिग तरीकों से जुड़े ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करता है।

**बायोगैस संयंत्र-**

जीयूएसए स्वच्छ खाना पकाने के इंधन उत्पादन के लिए ग्रामीण घरों और समुदायों में बायोगैस संयंत्रो की स्थापना को प्रोत्साहित करता है, बायोगैस प्रौद्योगिकी अवायविय पाचन के माध्यम से बायोगैस का उत्पादन करने के लिए पशुओं के गोबर कृषि अवशेष और रसोई के कचरे जैसे जैविक अपशिष्ट का उपयोग करती है, बायोगैस का उपयोग खाना पकाने प्रकाश व्यवस्था और हीटिंग के लिए किया जा सकता है जो अपशिष्ट प्रबन्धन चुनौतियों का समाधान करते हुए एक किफायती और पर्यावरण अनुकूल ऊर्जा स्रोत प्रदान करती है।

**माइको-हाइड्रो पॉवर-**

उपयुक्त जल संसाधनों वाले क्षेत्रों में, जीयूएसए छोटे पैमाने के जल टरबाइनों से बिजली उत्पन्न करने के लिए माइक्रो-हाइड्रो पॉवर परियोजनाओं के विकास को बढ़ावा देता है। माइक्रो-हाइड्रो पॉवर नवीकरणीय ऊर्जा का उत्पादन करने के लिए नदियों और नालों के प्राकृतिक प्रवाह का उपयोग करती है, खासकर पहाड़ी और दूरदराज के क्षेत्रों में जहां ग्रिड कनेक्टिविटी सीमित है। यह विकेन्द्रीकृत ऊर्जा समाधान ऊर्जा पहुँच को बढ़ाता है और ग्रामीण विद्युतीकरण प्रयासों में योगदान देता है

**पर्यावरण अनुकूल आदतें विकसित करने के लिए मिशन लाइफ का महत्व-**

मिशन लाइफ - आजीविका समावेशन और वित्तीय सशक्तीकरण एक महत्वपूर्ण पहल है जिसका उद्देश्य भारत में ग्रामीण जन के बीच पर्यावरण अनुकूल आदतों और टिकाऊ आजीविका को बढ़ावा देना है। मिशन लाइफ ग्रामीण समुदायों की भलाई और भावी पीढ़ियों के लिए प्राकृतिक संसाधनों की सुरक्षा में पर्यावरण संरक्षण और सतत विकास को संबल प्रदान करता है। मिशन लाइफ अपशिष्ट प्रबंधन, जल संरक्षण और नवीकरणीय ऊर्जा अपनाने जैसी पर्यावरण अनुकूल आदतों को बढ़ावा देकर पर्यावरण संरक्षण के महत्व पर जोर देता है। जंगलों, नदियी और जैव-विविधता के संरक्षण के पारिस्थितिकीय महत्व के बारे में जागरूकता बढ़ाकर, यह पहल ग्रामीणों को ऐसी आदतों को अपनाने के लिए प्रोत्साहित करती है जो उनके पारिस्थितिकीय पदचिह्न और पर्यावरणीय क्षरण को कम करती हैं।

**हरित गाँव सुनिश्चित करने के लिए सामुदायिक भागीदारी की भूमिका-**

सामुदायिक भागीदारी ग्रामीणों को सामूहिक रूप से हरित्त गाँव के लिए अपने दृष्टिकोण को परिभाषित करने और पर्यावरण संरक्षण, संसाधन प्रबंधन और सतत विकास के लिए साझा लक्ष्य निर्धारित करने में सक्षम बनाती है। सामुदायिक बैठकों, कार्यशालाओं और परामर्श जैसी भागीदारी प्रक्रियाओं के माध्यम से ग्रामीण जन अपनी प्राथमिकताओं, जरूरतों और आकांक्षाओं की पहचान कर सकते हैं। ग्रामीणों

 ISBN: 978-81-993143-8-2

के पास पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधनों के बारे में मूल्यवान स्थानीय ज्ञान, पारंपरिक अभ्यास और स्वदेशी ज्ञान मौजूद होता है। सामुदायिक भागीदारी इस ज्ञान को हरित ग्राम योजना और कार्यान्वयन में एकीकृत करने की अनुमति देती है, जिससे यह सुनिश्चित होता है कि यह पहल सांस्कृतिक रूप से उपयुक्त, संदर्भ विशिष्ट और दीर्घकालिक रूप से टिकाऊ है।

**शोध सारांश-**

शोध पत्र में हरित प्रौद्योगिकी वैज्ञानिक की अवधारणा एवं पर्यावरण संरक्षण में उसकी भूमिका का विश्लेषण किया गया है। हरित प्रौद्योगिकी का मुख्य उद्देश्य प्राकृतिक तत्वों का सतत उपयोग करते हुए पर्यावरण प्रदूषण को कम करना और मानव जीवन की गुणवत्ता में सुधार करना है। इसके अंतर्गत सौर, पवन, जल, जैव-ऊर्जा, ऊर्जा दक्ष वैज्ञानिक, हरित भवन, पर्यावरण प्रबंधन, जल संरक्षण जैसी पर्यावरण अनुकूल आदतों को बढ़ावा देकर पर्यावरण संरक्षण के महत्व पर जोर देता है। अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि हरित प्रौद्योगिकी के प्रयोग से वायु, जल एवं रासायनिक द्रव्यों में कमी आती है तथा कार्बन उत्सर्जन नियंत्रित होता है। इससे जैव विविधता का संरक्षण, जलवायु परिवर्तन के अंतर में कमी और प्राकृतिक संतुलन बनाए रखने में सहायता मिलती है। साथ ही यह आर्थिक विकास को भी बढ़ावा देता है, क्योंकि हरित प्रौद्योगिकी से रोजगार के नए अवसर मिले है। शोध निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि हरित प्रौद्योगिकी अनुकूल पर्यावरण के विकास की एक प्रभावी एवं आवश्यक रणनीति है। यदि सरकार, उद्योग और समाज सामूहिकता सहित व्यापक उपयोग को अपनायें तो इस क्षेत्र में अपार सम्भवनायें है।

संदर्भ सूचि-


- EEA, 2013- Air Pollution and Global Warming : History, Science, and Solutions, 2nd ed-
- Khinchi, Shyam S. and Tanwar, Meenu. Global Climate Change and Biodiversity (February 20, 2015). VL Media Solutions, New Delhi (INDIA) ISBN: 978-93-85068-73-7, Available at http://dx.doi.org/10.2139/ssrn.5070734
- Khinchi, S. S. (Ed.). (2015). *Biodiversity Distribution and Conservation*. Jaipur, Pointer Publishers.
- Khinchi, S. S., & Tanwar, M. (Eds.). (2017). *Environmental Challenges, Biodiversity and Sustainable Development*. New Delhi, VL Media Solutions.
- Tanwar, M. Climate Change And Health: Why Should India Is Concerned?. *Current Engineering and Scientific Research (IJCESR 2018)*, 152.
- Khinchi, S. S., & Pachori, S. Potential Sea Level Rise in The World and Its Mitigation. *Asian Resonance*, *3*, 144-148.

- Khinchi, S. S., & Pachori, S. (2018). Biodiversity: A Geographical Study. Channi, Notion Press.
- Khinchi, S. S., & Tanwar, M. (2017). Globalization and Environmental Sustainability. *Global Perspectives of Education and Social Sciences*, 92-95.
- Henderson, E (2016). Ice melt, sea level rise and superstorms: Evidence from paleoclimate data, climate modelling, and modern observations that global warming could be dangerous- Atmospheric Chemistry and Physics, 16, pp-3761–3812. 
- Hiç C, Pradhan P, Rybski D and Kropp J P (2016)- Food Surplus and Its Climate Burdens- Environ- Sci- Technol-, DOI: 10-1021/acs-est-5b05088, 2016. 
- Hooda V (2007)- Phytoremediation of toxic metals from soil and waste water- J Environ Biolo- 28 (2), 367-76. 
- Mello-Farias, P.C.- Chaves, A.L.S. (2008). Biochemical and molecular aspects of toxic metals phytoremediation using transgenic plants. In: Transgenic Approach in Plant Biochemistry and Physiology, Tiznado-Hernandez, M.E.; Troncoso-Rojas, R.- RiveraDomínguez, M.A. (Ed.) 253266, Research Signpost, Kerala, India.
- Singh Mani and Singh P. K., 'Challenges and Responsibilities of Teaching in Emerging India', Journal of Indian Education, NCERT, New Delhi, Vol XLII (2). 
- Singh Mani, "Khel Khel Mein Vigyan", Prathmik Shikshak, NCERT, New Delhi, Vol 39, no 1, January (2015). PP: 34-40- ISSN 970-9312. 


 ISBN: 978-81-993143-8-2

२२

# राजस्थान मरू पर्यटन सर्किट में पर्यटन का बहुआयामी महत्त्व

**हेमा पारीक,** शोधार्थी एवं **डॉ. सोम प्रकाश** सहायक आचार्य,

भूगोल विभाग, टांटिया विश्वविद्यालय श्रीगंगानगर

**सारांश**

प्रस्तुत शोध पत्र में राजस्थान मरु पर्यटन सर्किट के चारों जिलों बीकानेर, जोधपुर, जैसलमेर एवं बाड़मेर के भौगोलिक परिचय को संक्षिप्त में बताते हुए यहाँ के पर्यटन संबंधी महत्वपूर्ण स्थलों, ईमारतों, उत्सवों, मेलों आदि को गहराई से जानने का प्रयास किया गया है।पर्यटन मानसिक, शारीरिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, पर्यावरणीय आदि विभिन्न दृष्टियों से बहुत महत्वपूर्ण है। मात्र मनोरंजन एवं तनावमुक्ति का साधन नजर आने वाले पर्यटन का अन्तःसम्बन्ध इन सभी क्षेत्रों से बहुत गहराई का है।इस व्यवसाय से विदेशी मुद्रा अर्जित करने, रोजगार के विभिन्न स्रोत उपलब्ध कराने, विश्व के विभिन्न राष्ट्रों में पारस्परिक अच्छे सम्बन्ध स्थापित करने, घनिष्ठ सांस्कृतिक एवं व्यापारिक सम्बन्ध बनाने, विश्व शांति स्थापित करने, ऐतिहासिक धरोहर तथा पर्यावरण संरक्षण की असीम सम्भावनाएं है।

**मुख्य शब्द** : मरु पर्यटन सर्किट, अर्थव्यवस्था, एकीकरण, संस्कृति, लोक–संगीत, हस्तशिल्प, नेशनल पार्क, वैश्विक

राजस्थान, भारत का एक ऐसा राज्य है जो अपनी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत, ऐतिहासिक स्थलों और प्राकृतिक विविधता के लिए विश्व प्रसिद्ध है। यहां का मरू सर्किट, जिसे डेजर्ट सर्किट के नाम से भी जाना जाता है, राज्य के रेगिस्तानी क्षेत्रों को पर्यटन की दृष्टि से एकीकृत करता है। मरू शब्द संस्कृत से लिया गया है, जिसका अर्थ रेगिस्तान होता है। यह सर्किट मुख्य रूप से जोधपुर, जैसलमेर, बीकानेर, बारमेर और निकटवर्ती क्षेत्रों को कवर करता है, जहां थार रेगिस्तान की सुनहरी रेत, प्राचीन किले, हवेलियां और सांस्कृतिक उत्सव पर्यटकों को आकर्षित करते हैं। पर्यटन राजस्थान की अर्थव्यवस्था का एक प्रमुख स्तंभ है, और मरू सर्किट इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह न केवल आर्थिक विकास को बढ़ावा देता है बल्कि सांस्कृतिक संरक्षण, सामाजिक एकीकरण और पर्यावरणीय जागरूकता को भी प्रोत्साहित करता है।

यह सर्किट थार रेगिस्तान के हृदय में स्थित है, जहां गर्मी की चरम सीमाएं और रेतीले टीलों की सुंदरता एक अनोखा अनुभव प्रदान करती है। जोधपुर, जिसे 'नीला शहर' कहा जाता है, सर्किट का मुख्य प्रवेश द्वार है। यहां का मेहरानगढ़ किला, उमेद भवन पैलेस और जसवंतथड़ा जैसे स्थल राजपूत वास्तुकला की उत्कृष्टता दर्शाते हैं। जैसलमेर, 'सुनहरा शहर', अपने जीवित किले (जैसलमेर फोर्ट) के लिए प्रसिद्ध है, जहां पटवों की हवेली, सलीम सिंह की हवेली और गड़ीसर झील पर्यटकों को मध्ययुगीन

इतिहास की यात्रा कराती है। सम और महावर  के रेतीले टीलों पर ऊंट सफारी और रेगिस्तानी कैम्पिंग का आनंद लिया जा सकता है। बीकानेर में जूनागढ़ किला, लालगढ़ पैलेस और ऊंट अनुसंधान फार्म पर्यटन के प्रमुख आकर्षण हैं, जबकि बाडमेर के किराडू मंदिर और तिलवाड़ा पशु मेला स्थानीय संस्कृति को जीवंत बनाते हैं। ये स्थल न केवल ऐतिहासिक महत्व रखते हैं बल्कि पर्यटकों को रेगिस्तानी जीवनशैली, लोक संगीत और हस्तशिल्प से परिचित कराते हैं। पर्यटन विभाग द्वारा इस सर्किट को पूर्व  में 'डेजर्ट ट्राएंगल' ( बाडमेर रहित) के रूप में प्रचारित किया जाता था, जो विदेशी और घरेलू पर्यटकों के लिए एक आदर्श यात्रा पैकेज प्रदान करता था।

पर्यटन का आर्थिक महत्व मरू सर्किट में सर्वोपरि है। राजस्थान में पर्यटन राज्य के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) का लगभग 12ः योगदान देता है। 2023 में, राज्य में 18 करोड़ घरेलू और 18 लाख अंतरराष्ट्रीय पर्यटक आए, जिसमें 2024 में अंतरराष्ट्रीय पर्यटकों में 22% की वृद्धि हुई। राजस्थान में कैलेण्डर वर्ष 2024 में घरेलू पर्यटन में 28 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि और अन्तरराष्ट्रीय पर्यटकों की संख्या में 19 प्रतिशत की वृद्धि देखी गई है। राजस्थान आर्थिक समीक्षा 2024–25 के अनुसार राजस्थान आने वाले घरेलू पर्यटकों की संख्या 2023 में 17.90 करोड़ से बढ़कर 2024 में 23 करोड़ हो गई।

**वर्ष 2023 में मरू पर्यटन सर्किट में आए घरेलू एवं अन्तरराष्ट्रीय पर्यटक**

| जिला | 2023 | |
|---|---|---|
| | घरेलू | अन्तरराष्ट्रीय |
| बाड़मेर | 2539004 | 78 |
| बिकानेर | 4373837 | 37414 |
| जैसलमेर | 8607976 | 48094 |
| जोधपुर | 2683889 | 132259 |

**वर्ष 2024 में मरु पर्यटन सर्किट में आए घरेलू एवं अन्तरराष्ट्रीय पर्यटक**

| थ्जला | 2024 | |
|---|---|---|
| | घरेलू | अन्तरराष्ट्रीय |
| जोधपुर | 2982710 | 207490 |
| बिकानेर | 22416810 | 161884 |
| जैसलमेर | 6354899 | 71079 |
| बाड़मेर | 3466028 | 249 |

 ISBN: 978-81-993143-8-2

इन आंकड़ों से यह स्पष्ट होता है कि मरु पर्यटन सर्किट में पर्यटकों का आकर्षण निरन्तर बढ़ रहा है। इसी क्रम में पर्यटन स्थलों पर आयोजित होने वाले मेले एवं महोत्सव भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। धार्मिक एवं सांस्कृतिक परम्परा को संजोने वाले ये मेले क्षेत्र की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाते हैं। वर्ष 2024 में आयोजित कुछ प्रमुख मेलों में आने वाले पर्यटकों की संख्या आश्चर्यजनक है। यह संख्या व्यक्त करती है कि उनके द्वारा व्यय की गई राशि अर्थव्यवस्था को निश्चित रूप से मजबूत बनाती है।

**वर्ष 2024 में आयोजित मेलों में पर्यटकों की संख्या**

| मेले का नाम | पर्यटकों की अनुमानित संख्या | |
|---|---|---|
| | वार्षिक मेले के दौरान | साप्ताहिक |
| 1. नवरात्रा मेला, मेहरानगढ़, जोधपुर | 8–10 लाख | 10–12 हजार |
| 2. नवरात्रि मेला, देशनोक, बीकानेर | 8–10 लाख | 50 हजार |
| 3. रामदेवरा मेला, जैसलमेर | 40–50 लाख | 02 लाख |
| 4. पुनरासर मेला, बीकानेर | 06–07 लाख | 20 हजार |
| 5. मुकाम मेला, बीकानेर | 06–10 लाख | 02–03 हजार |
| 6. कपिल मुनि मेला, कोलायत (बीकानेर) | 07–08 लाख | 20–25 हजार |

इन विशाल मेलों में आने वाले पर्यटकों से प्राप्त आय निःसंदेह क्षेत्र एवं देश के आर्थिक विकास को आधार प्रदान करती है। यह मेले, उत्सव क्षेत्र की संस्कृति, कला, धर्म एवं इतिहास को पूरे विश्व में फैला देते हैं।

मरू सर्किट इस विकास का प्रमुख हिस्सा है, क्योंकि यहां के उत्सव जैसे जैसलमेर का डेजर्ट फेस्टिवल, बीकानेर का ऊंट उत्सव और पुष्कर मेला लाखों पर्यटकों को आकर्षित करते हैं। ये उत्सव न केवल टिकट और आवास से राजस्व उत्पन्न करते हैं बल्कि स्थानीय हस्तशिल्प, भोजन और परिवहन क्षेत्र को बढ़ावा देते हैं। उदाहरण के लिए, जोधपुर में पर्यटकों की संख्या 2001 में 4.53 लाख थी, जो 2021 तक 7.29 लाख होने का अनुमान था। पर्यटन से प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रोजगार लाखों लोगों को मिलता है, जिसमें गाइड, होटल स्टाफ, ऊंट चालक और कारीगर शामिल हैं। राज्य सरकार ने 2025–26 के बजट में पर्यटन के लिए 975 करोड़ रुपये आवंटित किए हैं, जिसमें मरू सर्किट के लिए इंफ्रास्ट्रक्चर विकास शामिल है। निजी क्षेत्र की भागीदारी से होटल, रिसॉर्ट्स और सफारी पैकेज विकसित हो रहे हैं, जो विदेशी मुद्रा कमाने में सहायक हैं। एक अध्ययन के अनुसार, पर्यटन से उत्पन्न रोजगार का अनुपात प्रति 10 लाख रुपये

निवेश पर 71 है, और गुणक प्रभाव 2.435 है, जो अर्थव्यवस्था को कई गुना बढ़ाता है। मरू सर्किट में ग्रामीण पर्यटन और एडवेंचर गतिविधियां स्थानीय समुदायों को सशक्त बनाती हैं, विशेष रूप से महिलाओं और आदिवासी समूहों को, जो हस्तकला और सांस्कृतिक प्रदर्शनों से आय अर्जित करते हैं।

सांस्कृतिक महत्व की दृष्टि से, मरू सर्किट पर्यटन सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण और प्रसार का माध्यम है। राजस्थान की राजपूत, जैन और मुस्लिम संस्कृतियां यहां के किलों, मंदिरों और हवेलियों में जीवित हैं। पर्यटक यहां आकर लोक नृत्य जैसे कालबेलिया, घूमर और लोक संगीत का आनंद लेते हैं, जो यूनेस्को की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत में शामिल हैं। उत्सवों के दौरान, पर्यटक स्थानीय परंपराओं में भाग लेते हैं, जैसे ऊंट दौड़ और रेगिस्तानी शादियां, जो सांस्कृतिक आदान–प्रदान को बढ़ावा देते हैं। यह पर्यटन सांस्कृतिक संरक्षण को प्रोत्साहित करता है, क्योंकि राजस्व से पुरातात्विक स्थलों का रखरखाव होता है। उदाहरण के लिए, जैसलमेर फोर्ट, जो दुनिया का एकमात्र जीवित किला है, पर्यटन से प्राप्त धन से संरक्षित है। शेखावाटी की चित्रित हवेलियां, जो 18वीं–19वीं शताब्दी की हैं, पर्यटकों के कारण संरक्षण अभियानों का केंद्र बनी हैं। पर्यटन सांस्कृतिक विविधता को वैश्विक स्तर पर प्रचारित करता है, जिससे स्थानीय कलाकारों को अंतरराष्ट्रीय मान्यता मिलती है। इससे सामाजिक एकीकरण भी होता है, क्योंकि पर्यटक विभिन्न संस्कृतियों से जुड़ते हैं, पूर्वाग्रह कम होते हैं और वैश्विक शांति का संदेश फैलता है।

पर्यावरणीय महत्व भी कम नहीं है। मरू सर्किट में डेजर्ट नेशनल पार्क, जो 3162 वर्ग किलोमीटर में फैला है, दुर्लभ प्रजातियों जैसे ग्रेट इंडियन बस्टर्ड, चिंकारा और रेगिस्तानी लोमड़ी का घर है। इको–टूरिज्म यहां की मुख्य विशेषता है, जहां पर्यटक प्रकृति ट्रेल्स, वन्यजीव सफारी और संरक्षण गतिविधियों में भाग लेते हैं। राज्य सरकार ने 20 वर्षीय पर्यटन योजना में इको–प्रोजेक्ट्स के लिए 574 लाख रुपये आवंटित किए हैं, जिसमें डेजर्ट नेशनल पार्क के लिए 29.50 लाख रुपये शामिल हैं। यह पर्यटन पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा देता है, क्योंकि पर्यटक जागरूकता से वन्यजीव शिकार और प्रदूषण कम होता है। हालांकि, रेगिस्तान की नाजुक पारिस्थितिकी को चुनौतियां हैं, जैसे पर्यटकों से उत्पन्न कचरा और वाहन प्रदूषण, लेकिन सस्टेनेबल टूरिज्म नीतियां जैसे जोनेशन और नॉन–पॉल्यूटिंग वाहनों का उपयोग इसे संतुलित रखती हैं। मरू सर्किट में जल संरक्षण और हरित ऊर्जा परियोजनाएं पर्यटन से जुड़ी हैं, जो जलवायु परिवर्तन के खिलाफ लड़ाई में योगदान देती हैं।

फिर भी, मरू सर्किट में पर्यटन की कुछ चुनौतियां हैं। गर्मी का चरम मौसम (मार्च–जून) पर्यटकों को सीमित करता है, जिससे सीजनल पर्यटन पर निर्भरता बढ़ती है। इंफ्रास्ट्रक्चर की कमी, जैसे सड़कें और हवाई संपर्क, पहुंच को प्रभावित करती है। उदाहरण के लिए, जैसलमेर में उड़ानों की कमी है। पर्यावरणीय क्षरण, पानी की कमी और ओवर–टूरिज्म से स्थानीय समुदाय प्रभावित होते हैं। सुरक्षा मुद्दे, जैसे सीमा क्षेत्रों में प्रतिबंध, और महामारी जैसी घटनाएं पर्यटन को प्रभावित करती हैं। एक अध्ययन में

 ISBN: 978-81-993143-8-2

पर्यटकों की संख्या में स्थिरता दिखाई गई है, लेकिन वृद्धि दर कम है, जो बेहतर मार्केटिंग की आवश्यकता दर्शाती है।

इन चुनौतियों के समाधान के लिए विकास योजनाएं महत्वपूर्ण हैं। राज्य सरकार नई सर्किट विकसित कर रही है, जैसे तनोट (जैसलमेर) और संचू (बीकानेर) में डेजर्ट सर्किट, और बांसवाड़ा–डूंगरपुर में ट्राइबल सर्किट। ये आदिवासी संस्कृति और सीमा गतिविधियों को प्रोत्साहित करेंगे। नीतियां जैसे कॉन्सर्ट टूरिज्म, डेस्टिनेशन वेडिंग्स और एमआईसीई (मीटिंग्स, इंसेंटिव्स, कॉन्फ्रेंसेज, एक्जीबिशन्स) पर्यटन को बढ़ावा देंगी। इंफ्रास्ट्रक्चर में हवाईअड्डे, सड़कें और डिजिटल प्लेटफॉर्म शामिल हैं। 20 वर्षीय योजना में 1.59 लाख करोड़ रुपये का निवेश प्रस्तावित है, जिसमें निजी क्षेत्र की भूमिका प्रमुख है। सुझाव के रूप में, सस्टेनेबल प्रैक्टिसेस, स्थानीय भागीदारी और डिजिटल मार्केटिंग को बढ़ावा देना चाहिए।

राजस्थान के मरू सर्किट में पर्यटन का महत्व बहुआयामी है। यह आर्थिक विकास, सांस्कृतिक संरक्षण, सामाजिक एकीकरण और पर्यावरणीय जागरूकता का स्रोत है। चुनौतियों के बावजूद, उचित योजनाओं से यह सर्किट वैश्विक पर्यटन का केंद्र बन सकता है। पर्यटन न केवल राजस्थान की पहचान है बल्कि भारत की सांस्कृतिक धरोहर का प्रतिनिधित्व करता है। हमें इसे सस्टेनेबल तरीके से विकसित करना चाहिए ताकि आने वाली पीढ़ियां भी इसका आनंद ले सकें।

**संदर्भ ग्रंथ :**


1. भाटी डॉ. रघुवीर सिंह – विश्व प्रसिद्ध पर्यटन स्थल (जैसलमेर)
2. शुक्ला राजेश, शुक्ला रश्मि – पर्यटन भूगोल
3. गुप्ता एम. एल. – राजस्थान : जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन, प्रथम व द्वितीय खण्ड, जोधपुर।
4. Manglaw, Sunil, Kaushik, S.P. & Khayalia, Manoj (2022).*Analysis of Trend and Pattern of Tourists's Arrival: A Case Study of esert Tourist Circuit*, Rajasthan. Journal of Tourism Insights.
5. An Analysis of Heritage Tourism in Western Rajasthan : A Case Study of Desert Circuit (2024).*International Journal of Science & Engineering Development Research(IJRTI), Vol. 9, Issue 1.*
6. Khinchi, S. S.(2014). Environmental Degradation and It's Effects on Human Health. Asian Resonance,Vol-3,Issue2
7. Khinchi, S. S., & Tanwar, M. (2016). *Environmental aspects of biodiversity*. Jaipur, Oxford Book Company.
8. Khinchi, S. S., & Tanwar, M. (Eds.). (2017). Environmental Challenges, Biodiversity and Sustainable Development. New Delhi, VL Media Solutions.

9. Khinchi, S. S., & Tanwar, M. (Eds.). (2017). *Environmental Challenges, Biodiversity and Sustainable Development*. New Delhi, VL Media Solutions.
10. Khinchi, S. S., & Tanwar, M. Globalization Impact on Environment and Proposal for Solution. *Review of Research Journal*, *3*(1).
11. Suthar, Praveen (2025). *From Desert Landscape to Sustainable Development : New pathways of Ecotourism in the Desert Regions of Rajasthan,* RESEARCH HUB International Multidisciplinary Research Journal.
12. (Conference/Proceedings) An Overview of Tourist Circuits : A Case of Rajasthan (2019). *International Journal of Management, Technology and Engineering (IJAMTES).*
13. Study of Tourism Development in Rajasthan (2016/2018). *IOSR Journal of Humanities and Social Science (IOSR-JHSS)*

 **ISBN: 978-81-993143-8-2**

२३

# श्रीगंगानगर जिले के सामाजिक–आर्थिक परिदृश्य में परिवर्तन : अवसर एवं चुनौतियाँ

चन्द्र कुमार, शोधार्थी एवं डॉ. सोम प्रकाश, सहायक आचार्य

सारांश

प्रस्तुत शोध–पत्र राजस्थान के उत्तरी–पश्चिमी भाग में स्थित श्रीगंगानगर जिले के सामाजिक–आर्थिक परिदृश्य में हुए परिवर्तनों का भौगोलिक दृष्टिकोण से विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इंदिरा गांधी नहर परियोजना के आगमन के पश्चात् यह जिला मरुस्थलीय क्षेत्र से विकसित कृषि–प्रधान क्षेत्र के रूप में उभरा है, जिससे जनसंख्या संरचना, भूमि उपयोग प्रतिरूप, कृषि उत्पादन, रोजगार के अवसर, शिक्षा, स्वास्थ्य तथा नगरीकरण की प्रक्रिया में उल्लेखनीय परिवर्तन देखने को मिले हैं।

अध्ययन में यह स्पष्ट किया गया है कि सिंचाई विस्तार, कृषि आधुनिकीकरण, परिवहन एवं संचार साधनों के विकास ने जिले में सामाजिक–आर्थिक उन्नति के नए अवसर उत्पन्न किए हैं। वहीं दूसरी ओर जलभराव, मृदा लवणता, पर्यावरणीय असंतुलन, क्षेत्रीय विषमताएँ तथा ग्रामीण–नगरीय असमानता जैसी चुनौतियाँ भी उभरकर सामने आई हैं। यह शोध–पत्र उपलब्ध द्वितीयक आँकड़ों, क्षेत्रीय अध्ययन तथा भौगोलिक विश्लेषण विधियों के माध्यम से अवसरों एवं चुनौतियों का समन्वित मूल्यांकन प्रस्तुत करता है, जो भविष्य की विकास योजनाओं एवं नीति निर्माण में सहायक सिद्ध हो सकता है।

मुख्य शब्दः सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन, भौगोलिक परिदृश्य, श्रीगंगानगर जिला, कृषि विकास, सिंचाई परियोजना, क्षेत्रीय विकास, ग्रामीण–नगरीय परिवर्तन, अवसर एवं चुनौतियाँ

## प्रस्तावना

भूगोल एक ऐसा समन्वित विज्ञान है जो प्राकृतिक परिवेश और मानव जीवन के बीच स्थापित पारस्परिक संबंधों का वैज्ञानिक अध्ययन करता है। मानव समाज की सामाजिक एवं आर्थिक गतिविधियाँ किसी भी क्षेत्र के भौगोलिक कारकों–जैसे स्थलाकृति, जलवायु, मृदा, जल संसाधन तथा अवस्थिति से गहराई से प्रभावित होती हैं। इन्हीं भौगोलिक परिस्थितियों के अनुरूप समाज की आजीविका, बसावट, उत्पादन प्रणाली और जीवन–शैली विकसित होती है। समय के साथ जब प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग, तकनीकी प्रगति, जनसंख्या वृद्धि और नीतिगत हस्तक्षेप बढ़ते हैं, तो समाज के सामाजिक–आर्थिक ढाँचे में परिवर्तन अपरिहार्य हो जाता है। इस प्रकार सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन भूगोल का एक महत्वपूर्ण अध्ययन क्षेत्र बन जाता है, क्योंकि यह परिवर्तन स्थानिक भिन्नताओं और क्षेत्रीय विशेषताओं के माध्यम से ही अपनी स्पष्ट अभिव्यक्ति प्राप्त करता है।

भारत जैसे विशाल और विविधतापूर्ण देश में सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन की प्रक्रिया अत्यंत जटिल और बहुआयामी रही है। स्वतंत्रता के पश्चात् देश में कृषि, उद्योग, परिवहन, शिक्षा तथा स्वास्थ्य के क्षेत्रों में व्यापक विकासात्मक प्रयास किए गए, जिनका प्रभाव विभिन्न क्षेत्रों में अलग–अलग रूपों में परिलक्षित हुआ। कहीं हरित क्रांति ने कृषि समृद्धि को जन्म दिया, तो कहीं औद्योगीकरण एवं नगरीकरण ने सामाजिक संरचना को परिवर्तित किया। इन परिवर्तनों ने एक ओर विकास के नए अवसर उत्पन्न किए, वहीं दूसरी ओर क्षेत्रीय विषमताएँ, पर्यावरणीय समस्याएँ और सामाजिक असमानताएँ जैसी चुनौतियाँ भी सामने आईं। अतः किसी भी क्षेत्र के सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन का अध्ययन करते समय उसके भौगोलिक आधार, संसाधन संरचना और विकास प्रक्रियाओं को समझना अनिवार्य हो जाता है।

राजस्थान के उत्तरी भाग में स्थित श्रीगंगानगर जिला सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन के अध्ययन हेतु एक अत्यंत महत्वपूर्ण क्षेत्र है। यह जिला ऐतिहासिक रूप से मरुस्थलीय परिस्थितियों, सीमित वर्षा तथा प्राकृतिक संसाधनों की कमी के कारण पिछड़ा माना जाता रहा है। किंतु इंदिरा गांधी नहर परियोजना के आगमन के पश्चात् इस क्षेत्र के भौगोलिक एवं आर्थिक परिदृश्य में क्रांतिकारी परिवर्तन देखने को मिले हैं। सिंचाई सुविधाओं के विस्तार से कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई, भूमि उपयोग प्रतिरूप बदले और इस क्षेत्र ने 'राजस्थान के अन्न भंडार' के रूप में पहचान प्राप्त की। इन परिवर्तनों ने न केवल आर्थिक गतिविधियों को गति प्रदान की, बल्कि सामाजिक संरचना, जनसंख्या वितरण और जीवन–स्तर को भी गहराई से प्रभावित किया।

श्रीगंगानगर जिले में हुए सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन अनेक अवसरों के साथ–साथ नई चुनौतियाँ भी लेकर आए हैं। एक ओर कृषि विकास, रोजगार के नए साधन, शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुविधाओं का विस्तार तथा नगरीकरण की प्रक्रिया ने क्षेत्रीय विकास को सुदृढ़ किया है, वहीं दूसरी ओर जलभराव, मृदा लवणता, पर्यावरणीय असंतुलन, संसाधनों का असमान वितरण तथा ग्रामीण–नगरीय विषमता जैसी समस्याएँ भी उभरकर सामने आई हैं। इन चुनौतियों ने यह स्पष्ट कर दिया है कि विकास केवल आर्थिक वृद्धि तक सीमित नहीं होना चाहिए, बल्कि उसे सतत एवं संतुलित स्वरूप प्रदान करना भी आवश्यक है।

इसी पृष्ठभूमि में प्रस्तुत शोध–पत्र का उद्देश्य श्रीगंगानगर जिले के सामाजिक–आर्थिक परिदृश्य में हुए परिवर्तनों का भौगोलिक दृष्टिकोण से समग्र अध्ययन करना है। इस अध्ययन के माध्यम से जिले में उत्पन्न अवसरों एवं चुनौतियों का विश्लेषण करते हुए यह समझने का प्रयास किया गया है कि किस प्रकार भौगोलिक कारक, विकास योजनाएँ और मानवीय गतिविधियाँ मिलकर क्षेत्रीय विकास की दिशा निर्धारित करती हैं। यह शोध न केवल क्षेत्रीय नियोजन एवं विकास नीति निर्माण में सहायक सिद्ध होगा, बल्कि भविष्य में सतत सामाजिक–आर्थिक विकास के लिए एक सशक्त आधार भी प्रदान करेगा।

अध्ययन क्षेत्र का भौगोलिक परिचय

 ISBN: 978-81-993143-8-2

श्रीगंगानगर जिला राजस्थान राज्य के उत्तर–पश्चिमी भाग में स्थित है और भौगोलिक दृष्टि से यह एक सीमावर्ती तथा रणनीतिक महत्व का जिला है। यह जिला 290 03ᵟ से 300 12᾽ उत्तरी अक्षांश तथा 720 38᾽ से 740 17᾽ पूर्वी देशांतर के मध्य विस्तृत है। इसके उत्तर एवं उत्तर–पश्चिम में पाकिस्तान की अंतरराष्ट्रीय सीमा, पूर्व में हनुमानगढ़ जिला, दक्षिण में बीकानेर जिला तथा पश्चिम में पुनः पाकिस्तान की सीमा स्थित है। सीमावर्ती स्थिति के कारण यह जिला न केवल भौगोलिक बल्कि सामाजिक–आर्थिक एवं सामरिक दृष्टि से भी विशेष महत्व रखता है।

भौतिक दृष्टि से श्रीगंगानगर जिला राजस्थान के शुष्क एवं अर्द्ध–शुष्क मरुस्थलीय क्षेत्र का भाग रहा है। जिले की स्थलाकृति सामान्यतः समतल एवं रेतीली है, जिसमें कहीं–कहीं बालू के टीले पाए जाते हैं। प्राकृतिक ढाल उत्तर–पूर्व से दक्षिण–पश्चिम की ओर पाई जाती है, जो जल निकास एवं भूमि उपयोग प्रतिरूप को प्रभावित करती है। जिले में पाई जाने वाली मृदा मुख्यतः बलुई, दोमट एवं कहीं–कहीं लवणीय प्रकृति की है। सिंचाई सुविधाओं के अभाव में यह मृदा पहले सीमित उत्पादकता वाली थी, किंतु वर्तमान में सिंचित क्षेत्रों में इसकी कृषि क्षमता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है।

जलवायु की दृष्टि से श्रीगंगानगर जिले की जलवायु उष्ण एवं शुष्क प्रकार की है। यहाँ ग्रीष्म ऋतु अत्यधिक गर्म होती है, जबकि शीत ऋतु अपेक्षाकृत ठंडी रहती है। वार्षिक वर्षा अत्यल्प एवं अनिश्चित होती है, जो सामान्यतः 200 से 300 मि.मी. के बीच रहती है। अल्प वर्षा एवं उच्च तापमान के कारण प्राकृतिक वनस्पति विरल पाई जाती है। इसी कारण ऐतिहासिक रूप से यह क्षेत्र वर्षा पर आधारित कृषि के लिए उपयुक्त नहीं माना जाता था।

इस जिले के भौगोलिक परिदृश्य में निर्णायक परिवर्तन इंदिरा गांधी नहर परियोजना के आगमन के पश्चात् देखने को मिला। नहर आधारित सिंचाई ने न केवल जल की उपलब्धता सुनिश्चित की, बल्कि भूमि उपयोग प्रतिरूप, फसल चक्र एवं कृषि उत्पादकता में भी व्यापक परिवर्तन किया। नहर के कारण गेहूँ, कपास, सरसों, चावल एवं चारा फसलों का उत्पादन बढ़ा, जिससे यह जिला राजस्थान के प्रमुख कृषि उत्पादक जिलों में शामिल हो गया। परिणामस्वरूप ग्रामीण बसावटों का विस्तार, नई बस्तियों का विकास तथा नगरीकरण की प्रक्रिया को भी गति मिली।

जनसंख्या वितरण की दृष्टि से श्रीगंगानगर जिले में ग्रामीण जनसंख्या का अनुपात अपेक्षाकृत अधिक है, यद्यपि हाल के वर्षों में नगरीय जनसंख्या में भी निरंतर वृद्धि हुई है। सिंचित क्षेत्रों में जनसंख्या घनत्व अपेक्षाकृत अधिक पाया जाता है, जबकि सीमावर्ती एवं अपेक्षाकृत कम विकसित क्षेत्रों में जनसंख्या विरल है। यह असमान वितरण जिले में क्षेत्रीय विषमताओं को स्पष्ट रूप से दर्शाता है, जो सामाजिक–आर्थिक अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण आधार प्रदान करता है।

इस प्रकार श्रीगंगानगर जिला अपने विशिष्ट भौगोलिक स्वरूप, सीमावर्ती स्थिति, नहर आधारित कृषि प्रणाली एवं परिवर्तित प्राकृतिक–मानवीय संबंधों के कारण सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन के अध्ययन हेतु एक आदर्श अध्ययन क्षेत्र के रूप में उभरता

है। यहाँ के भौगोलिक कारक न केवल विकास के अवसर उत्पन्न करते हैं, बल्कि जलभराव, मृदा लवणता एवं पर्यावरणीय असंतुलन जैसी चुनौतियों को भी जन्म देते हैं, जो इस शोध को और अधिक प्रासंगिक बनाते हैं।

श्रीगंगानगर जिले की सामाजिक संरचना

श्रीगंगानगर जिला की सामाजिक संरचना उसके भौगोलिक परिवेश, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि तथा आर्थिक विकास प्रक्रियाओं से गहराई से प्रभावित रही है। यह जिला अपेक्षाकृत नवीन बसावट वाला क्षेत्र माना जाता है, जहाँ नहर आधारित विकास के साथ विभिन्न क्षेत्रों से जनसंख्या का आगमन हुआ। परिणामस्वरूप यहाँ की सामाजिक संरचना मिश्रित, बहु–सांस्कृतिक एवं गतिशील स्वरूप ग्रहण करती दिखाई देती है। सामाजिक संगठन, जीवन–शैली तथा सामुदायिक संबंधों पर कृषि विकास, सीमावर्ती स्थिति और संसाधनों की उपलब्धता का स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

जनसंख्या संरचना की दृष्टि से श्रीगंगानगर जिले में ग्रामीण जनसंख्या का अनुपात नगरीय जनसंख्या की तुलना में अधिक है। ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि आधारित जीवन–शैली प्रमुख है, जहाँ संयुक्त परिवार प्रणाली अभी भी व्यापक रूप से प्रचलित है। वहीं नगरीय क्षेत्रों में एकल एवं लघु परिवारों की संख्या में निरंतर वृद्धि देखी जा रही है। सिंचित क्षेत्रों में जनसंख्या घनत्व अपेक्षाकृत अधिक पाया जाता है, जबकि सीमावर्ती एवं कम संसाधनयुक्त क्षेत्रों में जनसंख्या विरल है। यह असमान वितरण सामाजिक–आर्थिक विकास की क्षेत्रीय विषमताओं को स्पष्ट रूप से दर्शाता है।

जातीय एवं सामाजिक दृष्टि से जिले की संरचना विविधतापूर्ण है। यहाँ विभिन्न सामाजिक वर्गों, जातियों तथा समुदायों का सह–अस्तित्व पाया जाता है। कृषि विकास और रोजगार के नए अवसरों के कारण बाहरी क्षेत्रों से आए प्रवासी समुदायों ने जिले की सामाजिक संरचना को और अधिक बहुआयामी बनाया है। परंपरागत सामाजिक मूल्य, सामुदायिक सहयोग और आपसी निर्भरता ग्रामीण समाज की प्रमुख विशेषताएँ रही हैं, जबकि नगरीय क्षेत्रों में आधुनिकता, व्यावसायिकता और व्यक्तिगत जीवन–शैली का प्रभाव अधिक स्पष्ट है।

शिक्षा के क्षेत्र में श्रीगंगानगर जिले की सामाजिक संरचना में उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ है। पूर्व में जहाँ साक्षरता का स्तर अपेक्षाकृत निम्न था, वहीं वर्तमान में शिक्षा संस्थानों की वृद्धि, विद्यालयों एवं महाविद्यालयों की स्थापना तथा सरकारी योजनाओं के प्रभाव से साक्षरता दर में निरंतर सुधार हुआ है। विशेष रूप से महिला शिक्षा में वृद्धि ने सामाजिक चेतना, पारिवारिक स्वास्थ्य और निर्णय प्रक्रिया में महिलाओं की भूमिका को सुदृढ़ किया है। यह परिवर्तन सामाजिक संरचना में सकारात्मक बदलाव का सूचक है।

स्वास्थ्य सुविधाओं के विस्तार ने भी जिले की सामाजिक संरचना को प्रभावित किया है। प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों, सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्रों एवं निजी चिकित्सा सेवाओं की उपलब्धता से जीवन प्रत्याशा में वृद्धि हुई है। इसके साथ ही सामाजिक सुरक्षा योजनाओं, वृद्धावस्था पेंशन, मातृत्व लाभ एवं अन्य कल्याणकारी कार्यक्रमों ने समाज के कमजोर वर्गों को संरक्षित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

 ISBN: 978-81-993143-8-2

कुल मिलाकर श्रीगंगानगर जिले की सामाजिक संरचना परंपरा और आधुनिकता के समन्वय का उदाहरण प्रस्तुत करती है। जहाँ एक ओर ग्रामीण समाज में पारंपरिक मूल्य, कृषि आधारित जीवन और सामुदायिकता प्रमुख है, वहीं दूसरी ओर नगरीय क्षेत्रों में शिक्षा, नगरीकरण और आर्थिक विविधीकरण के प्रभाव से सामाजिक परिवर्तन तीव्र गति से हो रहा है। यही सामाजिक संरचना जिले के सामाजिक–आर्थिक परिदृश्य में उत्पन्न अवसरों एवं चुनौतियों को समझने का एक महत्वपूर्ण आधार प्रदान करती है।

आर्थिक संरचना एवं परिवर्तन

श्रीगंगानगर जिला की आर्थिक संरचना उसके भौगोलिक परिवेश, संसाधन आधार तथा नहर आधारित विकास प्रणाली से प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित रही है। ऐतिहासिक रूप से यह क्षेत्र शुष्क जलवायु एवं अल्प वर्षा के कारण आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा माना जाता था। वर्षा पर निर्भर कृषि, सीमित उत्पादन एवं अल्प रोजगार के कारण यहाँ की अर्थव्यवस्था मुख्यतः निर्वाह कृषि पर आधारित थी। किंतु इंदिरा गांधी नहर परियोजना के आगमन के पश्चात् जिले की आर्थिक संरचना में व्यापक एवं गुणात्मक परिवर्तन देखने को मिला है।

कृषि श्रीगंगानगर जिले की अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार रही है। नहर आधारित सिंचाई व्यवस्था ने कृषि को स्थायित्व प्रदान किया तथा फसल प्रतिरूप में विविधता लाई। जहाँ पहले मोटे अनाज एवं वर्षा–आधारित फसलें प्रमुख थीं, वहीं वर्तमान में गेहूँ, कपास, सरसों, चावल एवं चारा फसलों का उत्पादन बड़े पैमाने पर होने लगा है। इससे न केवल कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई, बल्कि किसानों की आय, कृषि से जुड़ी गतिविधियों तथा कृषि–आधारित रोजगार के अवसरों में भी विस्तार हुआ। कृषि यंत्रीकरण, उन्नत बीजों एवं रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग ने उत्पादन क्षमता को और अधिक सुदृढ़ किया है।

कृषि के विकास के साथ–साथ जिले में पशुपालन, दुग्ध उत्पादन एवं सहायक गतिविधियों को भी प्रोत्साहन मिला है। चारा फसलों की उपलब्धता से पशुधन की संख्या एवं उत्पादकता में वृद्धि हुई, जिससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था को अतिरिक्त आय स्रोत प्राप्त हुए। इसके अतिरिक्त कृषि उपज के भंडारण, प्रसंस्करण तथा विपणन से संबंधित गतिविधियों ने स्थानीय स्तर पर आर्थिक विविधीकरण को गति दी है।

औद्योगिक क्षेत्र की दृष्टि से श्रीगंगानगर जिला अभी भी सीमित विकास वाला क्षेत्र माना जा सकता है, तथापि यहाँ लघु एवं कुटीर उद्योगों का विकास हुआ है। कृषि आधारित उद्योग, जैसे आटा चक्की, कपास जिनिंग, तेल मिल, खाद्य प्रसंस्करण इकाइयाँ एवं बीज उद्योग, जिले की आर्थिक संरचना में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। नगरीय क्षेत्रों में व्यापार, परिवहन, गोदामों एवं सेवाक्षेत्र का विस्तार हुआ है, जिससे गैर–कृषि रोजगार के अवसर सृजित हुए हैं।

परिवहन एवं संचार सुविधाओं के विकास ने जिले की आर्थिक गतिविधियों को व्यापक बाजारों से जोड़ा है। सड़क एवं रेल नेटवर्क के विस्तार से कृषि उत्पादों के विपणन में सुविधा हुई है तथा स्थानीय व्यापार को प्रादेशिक एवं राष्ट्रीय स्तर पर संपर्क

प्राप्त हुआ है। परिणामस्वरूप नगरीय केंद्र व्यापारिक एवं आर्थिक गतिविधियों के प्रमुख केंद्र के रूप में उभर रहे हैं।

हालाँकि इन सकारात्मक परिवर्तनों के साथ–साथ कुछ आर्थिक चुनौतियाँ भी सामने आई हैं। जलभराव एवं मृदा लवणता के कारण कुछ क्षेत्रों में कृषि उत्पादकता प्रभावित हुई है। छोटे एवं सीमांत किसानों की आय में अस्थिरता, कृषि पर अत्यधिक निर्भरता, औद्योगिक विविधीकरण की कमी तथा बेरोजगारी जैसी समस्याएँ जिले की आर्थिक संरचना को चुनौती देती हैं। इसके अतिरिक्त संसाधनों का असमान वितरण एवं क्षेत्रीय विषमता आर्थिक संतुलन में बाधा उत्पन्न करती है।

समग्र रूप से देखा जाए तो श्रीगंगानगर जिले की आर्थिक संरचना पारंपरिक कृषि आधारित स्वरूप से विकसित एवं विविधीकृत अर्थव्यवस्था की ओर अग्रसर हुई है। नहर आधारित सिंचाई, कृषि आधुनिकीकरण एवं बाजार संपर्क ने जिले में आर्थिक विकास के नए अवसर प्रदान किए हैं, किंतु सतत एवं संतुलित विकास के लिए औद्योगिक विस्तार, संसाधन प्रबंधन एवं रोजगार सृजन की दिशा में सुनियोजित प्रयास आवश्यक हैं। यही आर्थिक संरचना एवं उसमें हुए परिवर्तन जिले के सामाजिक–आर्थिक परिदृश्य को समझने का एक महत्वपूर्ण आधार प्रस्तुत करते हैं।

सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन से उत्पन्न अवसर

श्रीगंगानगर जिला में हुए सामाजिक–आर्थिक परिवर्तनों ने जिले के समग्र विकास के लिए अनेक नए अवसर उत्पन्न किए हैं। नहर आधारित सिंचाई, कृषि आधुनिकीकरण, आधारभूत संरचना के विस्तार तथा मानव संसाधन विकास ने इस क्षेत्र को परंपरागत मरुस्थलीय अर्थव्यवस्था से उन्नत कृषि–प्रधान एवं अर्द्ध–नगरीय अर्थव्यवस्था की ओर अग्रसर किया है। इन परिवर्तनों के परिणामस्वरूप जीवन–स्तर, आय संरचना एवं सामाजिक चेतना में गुणात्मक सुधार देखने को मिला है।

सबसे महत्वपूर्ण अवसर कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि के रूप में सामने आया है। इंदिरा गांधी नहर परियोजना से जल की नियमित उपलब्धता सुनिश्चित होने के कारण बहुफसली कृषि संभव हुई है। गेहूँ, कपास, सरसों, चावल एवं चारा फसलों के उच्च उत्पादन ने न केवल खाद्य सुरक्षा को सुदृढ़ किया है, बल्कि कृषकों की आय में भी उल्लेखनीय वृद्धि की है। इससे कृषि पर आधारित सहायक गतिविधियों जैसे बीज उत्पादन, भंडारण, प्रसंस्करण एवं विपणन को भी प्रोत्साहन मिला है, जो ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सशक्त बनाता है।

सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन से रोजगार के नए अवसर भी उत्पन्न हुए हैं। कृषि के अतिरिक्त पशुपालन, दुग्ध उत्पादन, परिवहन, व्यापार एवं सेवा क्षेत्र में रोजगार के साधन विकसित हुए हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि–आधारित रोजगार उपलब्ध होने से पलायन की प्रवृत्ति में कुछ हद तक कमी आई है। वहीं नगरीय क्षेत्रों में व्यापारिक गतिविधियों एवं सेवाक्षेत्र के विस्तार ने युवाओं के लिए वैकल्पिक आजीविका के अवसर प्रदान किए हैं।

 ISBN: 978-81-993143-8-2

शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुविधाओं के विकास ने मानव संसाधन की गुणवत्ता में सुधार किया है। विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं तकनीकी शिक्षण संस्थानों की वृद्धि से साक्षरता स्तर बढ़ा है और सामाजिक चेतना विकसित हुई है। विशेष रूप से महिला शिक्षा में वृद्धि से महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक भागीदारी बढ़ी है, जिससे परिवार एवं समाज के निर्णय–निर्माण में उनकी भूमिका सशक्त हुई है। स्वास्थ्य सुविधाओं के विस्तार से जीवन प्रत्याशा में वृद्धि तथा कार्यक्षमता में सुधार हुआ है, जो दीर्घकालीन विकास के लिए एक सकारात्मक अवसर है।

नगरीकरण एवं आधारभूत संरचना के विकास ने जिले को क्षेत्रीय विकास की मुख्यधारा से जोड़ा है। सड़कों, परिवहन, विद्युत, संचार एवं बाजार सुविधाओं के विस्तार से ग्रामीण–नगरीय संपर्क सुदृढ़ हुआ है। इससे कृषि उत्पादों को व्यापक बाजार प्राप्त हुए हैं तथा स्थानीय अर्थव्यवस्था को राष्ट्रीय स्तर पर पहचान मिली है। नगरीय केंद्र अब व्यापार, शिक्षा एवं सेवाओं के महत्वपूर्ण केंद्र के रूप में विकसित हो रहे हैं।

इसके अतिरिक्त सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन ने सामाजिक समावेशन एवं जीवन–स्तर में सुधार के अवसर भी प्रदान किए हैं। सरकारी कल्याणकारी योजनाओं, सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों तथा ग्रामीण विकास योजनाओं ने समाज के कमजोर वर्गों को विकास की प्रक्रिया में सम्मिलित किया है। बेहतर आवास, स्वच्छ पेयजल, स्वच्छता एवं संचार सुविधाओं ने लोगों के दैनिक जीवन को अधिक सुरक्षित एवं सुविधाजनक बनाया है।

इस प्रकार श्रीगंगानगर जिले में सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन से उत्पन्न अवसर बहुआयामी हैं, जो कृषि विकास, रोजगार सृजन, मानव संसाधन उन्नयन, नगरीकरण एवं सामाजिक सशक्तिकरण के रूप में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होते हैं। यदि इन अवसरों का सतत एवं संतुलित उपयोग किया जाए, तो जिला न केवल क्षेत्रीय बल्कि राज्य स्तर पर भी विकास का एक सशक्त मॉडल प्रस्तुत कर सकता है।

सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन से जुड़ी चुनौतियाँ

श्रीगंगानगर जिला में सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन जहाँ विकास के नए अवसर लेकर आया है, वहीं इस परिवर्तन की प्रक्रिया ने अनेक जटिल चुनौतियों को भी जन्म दिया है। नहर आधारित विकास, तीव्र कृषि विस्तार और नगरीकरण ने जिले की अर्थव्यवस्था को गति दी है, परंतु इनके साथ उत्पन्न समस्याएँ सतत विकास के मार्ग में बाधा बनकर उभर रही हैं। इन चुनौतियों को समझना और उनका समाधान खोजना क्षेत्रीय नियोजन के लिए अत्यंत आवश्यक है।

सबसे गंभीर चुनौती जलभराव एवं मृदा लवणता की समस्या के रूप में सामने आई है। इंदिरा गांधी नहर परियोजना से निरंतर जल उपलब्धता ने जहाँ कृषि उत्पादन को बढ़ाया है, वहीं अपर्याप्त जल निकास व्यवस्था के कारण कई क्षेत्रों में जलस्तर बढ़ गया है। इससे भूमि की उर्वरता प्रभावित हुई है और कृषि योग्य भूमि धीरे–धीरे अनुपयोगी होती जा रही है। यह स्थिति दीर्घकाल में कृषि उत्पादन, किसानों की आय तथा ग्रामीण आजीविका के लिए गंभीर संकट उत्पन्न कर सकती है।

पर्यावरणीय असंतुलन भी सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन से जुड़ी एक प्रमुख चुनौती है। रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग, जल संसाधनों के अनियंत्रित दोहन तथा प्राकृतिक वनस्पति के ह्रास ने पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है। इससे मृदा, जल और मानव स्वास्थ्य से जुड़ी समस्याएँ बढ़ रही हैं, जो विकास की गुणवत्ता पर प्रश्नचिह्न लगाती हैं।

क्षेत्रीय एवं ग्रामीण–नगरीय विषमताएँ भी जिले के सामाजिक–आर्थिक परिदृश्य में स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं। जहाँ सिंचित एवं नगरीय क्षेत्रों में विकास अपेक्षाकृत तीव्र है, वहीं सीमावर्ती एवं कम संसाधनयुक्त ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत सुविधाओं का अभाव बना हुआ है। यह असमानता सामाजिक असंतोष, अवसरों की असमान उपलब्धता तथा क्षेत्रीय असंतुलन को बढ़ावा देती है।

आर्थिक दृष्टि से कृषि पर अत्यधिक निर्भरता भी एक बड़ी चुनौती है। यद्यपि कृषि ने जिले को आर्थिक पहचान प्रदान की है, परंतु औद्योगिक एवं सेवा क्षेत्र का सीमित विकास अर्थव्यवस्था को एकांगी बनाता है। इससे रोजगार के विकल्प सीमित रहते हैं और युवाओं में बेरोजगारी अथवा पलायन की प्रवृत्ति बनी रहती है। छोटे एवं सीमांत किसानों की आय में अस्थिरता भी सामाजिक–आर्थिक सुरक्षा के लिए चिंता का विषय है।

इसके अतिरिक्त जनसंख्या वृद्धि, संसाधनों पर बढ़ता दबाव तथा नगरीकरण से उत्पन्न समस्याएँ–जैसे आवास की कमी, स्वच्छता, पेयजल एवं आधारभूत सेवाओं पर भार भी जिले के समक्ष महत्वपूर्ण चुनौतियाँ प्रस्तुत करती हैं। सामाजिक संरचना में तीव्र परिवर्तन के कारण पारंपरिक सामुदायिक संबंधों में शिथिलता तथा सामाजिक समायोजन की समस्याएँ भी उभर रही हैं।

इस प्रकार श्रीगंगानगर जिले में सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन से जुड़ी चुनौतियाँ बहुआयामी हैं, जिनमें पर्यावरणीय, आर्थिक, सामाजिक एवं क्षेत्रीय समस्याएँ सम्मिलित हैं। यदि इन चुनौतियों का समाधान संतुलित नीति, प्रभावी संसाधन प्रबंधन एवं सतत विकास दृष्टिकोण के माध्यम से नहीं किया गया, तो विकास की उपलब्धियाँ दीर्घकाल में कमजोर पड़ सकती हैं। अतः इन चुनौतियों का समग्र एवं भौगोलिक दृष्टिकोण से अध्ययन अत्यंत आवश्यक है।

निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि श्रीगंगानगर जिला का सामाजिक–आर्थिक परिदृश्य भौगोलिक कारकों, नहर आधारित सिंचाई, कृषि आधुनिकीकरण तथा विकासात्मक नीतियों के संयुक्त प्रभाव से उल्लेखनीय रूप से परिवर्तित हुआ है। इंदिरा गांधी नहर परियोजना के आगमन ने इस क्षेत्र को मरुस्थलीय पिछड़ेपन से उबारकर कृषि–प्रधान एवं अर्द्ध–नगरीय विकास की दिशा में अग्रसर किया है। इसके परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन, आय स्तर, आधारभूत संरचना, शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुविधाओं में सकारात्मक सुधार दृष्टिगोचर हुआ है, जिसने जिले के समग्र सामाजिक–आर्थिक विकास को गति प्रदान की है।

 ISBN: 978-81-993143-8-2

अध्ययन यह भी दर्शाता है कि इन परिवर्तनों से जहाँ कृषि उत्पादकता में वृद्धि, रोजगार के नए अवसर, नगरीकरण तथा मानव संसाधन विकास जैसे महत्वपूर्ण अवसर उत्पन्न हुए हैं, वहीं जलभराव, मृदा लवणता, पर्यावरणीय असंतुलन, क्षेत्रीय विषमताएँ तथा कृषि पर अत्यधिक निर्भरता जैसी गंभीर चुनौतियाँ भी सामने आई हैं। सिंचित एवं नगरीय क्षेत्रों की अपेक्षाकृत तीव्र प्रगति और सीमावर्ती एवं ग्रामीण क्षेत्रों का अपेक्षाकृत पिछड़ापन, विकास की असमानता को उजागर करता है।

समग्र रूप से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि श्रीगंगानगर जिले में सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन की प्रक्रिया लाभकारी होते हुए भी संतुलित एवं सतत विकास की माँग करती है। यदि प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग, प्रभावी जल निकास व्यवस्था, औद्योगिक एवं सेवा क्षेत्र का विस्तार तथा क्षेत्रीय संतुलन को प्राथमिकता दी जाए, तो जिले में उत्पन्न अवसरों का दीर्घकालीन और समावेशी लाभ प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रकार यह अध्ययन न केवल जिले की वर्तमान सामाजिक–आर्थिक स्थिति को समझने में सहायक है, बल्कि भविष्य की विकास योजनाओं एवं नीति निर्माण के लिए भी एक महत्वपूर्ण आधार प्रदान करता है।

संदर्भ


1. चतुर्वेदी, आर. सी. (2016). मानव भूगोल के सिद्धांत. नई दिल्ली : एन.बी.टी.
2. सिंह, आर. एल. (2014). आर्थिक एवं सामाजिक भूगोल. वाराणसी : चौखंबा प्रकाशन।
3. शर्मा, ए. के. (2018). भारतीय कृषि भूगोल. जयपुर : राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी।
4. तिवारी, डी. पी. (2015). ग्रामीण विकास एवं क्षेत्रीय नियोजन. नई दिल्ली : रावत पब्लिकेशंस।
5. यादव, एस., एवं मीणा, के. (2020). नहर आधारित कृषि का सामाजिक–आर्थिक प्रभावः राजस्थान का अध्ययन. भारतीय भूगोल पत्रिका, 45(2), 123–138।
6. शर्मा, एम. (2019). मरुस्थलीय क्षेत्रों में सिंचाई विकास और सामाजिक परिवर्तन. भूगोल भारती, 41(1), 67–82।
7. कुमावत, आर. एल. (2021). ग्रामीण–नगरीय विषमता का भौगोलिक विश्लेषण. समकालीन सामाजिक विज्ञान, 12(3), 45–59।
8. सिंह, पी. (2018). कृषि आधुनिकीकरण और रोजगार संरचना में परिवर्तन. भारतीय सामाजिक अनुसंधान, 34(2), 91–104।

२४

# भारत में सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन : अवसर और चुनौतियाँ

**रूचिका सदेवड़ा,**
**सहायक आचार्य, भूगोल**
**चौ. बल्लूराम गोदारा राजकीय कन्या महाविद्यालय, श्रीगंगानगर**

## सार (Abstract)

भारत में सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन युगांतकारी हैं। वैश्विकरण, तकनीकी प्रगति, जनसंख्या संरचना, सरकारी नीतियाँ और सामाजिक मान्यताएँ सभी मिलकर देश के विकास की दिशा निर्धारित करती हैं। इस शोध-प्रबंध का उद्देश्य भारत के सामाजिक-आर्थिक विकास का गहन विश्लेषण, वर्तमान डेटा पर आधारित विश्लेषण, सरकारी योजनाओं का प्रभाव, अवसरों और चुनौतियों की तुलना, तथा समाधान के सुझाव प्रदान करना है तकनीकी प्रगति और डिजिटल क्रांति ने सामाजिक–आर्थिक विकास को तीव्र गति प्रदान की है। डिजिटल भुगतान, ई–गवर्नेंस, ऑनलाइन शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं ने आम जनजीवन को सरल बनाया है। भारत की युवा जनसंख्या देश के लिए एक महत्वपूर्ण अवसर है, जिसे 'जनसांख्यिकीय लाभांश' के रूप में देखा जाता है। यदि इस युवा शक्ति को उपयुक्त शिक्षा, कौशल और रोजगार उपलब्ध कराया जाए तो यह आर्थिक विकास की मजबूत आधारशिला बन सकती है।इसके साथ ही अनेक चुनौतियाँ भी सामने आई हैं। बढ़ती बेरोजगारी, आय–विषमता, क्षेत्रीय असमानता, शहरीकरण से जुड़ी समस्याएँ तथा डिजिटल विभाजन सामाजिक–आर्थिक संतुलन को प्रभावित कर रहे हैं। ग्रामीण–शहरी अंतर, शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं में असमानता तथा पर्यावरणीय समस्याएँ भी विकास के मार्ग में बाधा बन रही हैं।अतः यह आवश्यक है कि भारत में सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन को संतुलित, समावेशी और सतत विकास की दिशा में आगे बढ़ाया जाए। प्रभावी नीतियों, सामाजिक न्याय और मानव संसाधन विकास के माध्यम से ही अवसरों का पूर्ण उपयोग और चुनौतियों का समाधान संभव है।

**मुख्य शब्द–** सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन, वैश्वीकरण, तकनीकी प्रगति, जनसांख्यिकीय लाभांश, डिजिटल क्रांति, आय–विषमता, समावेशी विकास

1. **परिचय(Introduction)** भारत आज दुनिया की सबसे तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्थाओं में गिना जाता है। 1991 के बाद से आर्थिक उदारीकरण ने देश को वैश्विक प्रतिस्पर्धा में स्थापित किया है। आर्थिक वृद्धि, औद्योगिक विकास, नागरिक सुविधाएँ और तकनीकी नवाचारों ने भारतीय जनता के जीवनस्तर में उल्लेखनीय सुधार किया है। इसके बावजूद सामाजिक समस्याएँ जैसे गरीबी, बेरोज़गारी, असमानता और सामाजिक भेदभाव अभी भी प्रमुख चिंताएँ बनी हुई हैं। इस शोध में इन दोनों पहलुओं का विस्तृत अध्ययन किया गया है। हालाँकि, आर्थिक विकास के साथ–साथ सामाजिक समस्याएँ जैसे गरीबी, बेरोजगारी, सामाजिक असमानता, क्षेत्रीय विषमता और लैंगिक भेदभाव अभी भी गंभीर चुनौती बनी हुई हैं। ग्रामीण–शहरी अंतर, संगठित एवं असंगठित

 ISBN: 978-81-993143-8-2

क्षेत्र के बीच असमानता और शिक्षा–स्वास्थ्य सेवाओं की असमान उपलब्धता भारत के सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन की जटिलता को दर्शाती है।

यह शोध पत्र भारत में हुए सामाजिक–आर्थिक परिवर्तनों, उनसे उत्पन्न अवसरों तथा सामने आई चुनौतियों का समग्र विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

## 2. सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन के प्रमुख कारक

भारत में सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन एक जटिल और बहुआयामी प्रक्रिया रही है, जिसमें आर्थिक नीतियों, तकनीकी विकास, जनसंख्या संरचना तथा वैश्विक प्रभावों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। स्वतंत्रता के बाद भारत ने मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाया, परंतु 1991 के बाद हुए आर्थिक सुधारों ने देश की सामाजिक–आर्थिक संरचना को तीव्र गति से बदल दिया। इन परिवर्तनों के पीछे कई प्रमुख कारक रहे हैं, जिनमें आर्थिक उदारीकरण, तकनीकी एवं डिजिटल क्रांति तथा जनसंख्या संरचना विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

### 1. आर्थिक उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण

1991 में भारत द्वारा अपनाई गई उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण (स्च्ळ मॉडल) की नीति भारतीय अर्थव्यवस्था के इतिहास में एक महत्वपूर्ण मोड़ सिद्ध हुई। इस नीति का उद्देश्य अर्थव्यवस्था को सरकारी नियंत्रण से मुक्त कर प्रतिस्पर्धात्मक और बाजारोन्मुख बनाना था। आयात–निर्यात नीतियों में सुधार, लाइसेंस राज को समाप्त करना, कर संरचना में बदलाव तथा विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (FDI) को प्रोत्साहन देना इसके प्रमुख घटक थे।

उदारीकरण के परिणामस्वरूप भारतीय उद्योगों को अंतरराष्ट्रीय बाजारों तक पहुँच मिली। बहुराष्ट्रीय कंपनियों के आगमन से उत्पादन क्षमता, प्रबंधन कौशल और तकनीकी ज्ञान में वृद्धि हुई। निजीकरण ने सार्वजनिक क्षेत्र के एकाधिकार को कम किया और निजी क्षेत्र की भागीदारी को बढ़ावा दिया, जिससे दक्षता और उत्पादकता में सुधार हुआ।

वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने भारत को वैश्विक अर्थव्यवस्था से जोड़ा। सूचना प्रौद्योगिकी, ऑटोमोबाइल, फार्मास्यूटिकल और सेवा क्षेत्र में उल्लेखनीय विकास हुआ। इसका सकारात्मक प्रभाव GDP वृद्धि, विदेशी मुद्रा भंडार में वृद्धि, रोजगार के नए अवसर तथा मध्यम वर्ग के विस्तार के रूप में देखा गया।

हालाँकि, स्च्ळ मॉडल के कुछ नकारात्मक पहलू भी सामने आए। छोटे और कुटीर उद्योगों को बड़े कॉर्पोरेट घरानों और विदेशी कंपनियों से कड़ी प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ा। श्रम बाजार में अस्थिरता बढ़ी, ठेका प्रथा और असंगठित क्षेत्र का विस्तार हुआ। इसके अतिरिक्त, आय और क्षेत्रीय असमानता में भी वृद्धि देखी गई, जिससे सामाजिक असंतोष की स्थिति उत्पन्न हुई।

इस प्रकार स्च्ळ मॉडल ने जहाँ आर्थिक विकास को गति दी, वहीं सामाजिक असमानताओं और श्रम असुरक्षा जैसी चुनौतियाँ भी उत्पन्न कीं।

## 2. तकनीकी एवं डिजिटल क्रांति

तकनीकी प्रगति और डिजिटल क्रांति भारत के सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन का दूसरा महत्वपूर्ण कारक है। डिजिटल इंडिया अभियान, इंटरनेट विस्तार, मोबाइल टेक्नोलॉजी, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI), बिग डेटा और ई–गवर्नेंस ने शासन व्यवस्था और नागरिकों के जीवन को गहराई से प्रभावित किया है।

डिजिटल भुगतान प्रणालियाँ जैसे UPI ऑनलाइन बैंकिंग और मोबाइल वॉलेट ने वित्तीय समावेशन को बढ़ावा दिया है। ग्रामीण और दूरदराज के क्षेत्रों में भी बैंकिंग सेवाएँ सुलभ हुई हैं। ई–गवर्नेंस के माध्यम से सरकारी सेवाएँ अधिक पारदर्शी, तेज और उत्तरदायी बनी हैं।

शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी डिजिटल तकनीक ने क्रांतिकारी परिवर्तन किए हैं। ई–लर्निंग प्लेटफॉर्म, ऑनलाइन कक्षाएँ, डिजिटल लाइब्रेरी और टेलीमेडिसिन ने गुणवत्तापूर्ण सेवाओं को व्यापक जनसंख्या तक पहुँचाया है। कोविड–19 महामारी के दौरान डिजिटल तकनीक की उपयोगिता और भी स्पष्ट हुई।

इसके बावजूद, डिजिटल क्रांति के समक्ष कई चुनौतियाँ भी हैं। डिजिटल साक्षरता की कमी, इंटरनेट की असमान उपलब्धता और डिजिटल डिवाइड (Digital Divide) ने सामाजिक असमानताओं को कुछ हद तक और बढ़ाया है। शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों के बीच तकनीकी पहुँच का अंतर आज भी एक गंभीर समस्या बना हुआ है।

अतः यह कहा जा सकता है कि तकनीकी और डिजिटल क्रांति ने जहाँ सामाजिक–आर्थिक विकास को नई दिशा दी है, वहीं इसके लाभों का समान वितरण सुनिश्चित करना अभी भी एक बड़ी चुनौती है।

## 3. जनसंख्या संरचना और डेमोग्राफिक डिविडेंड

भारत की जनसंख्या संरचना सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण आधार है। वर्तमान में भारत की लगभग 65 प्रतिशत जनसंख्या कार्यशील आयु वर्ग (15–59 वर्ष) में है, जो देश को एक महत्वपूर्ण डेमोग्राफिक डिविडेंड प्रदान करती है। यह युवा जनसंख्या यदि सही दिशा में प्रशिक्षित और नियोजित की जाए, तो आर्थिक विकास की गति को तेज कर सकती है।

युवा शक्ति नवाचार, उद्यमिता और उत्पादकता का प्रमुख स्रोत होती है। कौशल विकास कार्यक्रम, स्टार्ट–अप इंडिया, मेक इन इंडिया जैसी योजनाएँ इस जनसंख्या क्षमता का उपयोग करने के प्रयास हैं। शिक्षा, तकनीकी प्रशिक्षण और रोजगार के अवसर उपलब्ध कराकर भारत वैश्विक कार्यबल में एक महत्वपूर्ण स्थान बना सकता है।

परंतु, इस डेमोग्राफिक डिविडेंड के साथ कई चुनौतियाँ भी जुड़ी हुई हैं। शिक्षा प्रणाली की गुणवत्ता में असमानता, बेरोजगारी, अल्प–रोजगार और कौशल–असंगति जैसी समस्याएँ इस अवसर को खतरे में डाल सकती हैं। यदि युवाओं को पर्याप्त रोजगार न मिले, तो यह सामाजिक असंतोष और आर्थिक दबाव का कारण बन सकता है।

 ISBN: 978-81-993143-8-2

इसलिए, जनसंख्या संरचना को विकास के अवसर में बदलने के लिए मानव संसाधन विकास, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और समावेशी रोजगार नीतियों की आवश्यकता है।

## 3. सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन के अवसर (**Opportunities**)

- **रोजगार और कौशल विकास**

  नयी सरकारी योजनाएँ जैसे कौशल भारत मिशन, MGNREGA के तहत रोजगार सृजन, MSME के लिये वित्तीय सहायता कमाई के अवसर प्रदान कर रहे हैं।

- **महिला सशक्तिकरण**

  आर्थिक योजनाओं जैसे 'शक्ति रसोई' ने महिलाओं को आत्मनिर्भर बनने का अवसर दिया है आगरा में इससे वार्षिक ₹50,000 तक आय उत्पन्न हो रही है।

- **स्थानीय उत्पाद और उद्योग विकास**

  ODOP 2.0 योजना छोटे उद्योगों को उन्नत तकनीकी और विपणन सहायता देकर रोजगार और निर्यात को बढ़ावा दे रही है।

- **सामाजिक सुरक्षा योजनाएँ**

  'संबल योजना' के तहत असंगठित श्रमिकों के परिवारों को वित्तीय सहायता मिली है, जिससे सामाजिक सुरक्षा में सुधार दिखाई देता है।

- **वैष्विक मंच पर भारत की भूमिका**

  भारत को वैश्विक मंच पर नई पहचान मिली है – जैसे BRICS नेतृत्व में भारत की भागीदारी बढ़ी है – जो देश की कूटनीति, अर्थव्यवस्था और वैश्विक नीति में प्रभाव बढ़ाती है।

## 4. सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन की प्रमुख चुनौतियाँ

- **गरीबी और बहुआयामी गरीबी**

  भारत में अब भी लगभग 234 मिलियन लोग गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रहे हैं। ऐसे क्षेत्रों में शिक्षा, स्वास्थ्य और बुनियादी सुविधाओं की कमी गरीबी को गहरा बनाती है।

- **बेरोज़गारी और कमजोर रोजगार**

  युवाओं में बेरोज़गारी एक बड़ी समस्या है – खास करके उच्च शिक्षा प्राप्त युवाओं में बेरोज़गारी दर अधिक है। इस समस्या का समाधान तभी संभव है जब रोजगार सृजन और कौशल विकास योजनाओं पर अधिक प्रभावी कार्य किया जाए।

- **असमानता**

भारत में आय और धन की असमानता गंभीर समस्या है। एक छोटी आबादी के पास अत्यधिक संपत्ति है जबकि अधिकांश गरीब वर्ग आज भी सीमित संसाधनों के साथ जीवन यापन कर रहा है।

- **ग्रामीण-शहरी विभाजन**

  शहरी क्षेत्रों में नौकरी और सुविधाएँ बहुतायत में उपलब्ध हैं, परन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि आधारित अर्थव्यवस्था में विकास की धीमी रफ्तार तथा तकनीकी पहुँच की कमी समस्याएँ बनकर उभरी हैं।

- **सामाजिक भेदभाव और सामाजिक समावेशन**

  जाति, धर्म, लिंग और सामाजिक स्तर के आधार पर भेदभाव आज भी मौजूद है, जो लोगों को मुख्यधारा में पूर्ण रूप से शामिल होने से रोकता है। सामाजिक समावेशन सुनिश्चित करना आज की बड़ी चुनौतियों में से एक है।

## 5. वर्तमान नीति और सरकारी पहल (Government Initiatives)

- **समावेशी विकास के लिए राष्ट्रीय नीतियाँ**

  सरकार समावेशी आर्थिक विकास को सुनिश्चित करने के लिये उपाय कर रही है, जैसे शिक्षा, आरोग्य, सामाजिक सुरक्षा, डिजिटल पहुँच आदि।

- **पर्यावरण और सतत विकास रणनीतियाँ**

  जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को देखते हुए सौर ऊर्जा, स्वच्छ ऊर्जा परियोजनाएँ और हरित तकनीक अपनाई जा रही हैं।

## 6. विस्तृत केस स्टडीज (Case Studies)

### Case 1:महिला स्वरोजगार और आर्थिक सशक्तिकरण

'शक्ति रसोई' जैसे कार्यक्रम महिलाओं को व्यवसायिक कौशल और स्वरोजगार के अवसर प्रदान कर रहे हैं, जो व्यक्तिगत और सामुदायिक विकास में सहायक हैं।

### Case 2: ODOP2.0 योजना का प्रभाव

ODOP 2.0 ग्रामीण और कस्बाई व्यवसायों को तकनीकी विकास और विपणन सहायता प्रदान कर आर्थिक स्थिति में सुधार कर रहा है।

### Case 3:सामाजिक सुरक्षा योजनाएँ (संबल)

संबल योजना के अंतर्गत श्रमिक परिवारों को प्रत्यक्ष वित्तीय सहायता मिल रही है, जिससे सामाजिक सुरक्षा में वृद्धि हुई है।

## 7. विश्लेषण (Analysis)

 ISBN: 978-81-993143-8-2

भारत का सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन जटिल और बहुआयामी है। आर्थिक वृद्धि से समाज के कई वर्गों को लाभ मिला है, लेकिन असमानता और सामाजिक भेदभाव जैसी समस्याएँ अभी भी मौजूद हैं। डेटा स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि गरीबी में कुछ कमी आई है, परंतु सामाजिक समावेशन और रोजगार सृजन अभी भी मुख्य चुनौतियाँ बनी हुई हैं।

## 8. समाधान और सुझाव (Solution and Suggestions)

- शिक्षा और कौशल विकास सौर ऊर्जा, डिजिटल तकनीकों और व्यावसायिक शिक्षा को बढ़ावा देना आवश्यक है।
- रोजगार एवं उद्यमिता MSME, स्टार्टअप्स, कृषि और सेवा क्षेत्रों में निवेश से रोजगार सृजन बढ़ाना होगा।
- सामाजिक समावेशन नीतियाँ

  लिंग समानता, दलित-आदिवासी समुदायों का समावेशन और सामाजिक सुरक्षा योजनाएँ मजबूत करनी चाहिए।

- डिजिटल पहुँच और ग्रामीण विकास

  ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल तकनीक पहुँचाकर रोजगार व सामाजिक सेवाओं तक समानता सुनिश्चित करनी चाहिए।

## 9. निष्कर्ष (Conclusion)

भारत में सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन सकारात्मक हैं, लेकिन अनेक चुनौतियाँ अभी भी हैं। यदि सरकार, समाज और नीति-निर्माता मिलकर सभी वर्गों के लिये समावेशी नीतियाँ लागू करें, तो भारत एक समृद्ध और सशक्त राष्ट्र बन सकता है।

## संदर्भ (Reference)


- योजना आयोग (भारत सरकार) (2014)- भारत में सामाजिक–आर्थिक विकास- नई दिल्ली: योजना आयोग।
- नीति आयोग (2022). भारत ⁄75: सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन- नई दिल्ली
- भारत सरकार (2023). आर्थिक सर्वेक्षण. वित्त मंत्रालय, नई दिल्ली।
- शर्मा, आर. के. (2019). भारतीय समाजरू संरचना एवं परिवर्तन- नई दिल्ली: राज पब्लिकेशन।
- सिंह, योगेंद्र(2018). आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन- नई दिल्लीः रावत पब्लिकेशन्स।
- दत्त, रूद्र एवं सुन्दरम, के. पी. एम. (2020). भारतीय अर्थव्यवस्था- नई दिल्ली: एस. चंद एंड कंपनी।

- Khinchi, S. S., & Tanwar, M. (Eds.). (2017). Environmental Challenges, Biodiversity and Sustainable Development. New Delhi, VL Media Solutions.
- Khinchi, Shyam S. and Tanwar, Meenu, Global Food Security and Biodiversity (March 20, 2018). Available at SSRN: https://ssrn.com/abstract=5070602 or http://dx.doi.org/10.2139/ssrn.5070602
- Khinchi, Shyam S., Issues in Agriculture and Development (February 10, 2020). Available at SSRN: https://ssrn.com/abstract=5063911 or http://dx.doi.org/10.2139/ssrn.5063911
- Khinchi SS, Kumar A. (2024) Study on the Agricultural Landscape of Possible Opportunities and Imbalances for the Advancement of Agriculture in the Jhunjhunu District of Rajasthan, India. Indian Journal of Science and Technology. 17(47):4966-4974. DOI: 10.17485/IJST/v17i47.3531
- Tanwar, M., & Khinchi, S. S. (2015). Impact of Climate on Agricultural Environment of. VL Media Solutions, New Delhi-110059, India.
- Khinchi, S. S., & Tanwar, M. Globalization Impact on Environment and Proposal for Solution. *Review of Research Journal*, *3*(1).
- Khinchi, S.S., Kumar, A. (2024) Study on the Agricultural Landscape of Possible Opportunities and Imbalances for the Advancement of Agriculture in the Jhunjhunu District of Rajasthan, India. Indian Journal of Science and Technology 17(47): 4966-4974. https://doi.org/ 10.17485/IJST/v17i47.3531
- Khinchi, Shyam S., The Municipal Solid-Waste Management (January 10, 2023). https://www.iesrj.com/special-issue-detail?cid=6, Available at http://dx.doi.org/10.2139/ssrn.5385519
- Khinchi, Shyam S., Human Rights: A Contemporary Discussion (March 10, 0019). Rigi Publication 777, Street no.9, Krishna Nagar Khanna-141401 (Punjab), India ISBN: 978-93-88393-43-0 (Paperback) ISBN: 978-93-88393-44-7 (eBook), http://dx.doi.org/10.2139/ssrn.5070744
- Khinchi, S. S.(2014). Environmental Degradation and It's Effects on Human Health. Asian Resonance,Vol-3,Issue2

 ISBN: 978-81-993143-8-2

२५

# आधुनिक भारत में सामाजिक–आर्थिक विकासः उपलब्धियाँ और बाधाएँ

जसवन्त, सहायक आचार्य,भूगोल

चौ. बल्लूराम गोदारा राजकीय कन्या महाविद्यालय, श्रीगगांनगर

**सार (Abstract)**

भारत में सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन एक दीर्घकालिक, सतत तथा बहुआयामी प्रक्रिया है, जिसने देश की सामाजिक संरचना, आर्थिक व्यवस्था, सांस्कृतिक मूल्यों और जीवन–शैली को गहराई से प्रभावित किया है। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत ने नियोजित विकास का मार्ग अपनाया, जिसके अंतर्गत पंचवर्षीय योजनाएँ, सार्वजनिक क्षेत्र का विस्तार तथा सामाजिक न्याय आधारित नीतियाँ लागू की गईं। 1991 के बाद उदारीकरण, निजीकरण एवं वैश्वीकरण की नीतियों ने भारतीय अर्थव्यवस्था को वैश्विक बाजार से जोड़ा और विकास की गति को तीव्र किया। इन परिवर्तनों के परिणामस्वरूप शिक्षा, स्वास्थ्य, सूचना–प्रौद्योगिकी, औद्योगीकरण, शहरीकरण तथा महिला सशक्तिकरण के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। साथ ही, डिजिटल क्रांति और स्टार्ट–अप संस्कृति ने युवाओं के लिए नए अवसर सृजित किए हैं। किंतु दूसरी ओर, बढ़ती आर्थिक असमानता, बेरोजगारी, ग्रामीण–शहरी विभाजन, सामाजिक विषमता, पर्यावरणीय संकट तथा सांस्कृतिक विघटन जैसी चुनौतियाँ भी उभरकर सामने आई हैं।यह शोध–पत्र भारत में सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन के स्वरूप, कारणों, प्रभावों, अवसरों एवं चुनौतियों का समग्र विश्लेषण प्रस्तुत करता है तथा संतुलित एवं समावेशी विकास हेतु सुझाव देता है।

**मुख्य शब्द** –सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन, वैश्वीकरण, उदारीकरण, आर्थिक विकास विषमता,

## 1. परिचय

भारत विश्व की प्राचीनतम सभ्यताओं में से एक है, जहाँ सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन सदैव ऐतिहासिक परिस्थितियों, सांस्कृतिक मूल्यों तथा राजनीतिक प्रक्रियाओं से प्रभावित होते रहे हैं। सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन से तात्पर्य समाज की सामाजिक संरचना, आर्थिक गतिविधियों, जीवन–स्तर, मूल्यों, संस्थाओं एवं संबंधों में होने वाले परिवर्तन से है।स्वतंत्रता के पश्चात् भारत के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती आर्थिक पिछड़ेपन, गरीबी, अशिक्षा और सामाजिक असमानता को समाप्त करना था। इसी उद्देश्य से योजनाबद्ध विकास को अपनाया गया। समय के साथ–साथ औद्योगीकरण, शहरीकरण, शिक्षा के विस्तार तथा तकनीकी प्रगति ने सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन को गति प्रदान की।वर्तमान समय में भारत एक उभरती हुई अर्थव्यवस्था के रूप में वैश्विक मंच पर अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहा है। ऐसे में यह आवश्यक हो जाता है कि सामाजिक–आर्थिक परिवर्तनों के सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों पक्षों का वैज्ञानिक विश्लेषण किया जाए।

## 2. सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन की अवधारणा

सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन एक संयुक्त अवधारणा है, जिसमें सामाजिक परिवर्तन और आर्थिक परिवर्तन दोनों सम्मिलित हैं। सामाजिक परिवर्तन समाज की संरचना, संस्थाओं, मान्यताओं, परंपराओं तथा संबंधों में होने वाले परिवर्तनों को दर्शाता है, जबकि आर्थिक परिवर्तन उत्पादन, वितरण, उपभोग, रोजगार एवं आय संरचना में होने वाले बदलाव को इंगित करता है।भारत में यह परिवर्तन शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवार व्यवस्था, जाति प्रणाली, महिला स्थिति, रोजगार के स्वरूप और उपभोक्ता व्यवहार में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

## 3. भारत में सामाजिक परिवर्तन के प्रमुख आयाम

### 3.1 शिक्षा का प्रसार

शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का सबसे सशक्त माध्यम है। भारत में साक्षरता दर में निरंतर वृद्धि हुई है। उच्च शिक्षा, तकनीकी शिक्षा एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण ने सामाजिक गतिशीलता को बढ़ाया है। डिजिटल शिक्षा और ऑनलाइन लर्निंग ने शिक्षा को अधिक सुलभ बनाया है।

### 3.2 महिला सशक्तिकरण

महिलाओं की सामाजिक स्थिति में उल्लेखनीय सुधार हुआ है। शिक्षा, रोजगार, राजनीति और निर्णय–निर्माण में महिलाओं की भागीदारी बढ़ी है। महिला–केंद्रित योजनाओं ने लैंगिक समानता को प्रोत्साहन दिया है।

### 3.3 शहरीकरण एवं जीवन–शैली परिवर्तन

तेजी से हो रहे शहरीकरण ने पारंपरिक ग्रामीण समाज को आधुनिक शहरी समाज में परिवर्तित किया है। संयुक्त परिवार प्रणाली के स्थान पर एकल परिवारों का प्रचलन बढ़ा है।

## 4. भारत में आर्थिक परिवर्तन की प्रवृत्तियाँ

### 4.1 उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण

1991 के आर्थिक सुधारों के बाद भारतीय अर्थव्यवस्था में संरचनात्मक परिवर्तन हुए। विदेशी निवेश, निजी क्षेत्र की भागीदारी और वैश्विक व्यापार में वृद्धि हुई।

### 4.2 सेवा क्षेत्र का विस्तार

सेवा क्षेत्र भारतीय अर्थव्यवस्था का प्रमुख स्तंभ बन चुका है। सूचना–प्रौद्योगिकी, बैंकिंग, पर्यटन और शिक्षा सेवाओं ने आर्थिक विकास को गति दी है।

### 4.3 डिजिटल अर्थव्यवस्था

डिजिटल इंडिया पहल ने ई–गवर्नेंस, डिजिटल भुगतान और ऑनलाइन सेवाओं को बढ़ावा दिया है, जिससे आर्थिक गतिविधियाँ अधिक पारदर्शी और तेज हुई हैं।

## 5. सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन से उत्पन्न अवसर

 ISBN: 978-81-993143-8-2

1. रोजगार के नए अवसर
2. जीवन–स्तर में सुधार
3. वैश्विक बाजार से जुड़ाव
4. युवाओं के लिए स्टार्ट–अप एवं नवाचार
5. सामाजिक गतिशीलता एवं सशक्तिकरण

## 6. सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन की प्रमुख चुनौतियाँ

### 6.1 बेरोजगारी और गरीबी

तकनीकी विकास के बावजूद रोजगार सृजन की गति अपेक्षाकृत धीमी है।

### 6.2 आर्थिक और सामाजिक असमानता

आय और संसाधनों का असमान वितरण सामाजिक असंतोष को जन्म देता है।

### 6.3 ग्रामीण–शहरी विभाजन

ग्रामीण क्षेत्रों में विकास की गति शहरी क्षेत्रों की तुलना में धीमी है।

### 6.4 पर्यावरणीय संकट

औद्योगीकरण और शहरीकरण के कारण पर्यावरण प्रदूषण, जल संकट और जलवायु परिवर्तन की समस्या बढ़ी है।

## 7. सरकारी नीतियाँ और योजनाएँ (विस्तृत विवेचन)

भारत में सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन को दिशा देने में सरकारी नीतियों एवं योजनाओं की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका रही है। स्वतंत्रता के पश्चात् सरकार ने समाजवादी विचारधारा से प्रेरित नियोजित विकास मॉडल को अपनाया, जिसका उद्देश्य आर्थिक विकास के साथ–साथ सामाजिक न्याय की स्थापना करना था। पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से कृषि, उद्योग, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं आधारभूत संरचना के विकास पर बल दिया गया।

### 7.1 आर्थिक सुधार और नीतिगत परिवर्तन

1991 में प्रारंभ किए गए आर्थिक सुधारों ने भारतीय अर्थव्यवस्था में ऐतिहासिक परिवर्तन किए। उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण की नीतियों के माध्यम से बाजार को प्रतिस्पर्धात्मक बनाया गया, विदेशी निवेश को प्रोत्साहन मिला और निजी क्षेत्र की भूमिका बढ़ी। इससे औद्योगिक उत्पादन, सेवा क्षेत्र और निर्यात में वृद्धि हुई, जिसने आर्थिक विकास को गति प्रदान की।

### 7.2 सामाजिक क्षेत्र से संबंधित योजनाएँ

सरकार ने सामाजिक असमानता को कम करने और मानव संसाधन विकास को सुदृढ़ करने हेतु अनेक कल्याणकारी योजनाएँ लागू कीं। शिक्षा के क्षेत्र में दृ सर्व शिक्षा अभियान, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, डिजिटल शिक्षा कार्यक्रमों ने शिक्षा की पहुँच को व्यापक बनाया। स्वास्थ्य के क्षेत्र में दृ आयुष्मान भारत योजना ने गरीब एवं वंचित वर्गों को स्वास्थ्य सुरक्षा प्रदान की। गरीबी उन्मूलन हेतु दृ मनरेगा, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम, प्रधानमंत्री आवास योजना जैसी योजनाओं ने सामाजिक सुरक्षा को मजबूती दी।

### 7.3 रोजगार और कौशल विकास योजनाएँ

भारत की युवा जनसंख्या को ध्यान में रखते हुए स्किल इंडिया मिशन, स्टार्ट–अप इंडिया और मेक इन इंडिया जैसी योजनाएँ प्रारंभ की गईं। इन योजनाओं का उद्देश्य स्वरोजगार को बढ़ावा देना, कौशल विकास करना तथा भारत को वैश्विक विनिर्माण केंद्र के रूप में विकसित करना है।

### 7.4 डिजिटल और समावेशी विकास की पहल

डिजिटल इंडिया कार्यक्रम के माध्यम से ई–गवर्नेंस, डिजिटल भुगतान, ऑनलाइन सेवाओं और पारदर्शिता को बढ़ावा मिला है। इससे न केवल प्रशासनिक दक्षता बढ़ी है, बल्कि सामाजिक–आर्थिक गतिविधियों में समावेशन भी सुनिश्चित हुआ है।

इस प्रकार, सरकारी नीतियाँ और योजनाएँ सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन को सकारात्मक दिशा देने का कार्य कर रही हैं, यद्यपि इनके प्रभावी क्रियान्वयन और समान वितरण की आवश्यकता अभी भी बनी हुई है।

## 8. समाधान एवं सुझाव (विस्तृत एवं विश्लेषणात्मक)

भारत में सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन से उत्पन्न चुनौतियों के समाधान हेतु बहुआयामी एवं दीर्घकालिक दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है। केवल आर्थिक विकास पर्याप्त नहीं है, बल्कि समावेशी एवं सतत विकास की नीति अपनाना अनिवार्य है।

### 8.1 समावेषी एवं संतुलित विकास

विकास की प्रक्रिया में समाज के सभी वर्गोंकृगरीब, महिलाएँ, अनुसूचित जाति–जनजाति एवं अल्पसंख्यकोंकृकी भागीदारी सुनिश्चित की जानी चाहिए। क्षेत्रीय असमानताओं को कम करने हेतु पिछड़े क्षेत्रों में विशेष विकास योजनाएँ लागू की जानी चाहिए।

### 8.2 शिक्षा और कौशल विकास में सुधार

गुणवत्तापूर्ण शिक्षा सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन की आधारशिला है। शिक्षा को रोजगारोन्मुख एवं कौशल–आधारित बनाया जाना चाहिए। व्यावसायिक शिक्षा, तकनीकी प्रशिक्षण और डिजिटल साक्षरता पर विशेष ध्यान दिया जाना आवश्यक है।

### 8.3 ग्रामीण विकास एवं कृषि सुधार

 ISBN: 978-81-993143-8-2

ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत सुविधाओं, कृषि उत्पादकता, सिंचाई और बाजार तक पहुँच को मजबूत किया जाना चाहिए। इससे ग्रामीण–शहरी विभाजन को कम किया जा सकता है।

### 8.4 रोजगार सृजन और औद्योगिक विकास

श्रम–प्रधान उद्योगों, सूक्ष्म–लघु–मध्यम उद्यमों (डैडम्) और स्टार्ट–अप्स को प्रोत्साहन देकर बड़े पैमाने पर रोजगार सृजन किया जा सकता है।

### 8.5 पर्यावरण संरक्षण और सतत विकास

औद्योगीकरण और शहरीकरण के साथ–साथ पर्यावरण संरक्षण को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। नवीकरणीय ऊर्जा, जल संरक्षण और प्रदूषण नियंत्रण नीतियों को सख्ती से लागू किया जाना चाहिए।

## 9. निष्कर्ष ( ब्वदबसनेपवद)

भारत में सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन एक जटिल एवं गतिशील प्रक्रिया है, जिसने देश के विकास पथ को नई दिशा प्रदान की है। शिक्षा, स्वास्थ्य, प्रौद्योगिकी, औद्योगीकरण और डिजिटल अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में हुई प्रगति ने भारत को वैश्विक मंच पर एक उभरती शक्ति के रूप में स्थापित किया है।

हालाँकि, इन उपलब्धियों के साथ–साथ बेरोजगारी, गरीबी, सामाजिक असमानता, पर्यावरणीय संकट और ग्रामीण–शहरी विभाजन जैसी समस्याएँ भी गंभीर बनी हुई हैं। यह स्पष्ट है कि यदि विकास की प्रक्रिया समावेशी और संतुलित नहीं होगी, तो सामाजिक–आर्थिक असंतुलन और अधिक गहरा सकता है।

अतः आवश्यक है कि नीति–निर्माता, शिक्षाविद् और समाज मिलकर ऐसी नीतियाँ अपनाएँ, जो आर्थिक प्रगति के साथ–साथ सामाजिक न्याय, समानता और सतत विकास को सुनिश्चित करें। तभी भारत एक समृद्ध, सशक्त और समानतामूलक समाज के रूप में विकसित हो सकेगा।

## सदर्भ


- 1.शर्मा, आर.एस. दृ भारतीय समाजरू संरचना एवं परिवर्तन, राजकमल प्रकाशन।
- 2.सिंह, के.एन. दृ भारत में सामाजिक परिवर्तन, हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय।
- 3.पाण्डेय, जी.सी. दृ आधुनिक भारत की सामाजिक समस्याएँ, शारदा पुस्तक भवन।
- 4.वर्मा, एस.पी. दृ भारतीय अर्थव्यवस्था का विकास, प्रकाशन संस्थान।
- Khinchi, S. S. (2023). Impact Of Agricultural Land Use Changes On Economic And Social Development. Journal of Namibian Studies. https://doi.org/10.3390/IJERPH20054251

- Khinchi, S. S.(2014). Environmental Degradation and It's Effects on Human Health. Asian Resonance,Vol-3,Issue2
- Khinchi, S. S., & Tanwar, M. (2016). Environmental aspects of biodiversity. Jaipur, Oxford Book Company.
- Khinchi, S. S., & Tanwar, M. (Eds.). (2017). Environmental Challenges, Biodiversity and Sustainable Development. New Delhi, VL Media Solutions.
- Khinchi, S. S., & Tanwar, M. (Eds.). (2017). Environmental Challenges, Biodiversity and Sustainable Development. New Delhi, VL Media Solutions.
- Khinchi, S. S., & Tanwar, M. Globalization Impact on Environment and Proposal for Solution. Review of Research Journal, 3(1).
- Khinchi, Shyam S. and Tanwar, Meenu, Global Food Security and Biodiversity (March 20, 2018). Available at SSRN: https://ssrn.com/abstract=5070602 or http://dx.doi.org/10.2139/ssrn.5070602
- Khinchi, Shyam S. and Tanwar, Meenu. Global Climate Change and Biodiversity (February 20, 2015). VL Media Solutions, New Delhi (INDIA) ISBN: 978-93-85068-73-7, Available at http://dx.doi.org/10.2139/ssrn.5070734
- Khinchi, Shyam S., Human Rights: A Contemporary Discussion (March 10, 0019). Rigi Publication 777, Street no.9, Krishna Nagar Khanna-141401 (Punjab), India ISBN: 978-93-88393-43-0 (Paperback) ISBN: 978-93-88393-44-7 (eBook), http://dx.doi.org/10.2139/ssrn.5070744
- Khinchi, Shyam S., Impact of Climate on Agricultural Environment of North-East India: Problems and Prospects (January 21, 2015). Global Climate Change and Biodiversity Editor Shyam S. Khinchi & Meenu Tanwar, Publisher: VL Media Solutions, New Delhi-110059, India, http://dx.doi.org/10.2139/ssrn.5028496
- Khinchi, Shyam S., Issues in Agriculture and Development (February 10, 2020). Available at SSRN: https://ssrn.com/abstract=5063911 or http://dx.doi.org/10.2139/ssrn.5063911


 **ISBN: 978-81-993143-8-2**